श्रीः ।

सुंदरविलास

सटिप्पण ।

जिसमें

ज्ञानसमुद्र, ज्ञानविलास, अष्टकादि समग्र

सुंदरदासकृत काव्यका वर्णन है ।

जो

पं० कृष्णविहारी शुक्ल तथा पं० शिवदुलारे बाजपेयी

द्वारा परिशोधित होकर

द्वितीय बार

खेमराज श्रीकृष्णदासने

निज "श्रीवेङ्कटेश्वर" छापाखानामें

छापकर प्रकट किया ।

बम्बई ।

चैत्र संवत् १९५१ शके १८१६

विषयाः पृष्ठांकाः

ज्ञानसमुद्र ॥

प्रथमोल्लास ।

विषयाः	पृष्ठांकाः

द्वितीयोल्लास ।

तृतीयोल्लास ।

चतुर्थोल्लास ।

वाल्मीकीयरामायण (ब्रजभाषाटीका सहित) और भाषावार्तिक।
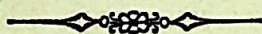
श्रीवाल्मीकीय रामायण २४००० ग्रंथका सरल सुबोध ब्रज भाषाटीका बनवायाहै जिसके बीचमें मूल और नीचे ऊपर भाषा-टीका है. और एक वाल्मीकीय रामायणका भाषा वार्तिक ऐसे दोनों तरहके छापके तैयारहैं. जिसमें मूलके अनुसार यथावत् भाषाटीका करके मूल श्लोकोंके अंकभी लगादियेगयेहैं रामायणकी कथा पढनेवालोंको पुराण वांचनेंमें बहुत उपयोगी होगा. जिन महा-शयों को लेनें हो वे २५ रु० भेज देनेसें भाषाटीका सहित इस पुस्तकको अपने स्थानपर पासकेंगे और भाषावार्तिकको १० रु० भेजनेसे पासकेंगे. पश्चात् मूल्य बढाया जायगा. और डाकमह-सूलभी अलग पडेगा. इस वास्ते महाशयहो इस अलभ्यलाभकी शीघ्रता करिये.

पुस्तक मिलनेका ठिकाना-
खेमराज श्रीकृष्णदास
श्रीवेंकटेश्वर छापाखाना-मुम्बई.

प्रस्तावना.

प्राचीन समयमें श्रीमान् कविवर सुन्दर दासजी हुये, और इनके रचित ग्रन्थोंसे ज्ञात होता है कि उक्त कविराज फारसी भाषा भी भली भांति जानतेथे, इनके जितने निर्मित ग्रंथ पाये जाते हैं, वे सब वेदान्त मार्गके हैं, धन्य है , वेदान्त ऐसे कठिन विषयको ऐसी सरलता और काव्यकी मृदुलतासे वर्णन कियाहै, कि जिसके क्षणमात्रके पठन पाठनसे विषयाशक्त मनुष्योंके चित्तमें भी वेदान्त रूपी सूर्य की दीप्ति चमकने लगती है, उक्त कविने प्रत्येक प्रसंगोंमें ऐसे रोचक मनभावन छन्द रचना किये हैं जो पढ़नेवालोंके चित्तको भक्तिपक्षमें चुम्बककी समान कर्षित करते हैं, परन्तु अबतक केवल "सुंदरविलासही" मुद्रित हुवाथा, उसमें अनूपमकाव्य गुणदेख पाठकोंकी रुचि इनके अन्य ग्रंथोंके अवलोकन करनेको उत्साहित होतीथी, इस कारण हमने बहुत परिश्रमसे, ज्ञानविलास, ज्ञानसमुद्र भक्तिके उत्पन्न करनेवाली गुरुमहिमाष्टकादि त्रयोदश अष्टकें एकत्रितकर सर्व मुमुक्षु जनोंके चित्त मनोरंजनार्थ अत्यंत शुद्धतापूर्वक कठिन२ शब्दों की टिप्पणी बनवाय मुद्रित किया है, यद्यपि ऊपरके अलंकारोंके एकत्रित करनेसे पुस्तक बढ़गई है तथापि सर्व साधारण मनुष्यों की सुगमताके लिये मूल्य अत्यन्तही न्यून रक्खा है ॥

आपका

खेमराज श्रीकृष्णदास.

"श्रीवेंकटेश्वर" छापाखाना मुंबई.

अथ

सुन्दर विलासादिकी

अनुक्रमणिका।

श्रीसुंदराष्टकानि ।

इति ॥

ॐ श्रीपरमात्मने नमः ।

श्री सुंदरविलास प्रारंभः ।

अथ श्रीगुरुदेवको अंग १

इंदव छंद ॥

मौज करी गुरुदेव दया करि, शब्द सुनाय कह्यो हरि नेरो ॥
ज्यों रविके[1] प्रगटे निशि[2] जात सु, दूरि कियो भ्रम भानु अँधेरो ॥
कयिक वाचक मानसहू करि, है गुरुदेवहि वंदन[3] मेरो ॥
सुंदरदास कहै कर जोरि जु, दादू दयालुको हूं नित चेरो ॥ १ ॥
पूरण ब्रह्म विचार निरंतर, काम न क्रोध न लोभ न मोहै ॥
श्रोत्र[4] त्वचा[5] रसना[6] अरु घ्राण सु, देखि कछू कहुँ नैन[7] न मोहै ॥
ज्ञानस्वरूप अनूप निरूपण, जासु गिरा[8] सुनि मोहन मोहै ॥
सुंदरदास कहै कर जोरि जु, दादू दयालहि मोर नमो है ॥ २ ॥
धीरजवंत अडिग्ग जितेन्द्रिय, निर्मलज्ञान गह्यो दृढ़ आदू ॥
शील सँतोष क्षमा जिनके घट, लागि रह्यो सु अनाहद नादू ॥
वेष न पक्ष निरंतर लक्ष जु, और कछू नहिं वाद विवादू ॥
ये सब लक्षण हैं जिन माहिं सु, सुंदरके उर हैं गुरु दादू ॥ ३ ॥
भवजलमें बहिजात हुते जिन, काढ़ि लियो अपनो करि आदू ॥
और सँदेह मिटाय दिये सब, कानन[9] टेर सुनायके नादू[10] ॥
पूरणब्रह्म प्रकाश कियो पुनि, छूटि गयो सब वाद विवादू ॥
ऐसि कृपा जु करी हम ऊपर, सुंदरके उर हैं गुरु दादू ॥ ४ ॥

---

१ सूर्य्यनारायण । २ रात । ३ नमस्कार-दण्डवत । ४ कान । ५ खाल । ६ जिह्वा । ७ आंखें । ८ वाणी । ९ वन-श्रवण । १० शब्द ।

कोउक गोरखको गुरु थापत, कोउक दत्त दिगंवर[1] आदू ॥
कोउक कंथर कोउक भर्थर, कोउ कबीर कि राखत नादू ॥
कोउ कहै हरदास हमार जु, यूं करि ठानत वाद विवादू ॥
और तु संत सबै शिर ऊपर, सुंदरके उर[2] है गुरु दादू ॥ ५ ॥
कोउ विभूति जटा नख धारि, कहै यह वेष हमारहि आदू ॥
कोउक कान फराय फिरै पुनि, कोउक शृंगि बजावत नादू ॥
कोउक केश लुचाइ करै ब्रत, कोउक जंगमके शिववादू ॥
यों सब भूलि परें जितही तित, सुंदरके उर हैं गुरु दादू ॥ ६ ॥
योगि कहैं गुरु जैन कहैं गुरु, बौद्ध कहैं गुरु जंगम मानै ॥
भक्त कहैं गुरु न्यासि[3] कहैं वन-वासि कहैं गुरु और बखानै ॥
शेख कहैं गुरु सूंफि कहैं गुरु, या हित सुंदर होत हिरानै ॥
वाहु कहैं गुरु वाहु कहैं गुरु, है गुरु सोइ सबै भ्रम भानै ॥ ७ ॥
सो गुरुदेव लिपै न छिपै कछु, सत्त्व रजो तम ताप निवारी ॥
इंद्रिय देह मृषा[5] करि जानत, शीतलता समता[6] उर धारी ॥
व्यापक ब्रह्म विचार अखंडित, द्वैत उपाधि सबै जिन टारी ॥
शब्द सुनाय सँदेह मिटावत, सुंदर वा गुरुकी बलिहारी ॥ ८ ॥
पूरणब्रह्म बताय दियो जिन, एक अखंडित व्यापक सारे ॥
राग रु द्वेष करैं अब कौनसुं, जो अहि मूल वही सब डारे ॥
संशय शोक मिट्यो मनको सब, तँत्त्व विचार कह्यो निरधारे ॥
सुंदर शुद्ध कियो मल[8] धोइ जु, है गुरुको उर ध्यान हमारे ॥ ९ ॥
ज्यों कपड़ा दरजी गहि ब्योंतत, काष्ठहिको बढ़ई कसियानै ॥
कंचनको जु सुनार कसै पुनि, लोहको घाट लुहारहि जानै ॥
पाहनको कसि लेत शिलावट, पात्र कुम्हारके हाथ निपानै ॥
तैसहि शिष्य कसै गुरुदेव जु, सुंदरदास तबै मन मानै ॥ १० ॥

---

१ नग्न । २ हृदय । ३ उदासी । ४ मुल्ला । ५ झूठा । ६ बराबरी । ७ आत्मज्ञानका विचार करना । ८ मैल ।

॥ मनहर छंद ॥

शत्रुहू न मित्र कोउ, जाके सब हैं समान;
देहको ममत्व छांड़ि, आतमाही राम हैं ॥
औरहू उपाधि जाके, कवहूँ न देखियत;
सुखके समुद्रमें रहत, आठों याम[1] हैं ॥
ऋद्धि[2] अरु सिद्धिँ[3] जाके, हाथ जोरि आगे खरीं;
सुंदर कहत ताके, सबही गुलाम हैं ॥
अधिक प्रशंसा हम, कैसे करि कहि सकैं;
ऐसे गुरुदेवको हमारे, जु प्रणाम हैं ॥ ११ ॥
ज्ञानको प्रकाश जाके, अंधकार भयो नाश;
देहअभिमान जिन, तज्यो जानि क्षारधी॥
सोइ सुखसागर, उजागर वैराग रजु;
जाके वैन सुनत, बिलात है विकारधी ॥
अगम[4] अगाध[5] अति, कोऊनहिं जानै गति;
आतमाको अनुभव, अधिक अपारधी ॥
ऐसे गुरुदेव वंदनीक, तिहूँ लोक माहिं;
सुंदर विराजमान, शोभत उदारधी॥ १२॥
काहुसों न रोष[6] तोष[7], काहुसों न राग द्वेष;
काहुसों न वैरभाव, काहुसों न घात है ॥
काहुसों न वकवाद, काहुसों नहीं विषाद;
काहुसों न संग न तौ, काहु पक्षपात है ॥
काहुसों न दुष्टवैन, काहुसों न लेन देन;
ब्रह्मको विचार कछु, और न सुहात है ॥

---

१ पहर । २ विभूति । ९ प्रकारकी । ३ अणिमा, गारिमादि अष्टप्रकार ।
४ जिसका मार्ग कठिन । ५ जिसकी थाह नहीं । ६ क्रोध । ७ प्रसन्नता ।

सुंदर कहत सोई, ईशनको महाईश;
सोई गुरुदेव जाके, दूसरी न .बात है ॥ १३ ॥
लोहकूं ज्यूं पारस, पषानहू पलटि लेत;
कंचन[1] छुवत होत, जगमें प्रमानिये ॥
द्रुमकूं[2] ज्यूं चंदन, पलटही लगाय बास;
आपके समान ताकूं, शीतलता आनिये ॥
कीटकूं ज्यूं भृंगिहू, पलटिके करत भृंगि ॥
सोउ उड़ि जाइ ताको, अचरज मानिये ॥
सुंदर कहत यह, सगरे प्रसिद्ध बात;
सद्यः[3] शिष्य पलटै सो, सदगुरु जानिये ॥ १४ ॥
गुरु बिन ज्ञान नाहिं, गुरु बिन ध्यान नाहिं;
गुरु बिन आतमविचार, न लहतु है ॥
गुरु बिन प्रेम नहिं, गुरु बिन नेम नाहिं;
गुरु बिन शीलहु, सँतोष न गहतु है;
गुरु बिन प्यास नहिं बुद्धिको प्रकाश नहिं;
भ्रमहूको नाश नाहिं, संशय रहतु है;
गुरु बिन बाँट[4] नाहिं, कौड़ी बिन हाट नहिं;
सुंदर प्रगट लोक, वेद यों कहतु है ॥ १५ ॥
पढ़िके न बैठो पास, अक्षर न बांचि सकै;
बिनहीं पढ़ेते कैसे, आवत है फारसी ॥
जौंहरीके मिले बिन, परखि न जानै कोई;
हाथ नग लिये रहै, संशय न टारसी ॥
वैदहु न मिल्यो कोउ, बूटीको बताइ देत;
भेद बिनुपाय वाके. औषध है क्षारसी ॥

---

१ सोना। २ वृक्ष। ३ शीघ्र। ४ मोक्ष का मार्ग।

संदर कहत मुख, रंचहु न देख्यो जाइ;
गुरु बिन ज्ञान जैसे, अँधेरेमें आरसी ॥ १६ ॥
गुरुके प्रसादं बुद्धि, उत्तमदशाको गहै;
गुरुके प्रसाद, भवदुःख[1] बिसराइये ॥
गुरुके प्रसाद प्रेम, प्रीतिहु अधिक बाढ़ै;
गुरुके प्रसाद राम, नाम गुण गाइये ॥
गुरुके प्रसाद सब, योगकी युगति जानै;
गुरुके प्रसाद शून्य[2]में, समाधि[3] लाइ ये ॥
सुंदर कहत गुरुदेव, जू कृपालु होइ ॥
तिनके प्रसादें तत्त्वज्ञान[6], पुनि पाइये ॥ १७ ॥
डूबत भवसागरमें, आइके बँधावै धीर ॥
पारहु लगाइ देत, नावकूं ज्यूं खेव सो ॥
परउपकारी सब, जीवनके सारे काज;
कबहुँ न आवै जाके, गुणानिको छेव सो;
बचन सुनाइ भय, भ्रम सब दूरि करैं ॥
सुंदर दिखाइ देत, अलखँ अभेव सो ॥
औरहु सनेही हम, नीके करि शोधि देखे;
जगमें न कोउ, हितकारी गुरुदेव सो॥ १८ ॥
गुरु मात गुरु तात, गुरु बंधु निज गात;
गुरुदेव नखे शिख , सकल सँवारचो है ॥
गुरु दिये दिव्यनैन, गुरु दिये मुख तैन;
गुरुदेव श्रवण दे, शबद उचारचो है ॥
गुरु दिये हाथ पाँव, गुरु दिये शीशभाव;

---

१ संसारिक दुःख । २ एकान्त । ३ ध्यान करना । ४ दयालु । ५ कृपा। ६ ब्रह्मज्ञान । ७ अदृश्य । ८ जांचा । ९ शिरसेपांवतक। १०अद्भुत दृष्टि ।

गुरुदेव पिंड माहिं, प्राण आइ डारचो है ॥
सुंदर कहत गुरुदेव, जू कृपालु होइ ॥
फेरि घाट घड़ि करि, मोहि निसतारेंचो है॥ १९ ॥
कोउ देत पुत्र धन, कोउ देत बल घनें;
कोउ देत राजसाज, देव ऋषि मुन्यो है ॥
कोउ देत यश मानें, कोउ देत रस आन;
कोउ देत विद्याज्ञान, जगतमें गुन्यो है ॥
कोउ देत ऋद्धि ऋद्धि, कोउ देत नवनिद्धि;
कोउ देत और कछु, ताते शीश धुन्यो है;
सुंदर कहत एक, दियो जिन राम नाम ॥
गुरुसे! उदारें कोउ, देख्योहै न सुन्यो है ॥ २० ॥
भूमिहुकी रेणुकी तो, संख्या कोउ कहत है;
भारहू अठारद्रुम, तिनके जु पात हैं ॥
मेघनिकी संख्या सोउ, ऋषिने कही विचारि;
बुंदनकी संख्या तेऊ, आइके विलातं हैं ॥
तारनकी संख्या सो तो, कही है पुराणमांहिं;
रोमनकी संख्या पुनि, कितनेक गातं हैं ॥
सुंदर जहांलौं जंतं, तिनहींको आवे अंत;
गुरुके अनंत गुण, कापै कहे जात हैं ॥२१॥
गोविंदके किये जीव, जात हैं रसातलको;
गुरु उपदेशै सो तो, छूटै यमफंदतें ॥
गोविंदके किये जीव, वश परे कमर्नके;
गुरुके निवारे सूं, फिरत हैं स्वछंदतें ॥

---

१ पार करना, । मुक्ति । २ अधिक । ३ प्रतिष्ठा । ४ दानी, महात्मा । ५ धूलि । ६ गिनती । ७ वृक्ष । ८ नष्ट होना । ९ में । १० शरीर ।११ जीवधारी । १२ स्वाधीन ।

गोविंदके किये जीव, डूबत भवसागरमें;
सुंदर कहत गुरु, काढै दुःखद्वंद्वते ॥
औरहू कहांलौं कछु, मुखते कहूं बनाय;
गुरुकी तौ महिमा, अधिक है गोविंदते॥२२॥
चिंतामणि पारस, कल्पतरु कामधेनु;
औरहु अनेकानिधि, वारि वारि नाखिये ॥
जोई कछु देखिये सो, सकल विनाशवंत;
बुद्धिमें विचार करि, बहु अभिलाषिये ॥
ताते मन वचन करम, करि कर जोरि;
सुंदर चरण शीश, मेली दीन भाषिये ॥
बहुतप्रकार तीनोलोक, सब शोधे हम;
ऐसी कौन भेंट गुरुदेव, आगे राखिये ॥२३॥
महादेव वामदेव, ऋषभ कपिलदेव;
व्यास शुकदेव जयदेव, नामदेव जू ॥
रामानंद सुखानंद, कहिये अनंतानंद;
सुरसुरानंदहुके, आनँद अछेव जू ॥
रैदास कबीरदास, सोझादास पीपादास;
दासहूके दासभाव, भावहूकी टेव जू ॥
सुंदर सकलसंत, प्रगट जगत माहिं;
तैसे गुरुदादू दास, लागे हरिसेव जू॥२४॥
गुरुदेव सर्वोपरि, अधिक विराजमान;
गुरुदेव सबहितें, अधिक गरिष्ठ हैं ॥
गुरुदेव दत्तात्रय, नारद शुकादि मुनि;
गुरुदेव ज्ञानघन, प्रगट वशिष्ठ हैं ॥

---

१ कष्ट, झगड़ा । २ मर्य्यादापन्न ।

गुरुदेव परम, आनंदमय देखियत;
गुरुदेव वर, वरियानहू वरिष्ठ हैं ॥
सुंदर कहत कछु, महिमा कही न जाय;
ऐसे गुरुदेव दादू, मेरे शिर इष्ट हैं ॥ २५ ॥
योगी जैन जंगम, सन्यासी वनवासी बौद्ध;
और कोउ वेष पक्ष, सब भ्रम भान्यो है ॥
तापस रु ऋषीश्वर, मुनीश्वर कवीश्वर;
सबनिको मत देखि, तत्त्व पहिंचान्यो है ॥
वेदसार तत्त्वसार, स्मृति पुराण सार;
ग्रंथनको सार सोई, हृदयमाहिं आन्यो है ॥
सुंदर कहत कछु, महिमा कही न जाय;
ऐसो गुरुदेव दादू, मेरे मन मान्यो है ॥ २६ ॥
जीते हैं जु काम क्रोध, लोभ-मोह दूरि किये;
और सब गुणनिको, मद³ जिन भान्यो है ॥
उपजै न ताप कोई, शीतलस्वभाव जाको;
सबहीमें समता सँतोष, उर आन्यो है ॥
काहूसूं न राग⁶ द्वेष⁷, देत सबहीकूं तोष;
जीवतही पायो मोष⁸, एकब्रह्म जान्यो है ॥
सुंदर कहत कछु, महिमा कही न जाय;
ऐसो गुरुदेव दादू, मेरे मन मान्यो है ॥ २७ ॥

इति श्रीगुरुदेवको अंग संपूर्ण ॥ १ ॥

अथ श्रीउपदेशचिंतामणिको अंग २

॥ हंसाल छंद ॥

तो सहि चतुर सुजान परबीण अति, परै जनि पिंजरे मोह कूवा ॥

१ श्रेष्ठतम । २ प्रिय । ३ घमंड । ४ बराबरी । ५ सब्र । ६ क्रोध । ७ डाह । ८ मोक्ष ।

पाय उत्तमजनम लाय ले चपल[1]मन, गाय गोविंद गुण जीत जूवा ॥
आपही आप अज्ञान नलिनी[2] बँध्यो, बिना प्रभु विमुख[3] कै बेर मूवा ॥
दास सुंदर कहै परमपद तौ लहै, राम हरि राम हरि बोल सूवा ॥ १ ॥
नफ्स[4] शयतान[5]कूं कैद कर आपने, क्या दुनी[6]में फिरै खाय गोता ॥
है गुनेगार भी गुनाही करत है, खायगा मार तब फिरै रोता ॥
जिन तुझे खाँक[7]सें अजब[8] पैदा किया, तू उसे क्यूं फरामोश[9] होता ॥
दाससुंदर कहै शरम तबही रहै, हक्क तू हक्क तू बोल तोता ॥ २ ॥
आब[10]की बुंदहि वजूद[11] पैदा किया, नैन मुख नाशिका[12] कर सँजूती ॥
खेल ऐसा करै ओहि लीये फिरै, जागके देख क्या करै सूती ॥
भूलि उस खसम[13]कूं काम तैं क्या किया, वेगही याद कर मर निपूती ॥
दाससुंदर कहै सरवसुख तौ लहै, भी तुहीं भी तुहीं बोल तूती ॥ ३ ॥
अवल[14] उस्तादके कदम[15]की खाक हो, हिर्स[16] बगुजार[17] सब छोड फैनाँ[18] ॥
यार दिलेदार[19] दिलमाहिं तू याद कर। है तुज्ही पास तू देख नैना ॥
जानका जान है जिंदका जिंद है। सुखनि[20]का सुखन कछु समज सैनाँ[21] ॥
दास सुंदर कहै सकलघटमें रहै। एक तू एक तू बोल मैना ॥ ४ ॥

॥ मनहर छंद ॥

कानके गयेते कहा, कान ऐसे होत मूढ़;
नैनके गयेते कहा, नैन ऐसे पाइये ॥
नाशिका गयेते कहा, नाशिका सुगंध लेत;
मुखके गयेते कहा, मुख ऐसे गाइये ॥
हाथके गयेते कहा, हाथ ऐसे काम होत;

---

१ चंचल। २ कमलिनी। ३ पराङ्मुख। ४ दिल। ५ बुरे राहोंमें लेजानेवाला। ६ संसार। ७ मिट्टी। ८ विचित्र। ९ भूलना। १० पानी। ११ देह। १२ नाक। १३ स्वामी। १४ पहले। १५ पांव। १६ डाह। १७ छोडदे। १८ व्यसन। १९ आत्मीयमित्र। २० बोलनेवाला। २१ चतुर।

पांवके गयेते ऐसे, पांव कित धाइये ॥
याहिते विचारि देख, सुंदर कहत तोहिं;
देहके गयेते ऐसी, देह कित पाइये॥ ५ ॥
बेर बेर कह्यो तोहिं, सावधान क्यूं न होइ;
ममता[1]की मोट[2] शिर, काहेकूं धरतु है ॥
मेरो धन मेरो धाम, मेरे सुत मेरी बाम[3];
मेरे पशु मेरे ग्राम[4], भूल्योही फिरतु है ॥
तू तो भयो बावरो[5], बिकाइ गई बुद्धि[6] तेरी;
ऐसो अंध कूप गेह, तामें तू परतु है ॥
सुंदर कहत तोहिं, नेकँहू[7] न आवै लाज[8];
काजकूं बिगारके, अकाज क्यूं करतु है॥ ६॥
तेरो तोकूं पेच परयो, गांठि अति घूरि[9] गई;
ब्रह्मा आइ छोरै क्यूंही, छूटत न जबहू ॥
तेलसूं भिजोइ करि, चीथरा[10] लपेटि राखै;
कूकरको पूंछ सूधो, होत नाहिं तबहू ॥
सासु देत सीख बहु, कीरीकूं गिनत जाइ;
कहत कहत दिन, बीत गयो सबहू ॥
सुंदर अज्ञानी ऐसे, छोड़ैं नाहिं अभिमान;
निकसत प्राण लग, चैते नाहिं कबहू ॥७॥
बालुमांहिं तेल नाहिं, निसकत काहूविधि;
पत्थर न भीजै बहु, बरषत घनें[11] है ॥
पानीके मँथे[12]ते कहूं, घीउ नाहिं पाइयत;
कूकँस[13]के कूटे कहूँ, निकसत कन है ॥

१ स्वत्व । २ बकुचा । ३ लुगाई । ४ गांव । ५ बावला । ६ मति । ७ तनक । ८ शरम । ९ ऐंठना । १० चिरकट । ११ बादल । १२ महेना । १३ भूसी ।

शून्यहीकी मूठी भरि, हाथ न परत कछु;
ऊषरेमें बोये कहा, निपजंत अन है ॥
उपदेश औषध सो, कौनविधि लागै ताँहि;
सुंदर असाँधरोग, भयो जाके मन है ॥ ८ ॥
वैरी घरमांहिं तेरे, जानत सनेही मेरे;
दारा सुत वित्त तेरे, खोसि खोसि खायँगे ॥
औरहू कुटुंब-लोक, लूटें चहुं ओरहीते;
मीठी मीठी बात कहि, तोसूं लपटायँगे ॥
शंकट परैगो जंब, कोई नाहिं तेरो तब;
अंतही कठिन, वाकी बेर उठि जायँगे ॥
सुंदर कहत ताते, झूंठोही प्रपंच सब;
स्वपनकी नांई यह, देखत विलायँगे ॥ ९ ॥
बालूके मंदिरमांहि, बैठि रह्यो स्थिर होइ;
राखत है जीवनकी, आश केऊ दिनकी ॥
पल पल छीजंत घटत, जात घरी घरी;
विनशंत बेर कहा, खबर ना छिनकी ॥
करत उपाय झूंठे, लेन देन खान पान;
मूसा इत उत फिरै, ताकी रही मिनकी ॥
सुंदर कहत मेरी, मेरी करि भूल्यो शठ;
चंचल चपल माया, भई किन किनकी ॥ १० ॥
श्रवण ले जाइ करि, नौंदकी ले डारै फांसी;
नैनहू ले जायकरि, रूप वश कर्‍यो है ॥

---

१ मरुभूमि । २ पैदा । ३ शिक्षा । ४ दुःसाध्यरोग । ५ लुगाई । ६ लडका । ७ सम्पत्ति । ८ बखेडा । ९ नुकसान । १० नाश । ११ शब्द ।

नाशिका ले जाइकरि, बहुत सुंघावै गंध;
रसना[1] ले जाइकरि, स्वाद मन हर्‌यो है ॥
त्वचाहू ले जाइकरि, नारिसूं परश करै;
सुंदर को इक साधु, ठगनिते डर्‌यो है ॥
काम ठग क्रोध ठग, लोभ ठग मोह ठग;
ठगनिकी नगरीमें, जीव आइ पर्‌यो है ॥११॥
पायो है मनुष्यदेह, औसर बन्यो है एह;
ऐसो देह वेरवेर, कहो कहाँ पाइये ॥
भूलत है बावरे तू, अबके सयानो होइ;
रतन अमोल सो तौ, काहेकूं ठगाइये ॥
समुझि विचार करि, ठगनिको संग त्यागि;
ठगबाजी देखि कहुँ, मन न डुलाइये ॥
सुंदर कहत ताते, सावधान क्यूं न होइ,
हरिको भजन करि, हरिमें समाइये ॥ १२ ॥
घरि घरि घटत छिजत, जात छिन छिन;
भिजतही गरी जात, माटीकेसो ढेल है ॥
मुकुतिके द्वार आइ, सावधान क्यूं न होइ;
बेर बेर चढ़त न, तियाको सो तेल है ॥
करि ले सुकृत[2] हरि, भजि ले अखंड[3] नर;
याहीमें अंतर परे, यामें ब्रह्ममेल है ॥
मानुषजनम यह, जीत भावै हार अब;
सुंदर कहत यामें, जुवाकेसो खेल है ॥ १३ ॥
यौवनको[4] गयो राज, और सब भयो साज;
आपनी दुहाई फेरि, दमामो[5] बजायो है ॥

१ जीभ। २ पुण्य। ३ अविनाशी। ४ जवानी। ५ नगारा।

लकुटी हथ्यार लिये, नैन कर डाल दिये;
श्वेत वार भये ताके, तंबूसो तनायो है ॥
दशनं गये सु मानो, दरवानं दूरि किये;
जो घरी परी सो आन, बिछानो बिछायो है ॥
शीश कर कंपत सु, सुंदर निकारचो रिपुं ॥
देखतहि देखत बुढ़ापो, दौरि आयो है ॥ १४ ॥
देहको न देह कछु, देहको ममत्व छांड़ ॥
देह तौ दमामों दिये, देह देह जात है ॥
घट तौ घटत घरि, घरि घट नाश होत ॥
घटके गयेते घटकी न, फिर बात है ॥
पिंड पिंडमाहिं पिंड, पिंडकू उपावत है;
पिंड पिंड खात पुनि, पिंडहीको पात है ॥
सुंदर न होय जासूं, सुंदर कहत जग ॥
सुंदर चेतनरूप, सुंदर विख्यात है ॥ १५ ॥

इंदव छंद ॥

ग्रीव त्वचा कटि है लटकी कच, हू पलटे अजहूं रत वामी ॥
दंत गये मुखके उखरे नखेंरे, न गये सु खरो खर कामी ॥
कंपत देह सनेहँ सु दंपति, संपति जंपत है निशि जामी ॥
सुंदर अंतहु भौन तज्यो न भज्यो, भगवंत सु लौणहरामी ॥ १६ ॥
देह घटी पगं भूमि मँडै नहिं, औ लठिया पुनि हाथ लई जू ॥
आंखिहु नाक परै मुखतें जल, शीश हलै कटि॰ ढीच नई जू ॥
ईश्वरकूं कबहूं न सँभारत, दुःख परै तब हाइ दई जू ॥
सुंदर तौहु विषयसुख वंछत, घोरे गये पै बगै११ न गई जू॥१७॥

---

१ लाठी । २ दांत ३ डेवढीदार । ४ वैरी । ५ नह ६ सच्चागधा ।
७ प्रेम । ८ नाम कहरामौ । ९ पांव । १० कमर ११ बाग घोडे की ।

सवैया छंद ॥

पाइ अमूलक[1]देह यहै नर, क्यूं न विचार करै दिल अंदर ।
कामहु क्रोधहु लोभहु मोहहु, लूटत है दशहू दिशि द्वंदर[2] ।
तू अब वंछत[3] है सुरलोकहि, कालहु पाइ परैं सु पुरंदर ।
छांड़ि कुबुद्धि[4] सुबुद्धि[5] हृदय धरि, आतमराम भजै क्युं न सुंदर ॥ १८ ॥

इंदव छंद ॥

इंद्रिनके सुख मानत है शठ[6], याहिहितें बहुते दुख पावै ॥
ज्यूं जलमें झँख मांसहि लालच, स्वाद बँध्यो जल बाहरि आवै ॥
ज्यूं कपि मूठि न छांड़त है रसना, वश बंध पर्यो बिललावै ॥
सुंदर क्यूं पहिले न सँभारत, जो गुड़ खाय सु कान बिधावै ॥ १९ ॥
कौन कुबुद्धि भई घट अंदर, तू अपने प्रभुसूं मन चोरै ॥
भूलि गयो विषयासुखमें शठ, लालच लागि रयो अतिथोरै ॥
ज्यूं कोउ कंचन[9] क्षांर[10] मिलावत, ले करि पत्थरसूं नग फोरै ॥
सुंदर या नरदेह अमूलक, तीर लगी नौका[11] कित बोरै ॥ २० ॥
देखनके नर शोभत हैं जस, आहि[12] अनूपम[13] केलि[14] कुखंभा ॥
भीतर तौ कछु सार[15] नहीं पुनि, ऊपर छीलक अंबर[16] दंभा ॥
बोलत है परि नाहिं कछू सुधि, ज्यूंहि बहारते बाजत कुंभा[17] ॥
रूसि रहै कपि[18] ज्यूं छिनमांहिं सु, या हित सुंदर होत अचंभा ॥ २१ ॥
देखनके नर दीसत हैं परि, लक्षण तौ पशुके सबही हैं ॥
बोलत चालत पीवत खात सु, वे घर वे वन जात सही हैं ॥
प्रात गये रजनी[19] फिरि आवत, सुंदर यूं नित भार वही हैं ॥
और तु लक्षण आइ मिले सब, एक कमी शिर शृंग नहीं हैं ॥ २२ ॥

---

१ अमूल्य । २ लड़ाक । ३ कामना करना । ४ कुमति । ५ सुमति । ६ दुष्ट । ७ मछली । ८ रोवें । ९ सोना । १० राख । ११ नाव । १२ है । १३ अनूठा । १४ क्रीड़ा १५ मूल १६ कपडा । १७ घड़ा । १८ बंदर १९ रात ।

प्रेत भयो कि पिशाच भयो कि, निशाचर[1] सो जितही तित डोलै॥
तू अपनी सुधि[2] भूलि गयो, मुखते कछु औरकि औरहि बोलै॥
सोइ उपाय करै जु मरै पचिं[3], बंधन तौ कबहूं नहिं खोलै॥
सुंदर जा तनुमें हरि पावत, सो तनु नाश कियो मति भोलै॥२३॥
पेटते बाहिर होतहि बालक, आइ जु मातु पयोधर[4] पीनो॥
मोह बँध्यो दिनहीं दिन और, तरूण[5] भयो तियके रस भीनो॥
पुत्र प्रपुत्र बँध्यो परिवारसु, ऐसिहि भांति गये पन[6] तीनो॥
सुंदर रामको नाम विसारि सु, आपहि आपकुं बंधन कीनो॥२४॥
मातु पिता सुत भाइ बँध्यो, युवतीके कहे कह काम करै है॥
चोरि करै बटपाँरि[7] करै क्रिरषी[8], बनजी करि पेट भरै है॥
शीत[9] सहै शिर घाम सहै कहि, सुंदर सो रणमांहिं[10] मरै है॥
बांधि रह्यो ममता सबसूं नर, याहित बद्धहि बद्ध फिरै है॥ २५॥
तू ठगिकेधन औरकु ल्यावत, तेरउ तौ घर औरहि फोरै॥
आग लगै सबही जरि जाइ सु, तू दमरी दमरी करि जोरै॥
हाकमको डर नाहि न सूझत, सुंदर एकहि वेर निचोरै॥
तू खरचै नहिं आप न खाइ सु, तेरिहि चातुरि तोहिकुं बोरै॥२६॥

मनहर छंद॥

करत प्रपंच इन, पंचनिके वश पर्यो;
परदारा[11] रत भै[12] न, आनत बुराईको॥
परधन हरै परजीवकी करत घात[13];
मद्य मांस खाय, लवलेश न भलाईको॥
होयगो हिसाव जब, मुखते न आवै ज्वाव;

---

१ राक्षस। २ खबर। ३ यत्नकर करकै। ४ कुच। ५ जवान। ६ बाल, युवा, वृद्ध तीनो अवस्था। ७ मार्गमें लूटना। ८ खेती। ९ जाडा। १० युद्धमें। ११ परस्त्री। १२ डर। १३ दगा।

सुंदर कहत लेखो, लेत राई राईको ॥
इहां तौ कियो विलास, यमको न तोहिं त्रास;
उहां तौ नहीं है कछु, राज पोपाबाईको॥२७॥
दुनियाकूं दौरता है, औरतकूं लौरता है;
वजूदकूं मौरता है, बटौ ईस राईका ॥
मुरगीकूं मोसता है, बकरीकूं रोंसता है;
गरीबकूं खोंसता है, वेमेहेर गाईका ॥
जुलमकूं करता है, धनीसूं न डरता है;
दोजखकूं[1] भरता है, खजाना बलाईका ॥
होयगा हिसाव जब, आवैगा न ज्वाब तब;
सुंदर कहत गुन्हेगार, है खुदाईका[2] ॥ २८ ॥
कर कर आयो जब, खर खर काव्यो नार;
भर भर बाज्यो ढोल, घर घर जान्यो है ॥
दर[3] दर दौरचो जाय, नर नर आगे दीन;
बर बर बकत न, नेक अलसान्यो है ॥
सर सर सोधै धन, तर तर तोरै पात;
जर जर काटत, अधिक मोदैं[4] मान्यो है॥
फर फर फूल्यो फिरै, डर डरपै न मूढ;
हर हर हँसत न सुंदर, सकान्यो है ॥ २९ ॥
जनम सिरान्यो जाइ, भजन विमुख शठें[5];
काहेकूं भवन[6] कूपँ[7], विन मीच मरै है ॥
गहत अविद्या जानि, शुकनलिनी ज्यूं मूढ;
कर्म और विकर्म करै, करत न डरै है ॥

---

१ नरक । २ परमेश्वरका । ३ जगह जगह । ४ प्रसन्नता । ५ मूर्ख । ६ घर । ७ कुँवा ।

आपहीते जात अंध, नरकमें बेर बेर;
अजहूं न शंक, मनमाहिं अब करै है ॥
दुःखको समूह, अवलोकिके न त्रासहोइ;
सुंदर कहत नर, नागपाश परै है ॥ ३० ॥
जग मग पग तजि, साजि भजि राम नाम;
काम क्रोध तन मन, घेरि घेरि मारिये ॥
झूठ मूठ हठ त्याग, जाग भाग सुनि पुनि;
गुण ज्ञान आनि आन, वाँरि वारि डारिये ॥
गाँहि ताहि जाहि शेष, ईश शाँशि सुरँ नर;
औैर बात हेतु तात, फेरि फेरि जारिये ॥
सुंदर दरद खोइ, धोइ धोइ बेर बेर;
सार संग अंग रंग, हेरि हेरि धारिये ॥ ३१ ॥

दूमिला छंद ॥

हठ योग धरो तन जात भिया, हरि नाम विना मुख धूरि परै ॥
शठ शोग हरो छिन गात किया, चरि चाम दिना भुख पूरि जरै ॥
भठ भोग परो घन घात धिया, अरि काम किना सुख जूरि मरै ॥
मठ रोग करो धन धात हिया, परि राम तिना दुख दूरि करै ॥ ३२ ॥
गुर ज्ञान गहै अति सोई सुखी, मन मोह तजे सब काज सरै ॥
धुर ध्यान रहै पति खोइ मुखी, रर्ण लोह बजे तब लाज परै ॥
सुर ताननहै हति दोइ दुखी, तनुं छोह सजे अब आज मरै ॥
पुर थान लहै मति धोइ रुखी, जन वोह रजै जब राज करै ॥ ३३ ॥

---

१ देखकर । २ डर । ३ न्योछावर । ४ पकर । ५ चन्द्र । ६ देवता । ७ बनताहै । ८ संग्राम । ९ शरीर ।

अथ कालचिंतामणिको अंग ३

इंदव छंद॥

मंदिर म्हेल विलायत हैं गज, ऊंट दमाम दिना इक दो हैं॥
तातहु मात तिया सुत बंधव, देख धुं पामरे होत विछो हैं॥
झूठ प्रपंचसुं राचि रह्यो शठ, काठकि पूतरि ज्यूं कपि मोहैं॥
मेरिहि मेरि कहै नित सुंदर, आँखि लगे कहि कौनकु कोहैं॥१॥
ये मम देश विलायत हैं गज, ये मम मंदिर ये मम थाती॥
ये मम मातु पिता पुनि बंधव, ये मम पूत सु ये मम नाती॥
ये मम कामिनि केलि करै नित, ये मम सेवक हैं दिन राती॥
सुंदर ऐसेहि छाँड़ि गयो सब, तेल जरचोसु बुझी जब बाती॥२॥
ते दिन चारि विराम लियो शठ, तोर कहे कछु ह्वै गई तेरी?
जैसहि बाप ददा गय छाँड़ि सु, तैसहि तू तजि है पल फेरी॥
मारहि काल चपेट अचानक, होइ घरीकमें राखकि ढेरी॥
सुंदर ले न चलै कछु ये सँग, भूलि कहै नर मेरिहि मेरी॥३॥
के यह देह जरायके छार, कियाकि कियाकि कियाकि कियाहै॥
के यह देह जमीमहिं गाड़ि, दियाकि दियाकि दियाकि दियाहै॥
के यह देह रहै दिन चार,जियाकि जियाकि जियाकि जिया है॥
सुंदर काल अचानक आइ लियाकि, लियाकि लियाकि लिया है॥ ४॥
देह सनेह न छांड़त है नर, जानत है थिर है यह देहा॥
छीजत जात घटै दिनही दिन, दीसत है घटको नित छेहा॥
काल अचानक आइ गहै कर, ढाह गिराइ करै तनु खेहा॥
सुंदर जानि यहै निहचै धरि, एक निरंजनसूं कर नेहा॥ ५॥
तू कछु और विचारत है नर, तोर विचार धरचोहि रहैगो॥

---

१ नीच। २ धरोहर। ३ विलास। ४ विश्राम। ५ दैवयोग।
५ धूरि।

कोटि उपाय करै धनके हित, भाग्य लिख्यो तितनोहि लहैगो॥
भोरकि साँझ घरी पलमाँझ सु, काल अचानक आइ गहैगो ॥
राम भज्यो न कियो कछु सुकृत[1], सुंदर यूं पछताइ रहैगो ॥ ६ ॥
भूलि गयो हरि नामकुँ तूं शठ, देख धुँ कौन सँयोग बन्यौ है ॥
काल अचानक आइ गहे कँठ, पेख धुँ झूंठहि तान तन्यो है ॥
क्षार करै सब धाम[2]कुँ लूटि अनादिकु ऐसहि जीव हन्यो है ॥
कोउ न होत सहाय कुटुंब तनादिक सुंदर यूहिं सुन्यो है ॥ ७ ॥
बीत गये पिछले सबही दिन, आवत हैं अगले दिन नेरे ॥
काल महाबलवंत बड़ो रिपु, साधि रह्यो शिर ऊपर तेरे ॥
एक घरीमहँ मारि गिरावत, लागत ताहि कछू नहिं बेरे ॥
सुंदर संत पुकारि कहै सब, हूं पुनि तोहिं कहूं अब टेरे ॥८॥
सोइ रह्यो कहाँ गाफिल[3] ह्वै करि, तो शिर ऊपर काल दहारै ॥
धामस धूमस लागि रह्यो शठ, आइ अचानक[4] तोहिं पछारै ॥
ज्यूं वनमें मृग कूदत फाँदत, चित्रा गले नखसूं उर फारै ॥
सुंदर काल डरै जिनके डर, ता प्रभुकूं कहु क्यूं न सँभारै॥९॥
चेतत क्यूं न अचेतन औंघत, काल सदा शिर ऊपर गाजै ॥
रोंकि रहै गढ़के सब द्वारनि, तू तब कौन गली हुइ भाजै ॥
आइ अचानक केश गहै जब, पाकरिके पुनि तोहि जु लाजै ॥
सुंदर कौन सहाय करै जब, मूंडहि मूंड बराबर बाजै ॥१०॥
तू अति गाफिल होइ रह्यो शठ, कुंजर[5] ज्यूं कछु शंक न आनै ॥
माय नहीं तनुमें अपनो बल, मत्त भयो विषयासुख ठानै ॥
खोसत खात सबै दिन बीतत, नीति अनीति कछू नहिं जानै ॥
सुंदर केहरि काल महारिपु, दंत उखारि कुंभस्थल[6] भानै ॥ ११ ॥

---

१ अच्छाकाम । २ घर । ३ बेहोश । ४ अकस्मात्-एकाएकी ।
५ हाथी । ६ मस्तक ।

मातु पिता युवती सुत बांधव, आइ मिल्यो इनसे सनबंधा ॥
स्वारथके अपने अपने सब, सो यह नाहिंन जानत अंधा ॥
कर्म विकर्म करै तिनके हित, भार धरै नित आपुन कंधा ॥
अंत बिछोह[1] भयो सबसूं पुनि, याहित सुंदर है जग अंधा ॥१२

संत सदा उपदेश बतावत, केश[2] सबै शिर श्वेत[3] भये हैं ॥
तू ममता अजहूं नहिं छांड़त, मौतहु आइ सँदेश दये हैं ॥
आजु कि काल चलै उठि मूरख, तेरेहि देखत केत गये हैं ॥
सुंदर क्यूं नहिं राम सम्हारत, याजगमें कहु कौन रहे हैं ॥१३

मनहर छंद ॥

करत करत धंध, कछुहि न जानै अंध;
आवत निकट दिन, आगले चपाक दे ॥
जैसे बाज तीतरकूं, दाबत है अचानक;
जैसे बक मछरीकूं, लीलत लपाक दे ॥
जैसे मक्षिका[4]की घात, मकरी करत आय ॥
जैसे साँप मूषक[5]कूं, ग्रसत गपाक दे ॥
चेत रे अचेत नर, सुंदर सम्हार राम;
ऐसे तोहिं काल आय, लेइगो टपाक दे ॥ १४ ॥

मेरो देह मेरो गेह[6], मेरो परिवार सब ॥
मेरो धन माल मैं तौ, बहुविधि भारो हूं ॥
मेरे सब सेवक हुकम, कोउ मेटै नाहिं;
मेरी युवँती[7]को मैं तौ, अधिक पियारो हूं ॥
मेरो वंश ऊंचो मेरे, बाप दादा ऐसे भये;
करत बड़ाई मैं तौ, जगत उजारो हूं ॥

---

१ बिछुरना । २ बाल । ३ सफेद । ४ माछी । ५ चूहा । ६ घर ।
७ स्त्री ।

सुंदर कहत मेरो मेरो, करि जानै शठ;
ऐसे नहिं जानै मैं तौ, कालहीको चारो हूँ ॥ १५ ॥

जबते जनम धरचो, तबहीतें भूलि परचो;
बालपनमाहिं भूल्यो, समझ्यो न रुखमें ॥
यौवन भयो है जब, काम वश भयो तब;
युवतीसूं एकमेक, भूलि रह्यो सुखमें ॥
पुत्रहु प्रपुत्र भये, भूल्यो तब मोह बांधि;
चिंता करि करि भूल्यो, जानै नहिं दुःखमें ॥
सुंदर कहत शठ, तीनूंपनेंमाहिं भूल्यो;
अंत पुनि जाइ परचो, कालहीके मुखमें ॥ १६ ॥

उठत बैठत काल, सोवत जागत काल;
चलत फिरत काल, काल उर धँस्यो है ॥
कहत सुनत काल, खातहू पिवत काल;
कालहीके गालमाहिं, हर हर हँस्यो है ॥
तात मात बंधु काल, सुत दारा गृह काल;
सकल कुटुंब काल, काल जाल फँस्यो है॥
सुंदर कहत एक, रामबिन सब काल;
कालहीको कृत्य कियो, अंतकाल ग्रस्यो है ॥ १७ ॥

जबते जनम लेत, तबहीते आयु घटै;
माई सों कहत मेरो, बड़ो होत जात है॥
आज और काल और, दिन दिन होत और;
दौरचो दौरचौ फिरत, खेलत अरु खातहै ॥
बालपन बीत्यो जब, यौवन लग्यो है आइ ।

---

१ खानेकी चीज । २ अवस्था । ३ निगलना ।

यौवनहु बीते बुढ़ो, डोकरो दिखात है ॥
सुंदर कहत ऐसे, देखतही बूझि गयो ।
तेल घटि गये जैसे, दीपक बुझात है ॥ १८ ॥
सब कोऊ ऐसे कहैं, काल हम काटत हैं ।
काल तौ अखंडनाश, सबको करतु है ॥
जाके भय ब्रह्मा पुनि, होत है कँपायमान ।
जाके भय सुरासुर, इंद्रहू डरतु है ॥
जाके भय शिव अरु, शेषनाग तीनोलोक ॥
केइक कल्पे बीते, लोमश परतु है ॥
सुंदर कहत नर, गरब गुमान करै ॥
तू तौ शठ एकही, पलकमें मरतु है ॥ १९ ॥
कालसम बलवंत, कोऊ नहिं देखियत ॥
सबको करत अंत, काल महाजोर है ॥
कालहीको डर सुनि, भग्यो मूसापैगंबर ॥
जहाँ जहाँ जाइ तहाँ, तहाँ वाको घोरै है ॥
कालभयानक भयभीत, सब किये लोक ॥
स्वर्ग मृत्यु पातालमें, कालहीको शोर है ॥
कालहीको काल एक, सुंदर अखंड ब्रह्म ॥
वासूं काल डरै जोई, चल्यो वहि ओर है ॥ २० ॥
बरषा भयेते जैसे, बोलत भँभोरी स्वर
खंड न परत कहु, नेकहू न जानिये ॥
जैसे पुंगी बाजत, अखंडस्वर होत पुनि ॥
ताहूमें न अंतर, अनेक राग गानिये॥

---

१ विनासीमाके सम्पूर्ण । २ ब्रह्माकाएकदिन । ३ अभिमान । ४ कठिनाई । ५ झींगुर । ६ आवाज ।

जैसे कोई गुडीकूं, चढ़ावत गगनमाहिं;
ताहुकी सूं धुनि सुनि, वैसेही बखानिये ॥
सुंदर कहत तैसे, कालको प्रचंड वेग;
रात दिन चल्यो जाइ, अचरज मानिये ॥ २१ ॥
माया जोरि जोरि नर, राखत यतन करि;
कहत है एकदिन, मेरे काम आइ है ॥
तोहिं तो मरत कछु, बेर नहिं लागे शठ;
देखतहि देखत बबूला, सों बिलाइ है ॥
धन तो धरचोही रहै, चलत न कौड़ी गहै;
रीते हाथनसे जैसो, आयो तैसो जाइ है ॥
करिले सुकृत यह, बेरियां न आवै फिरि;
सुंदर कहत नर, पुनि पछताइ है ॥ २२ ॥
बावरो सु भयो फिरै, बावरीहि बात करै;
बावरो ज्यूं देत वायू, लागत बुरानो है ॥
मायाको उपाय जानै, मायाकी चातुरी ठानै;
मायामें मगन अति, माया लपटानो है ॥
यौवनके मद मातो, गिनत न कोउ नातो;
काम वश कामिनीके, हाथही बिकानो है ॥
अतिही भयो बेहाल, सूझत न माथे काल;
सुंदर कहत ऐसो, और को दिवानो है ॥ २३ ॥
झूठो धन झूठो धाम, झूठो सुख झूठो काम;
झूठो देह झूठो नाम, धरिके भुलायो है ॥
झूठो तात झूठी मात, झूठे सुत दारा भ्रात;

---

१ कनकौवा । २ आकाश । ३ पुण्य । ४ पागल । ५ जवानी । ६ व्याकुल । ७ पिता । ८ स्त्री ।

झूठो हित मानि मानि, झूठो मान लायो है ॥
झूठो लैन झूठो दैन, झूठो मुख बोलै वैन ;
झूठे झूठे करै फैन, झूठहीकूं धायो है ॥
झूठहीमें एतो भयो, झूठहीमें पचि गयो;
सुंदर कहत सांच कबहू, न आयो है ॥ २४ ॥

दीर्घाक्षर-कवित्त ॥

झूठे हाथी झूठे घोरा, झूठे आगे झूठा दौरा;
झूठा बाँधा झूठा छोरा, झूठा राजा रानी है ॥
झूठी काया झूठी माया, झूठा झूठे धंधे लाया;
झूठा मूवा झूठे जाया, झूठी याकी वानी है ॥
झूठा सोवै झूठा जागै, झूठा जूझै झूठा भागै;
झूठा पीछे झूठा आगे, झूठे झूठी मानी है ॥
झूठा लीया झूठा दीया, झूठा खाया झूठा पीया;
झूठा सौदा झूठा कीया, ऐसा झूठा प्राणी है २५ ॥

मनहरछंद ॥

झूठ यूं बँध्यो है जाल, ताहीते ग्रसत काल;
काल विकराल व्याल[1], सबहीकूं खात है ॥
नदीको प्रवाह[2] चल्यो, जात है समुद्रमाहिं;
तैसे जग कालहीके, मुखमें समात है ॥
देहसु ममत्व ताते, कालको भै[3] मानत है;
ज्ञान उपजेते वही, कालहू बिलात है ॥
सुंदर कहत परब्रह्म, है सदा अखंड;
आदि मध्य अंत एक, सोई ठहरात है ॥ २६ ॥

---

१ सर्प। २ धारा। ३ डर।

इंदव छंद ॥

काल उपावत काल खपावत, काल मिलावत है गहि माटी ॥
काल हलावत काल चलावत, काल खिलावत है सब आटी ॥
काल बुलावत काल भुलावत, काल डुलावत है वनघाटी ॥
सुंदर काल मिटै तबही पुनि, ब्रह्मविचार पढ़ै जब पाटी ॥२७॥

इति कालचिंतामणिको अंग संपूर्ण ॥ ३ ॥

अथ देहआत्मबिछोहको अंग ४

इंदव छंद ॥

वे श्रवणा रसना मुख वेसहि, वेसहि नाशिक वेसहि अंखी[२] ॥
वे कर वे पग वे सब द्वार सु, वे नख शीशहि रोम असंखी ॥
वेसहि देह परी पुनि दीसत, एक विना सब लागत खंखी[३] ॥
सुंदर कोउ न जानि सकै यह, बोलत हो सु कहां गयो पंखी ॥१॥
बोलत चालत पीवत खावत, सींचत है द्रुमकूं[४] जस माली ॥
लेतहु देतहु देखत रीझत, तोरत तान बजावत ताली ॥
जामहिं कर्मविकर्म किये सब, है यह देह परी अब ठाली ॥
सुंदर सो कितहू नहिं दीसत[६], खेलगयो इक खेल सु ख्याली२॥
मातु पिता युवती[७] सुत बांधर्व[८], लागत है सबकूं अति प्यारो ॥
लोककुटुंब खरो हित राखत, होइ नहीं हमते कहुँ न्यारो ॥
देह सनेह तहांलग जानहु, बोलत है मुख शब्द उचारो ॥
सुंदर चेतनशक्ति[९] गई जब, बेगि कहैं घरबार निकारो ॥ ३ ॥
रूप भलो तबहीं लग दीसत, जौंलग बोलत चालत आगै ॥
पीवत खात सुनै अरु देखत, सोई रहै उठिके पुनि जागै ॥
मातु पिता भइया मिलि बैठत, प्यार करी युवती गल लागै ॥
सुंदर चेतनशक्ति गई जब, देखत ताहि सबै डरि भागै ॥४॥

---

१ उत्पन्न करताहै ।२ आंख। ३ खाली । ४ पेड़ ।५ देह । ६ दिखाई देना । ७ स्त्री । ८ भाई बंधु । ९ आत्मा ।

मनहरछंद ॥

कौन भाँति करतार[1], कियो है शरीर यह;
पावक[2]के माहिं देखौ, पानीको जमावनो ॥
नाशिका श्रवण नयन, वदन[3] रसन वैन;
हाथ पाँव अंग नख, शीशको बनावनो ॥
अजब अनूप रूप, चमक दमक ऊप;
सुंदर शोभत अति, अधिक सुहावनो ॥
जाहि छिन चेतन शँकति[4] लीन होइ गई;
ताहि छिन लगत है, सब कूं अभावनो[5] ॥५॥
मृत्तिका[6]को पिंड देह, ताहिमें जुगुति भई;
नासिका नयन मुख, श्रवण बनाये हैं ॥
शीश पांव हाथ अरु, अँगुरी विराजमान;
अँगुरीके आगे पुनि, नखहू लगाये हैं ॥
पेट पीठ छाती कंठ, चिबुक[7] अधर[8] गाल;
दशन रसन बहु,वचन सुनाये हैं ॥
सुंदर कहत जब, चेतनशकति गई;
वही देह जारि बारि, क्षार करि आये हैं ॥ ६ ॥
देह तौ प्रगट यह, ज्यूंकी त्यूंही जानियत;
नयनके झरोखेमाहिं, झांकत न देखिये ॥
नाकके झरोखे मांहि, नेक न सुवास लेत;
कानके झरोखेमांहि, सुनत न लेखिये ॥
मुखके झरोखेमें न, वचन उचार होत;
जीभहूंकूं षटरस, स्वाद न विशेखिये ॥

१.ब्रह्मा । २ आग । ३ मुख । ४ शक्ति । ५ अप्रिय । ६ मिट्टी । ७ ठुड्डी । ८ होठ ।

सुंदर कहत कोउ, कौन विधि जानै ताहि;
पीरो कारो काहू द्वारा, जातोहू न पेखिये ॥ ७॥
मातु तौ पुकार छाति, कूटि कूटि रोवत है;
बापहू कहत मेरो, नंदनै कहां गयो ॥
भैयाहू कहत मेरी, बाँह आजु दूरि भई;
बहन कहत मेरो, वीर दुःख देगयो ॥
कामिनी कहत मेरो, शीश शिरताज कहाँ;
उन्है ततकालै रोइ, हाथमैं धोरा लयो ॥
सुंदर कहत कोउ, ताहि नाहिं जानि सकै;
बोलत हुतो सो यह, छिनमें कहाँ गयो ॥ ८ ॥
रजै अरु वीरजको, प्रथम सँयोग भयो;
चेतनशकति तब, कौन भांति आई है ॥
कोउ तौ कहत बीजँ मध्यही कियो प्रवेशँ;
किनहूक पंचमास, पीछेके सुनाई है ॥
देहको वियोगँ जब, देखतहि होइ गयो;
तब कोऊ कहो कहाँ, जाइके समाई है ॥
पंडितहीं ऋषीश्वर, तपेश्वर मुनीश्वर;
सुंदर कहत यह, किनहूँ न पाई है ॥ ९ ॥
तबलौंहि क्रिया सब, होत है विविधभाँति;
जबलग घटमाहिं, चेतनप्रकाश है ॥
देहके अशक्तँ भये, क्रिया सबथकि जाय;
जबलग श्वास चलै, तबलग आश हैं ॥
श्वासहू थक्यो है जब, रोवन लगै है तब;

---

१ देखना। २ पीट पीट। ३ पुत्र। ४ स्त्री। ५ शीघ्र। ६ जो स्त्रीमें रहताहै। ७ वीर्य्य जो पुरुषमें रहताहै। ८ समाना। ९ जुदाई। १० शिथिल।

सब कोऊ कहैं अब, भयो घट नाश है ॥
काहु नहीं देख्यो किहिं, वीर किन कहाँ गयो;
सुंदर कहत यही, बड़ोही तमाश है ॥ १० ॥
देह तौ सुरूप तौलौं, जौलौं है अरूप माहिँ;
सब कोउ आदर, करत सनमान हैं ॥
टेढ़ी पाग बांधि बेर, बेरही मरोरै मूछ;
वाहुहु सँवारै अति, धरत गुमान है ॥
देश देशहीके लोग, आयके हुजूर होइँ;
बैठिकरि तखत, कहावै सुलतान है ॥
सुंदर कहत जब, चेतन शकति गई;
वहै देह ताकी कोऊ, मानत न आनै है ॥ ११ ॥

इति देहआत्मबिछोहको अंग संपूर्ण ॥ ४ ॥

अथ तृष्णाको अंग ५

इंदव छंद ॥

नयननकी[१] पलही पलमें क्षण, आधिघरी घटिका जु गई है ॥
याम गयो युग याम गयो पुनि, साँझ गई तब रात भई है ॥
आज गई अरु काल गई परसों, तरसों कछु और ठई है ॥
सुंदर ऐसहि आयु गई तृषणा, दिनही दिन होत नई है ॥ १ ॥

दूमिला छंद ॥

कनही कनकूं बिललात फिरै, शठ याचत है जनही जनकूं ॥
तनही तनकूं अतिशोच करै, नर[३] खात रहै अनही अनकूं ॥
मनही मनकी तृषणा न मिटी, पुनि धावत है धनही धनकूं ॥
छिनही छिन सुंदर आयु[४] घटी, कबहूँ न गयो वनही वनकूं ॥ २ ॥

१ दूसरा। २ आँखैं। ३ मनुष्य। ४ अवस्था।

इंदव छंद॥

जो दश वीश पचास भये शत, होइ हजार तु लाख मँगैगी॥
कोटि अरब्ब खरब्ब असंख्य, धरापति होनकि चाह जगैगी॥
स्वर्ग पताल कु राज करौं तृषणा, अधिकी अति आग लगैगी॥
सुंदर एक संतोष बिना शठ, तेरि तु भूख कधी न भगैगी३॥
लाख करोर अरब्ब खरब्बनि, नील रु पद्म तहाँ लग खाटी॥
जोरिहि जोरि भंडार भरै जब, और रही सु जमीतर दाँटी॥
तोहु न तोहिं संतोष भयो शठ, सुंदर तैं तृषणा नहिं काटी॥
सूझत नाहिंन कालहि तो शिर, मारि जुथाप मिलाइत माटी ४॥
भूख लिये दशहूं दिशि दौरत, ता हित तूं कबहूं न अघै है॥
भूखभंडार भरे नहिं कैसहु, जो धन मेरुसुमेरु लुं पैहै॥
तू अब आगेहि हाथ पसारत, या हित हाथ कछू नहिं ऐहै॥
सुंदर क्यूं नहिं तोष करै नर, खाइ जु खाइ कितोइकखैहै॥५॥
भूख नचावत रंकहि रावहि, भूख नचाइ जु विश्व विगोई॥
भूख नचावत इंद्र सुरासुर, और अनेक जहाँलग जोई॥
भूख नचावत है अध ऊर्धहि, तीनहु लोक गिनै कह कोई॥
सुंदर जाइ तहाँ दुखही दुख, ज्ञान विना न कहूं सुख होई॥६॥
पेट पसार दियो जितही तित, तैं यह भूख कितीइक थापी॥
वोर न छोर कछू नहिं आवत, मैं बहुभाँति भलीविध मापी॥
देखत देह भये सब जीरन, तू नित नूतन आहि अद्यापी॥
सुंदर तोहिँ सदा समुझावत, हे तृषणा अजहूं नहिं धापी॥७॥
तीनहि लोक अहार कियो सब, सातसमुद्र पियो पुनि पानी॥
और जहाँ तहँ ताकत डोलत, काढत आंख डरावत प्रानी॥

---

१ एकसौ। २ राजा। ३ देवलोक। ४ पृथ्वीमें गडी। ५ दलिद्री। ६ राजा। ७ संसार। देवतादैत्य।

दाँत दिखावत जीभ हलावत, याहित मैं यह डाकिनि जानी॥
सुंदर खात भये कितने दिन, हे तृषणा अजहूं न अघानी॥८॥
पाँव पताल परे गय नीकसि, शीश गयो असमान अघेरो॥
हाथ दशोदिशकूं पसरे पुनि, पेट भरे न समुद्र सुमेरो॥
तीनहु लोक लिये मुखभीतर, आँखिहु कान बँधे चहुँ फेरो॥
सुंदर देह धरयो अतिदीरघ, हे तृषणा कछु छेहै न तेरो॥९॥
वाद वृथा भटके निशि[3]वासर, दूर कियो कबहूँ नहिं घोषा॥
तू हतियारिनि पापिनि कोढ़िनि, साँच कहूं मत मानहु रोषा॥
तोहिं मिलै तबते हुइ बंधन, तू मरि है तवहीं हुय मोषा॥
सुंदर और कहा कहिये तुहिं, हे तृषणा अब तौ कर तोषा॥१०॥
क्यूं जगमाहिँ फिरै झख मारत, स्वारथ कौन परी जिहिं जोलै॥
ज्यूं हरियाइ गऊ नहिं मानत, दूध दुह्यो कछु सो पुनि ढोलै॥
तू अतिचंचल हाथ न आवत, नीकस जाइ नहीं मुख बोलै॥
सुंदर तोहिं कह्यो कितनी बिर, हे तृषणा अब तू मत डोलै॥११॥
तैं कहि कान धरी नहिं एकहु, बोलत बोलत पेटहि पाक्यो॥
हूं कछु बात बनाइ कहूं जब, तैं तब पीसतही सब फाक्यो॥
केतक द्यौस भये परबोधत, तैं अब आगेहिकूं रथ हांक्यो॥
सुंदर सीख गई सबही चलि, हे तृषणा कहिके तुहिं थाक्यो॥१२॥
तूंहि भ्रमाय प्रदेश पठावत, बूड़त जाय समुद्रहि जाजा॥
तूंहि भ्रमाय पहाड़ चढ़ावत, वाद व्रथा मरि जाइ अकाजा॥
तैं सबलोक भ्रमाय भलीविध, भांड किये सब रंकहु राजा॥
सुंदर तोहिं दुखाइ कहूँ अब, हे तृषणा तुहिं नेकु न लाजा॥१३॥

इति तृष्णाको अंग संपूर्ण॥ ५॥

---

१ बंवा-बृहतविस्तारका। २ नाश। ३ रातदिन। ४ दिन। ५ शिक्षा।

अथ धैर्य उराहनको अंग ६

इंदव छंद ॥

पाँव दिये चलने फिरने कहँ, हाथ दिये हरि कृत्य करायो ॥
कान दिये सुनिये हरिके यशं, नैन दिये तिन मार्ग दिखायो ॥
नाक दियो मुख शोभत ता करि, जीभ दई हरिको गुण गायो ॥
सुंदर साज दिये परमेश्वर, पेट दियो पर पाप लगायो ॥१॥
कूप भरै अरु वाँवि भरै पुनि, ताल भरै वरषाऋतु तीनो ॥
कोठि भरै घटं माट भरै घर हाटं, भरै सभही भरि लीनो ॥
खंडक खास वखारं भरै परि, पेट भरै न बडोदरं दीनो ॥
सुंदर रीतुहि रीतु रहै यह, कौन खड़ा परमेश्वर कीनो ॥२॥

मनहर छंद ॥

किधों पेट चूल्हो कीधों भाठि किधों भार आहि,
जोइ कछु झोकिये सु सब जरि जातु है ॥
किधों पेट थल किधों वावि किधों सागर है,
जेतो जल परै तेतौ सकल समातु है ॥
किधों पेट दैत किधों भूत प्रेत राक्षस है,
खाउँ खाउँ करै कछु नेक न अघातु है ॥
सुंदर कहत प्रभु कौन पाप लायो पेट,
जबही जनम भयो तबहीको खातु है ॥ ३ ॥
विग्रैहँ तौ विग्रह करत अति बेरबेर,
तन पुनि तनक न कबहुँ अघायो है ॥
घट न भरत क्यूंही घटचोही रहत नित,

---

१ कीर्त्ति । २ बड़ाई । ३ बावली । ४ घडा । ५ बाजार । ६ कोठी ।
७ बड़ापेट । ८ मट्टी । ९ लड़ाई ।

शरीर सिराईमें तौ कबहुँ न खायो है ॥
देह देह कहतही कहत जनम बीत्यो,
पिंड पिंड काज निशि दिन ललचायो है ॥
मुदगल गिलत गिलत न तृपत होइ,
सुंदर कहत वपु कौन पाप लायो है ॥ ४ ॥
पाजी पेट काज कोटवालके आधीन होइ,
कोटवाल सो तौ शिकदार आगे दीन है ॥
शिकदार दीवानके पीछे लग्यो डोलै पुनि ;
दीवानहु जाय बादशाह आगे लीन है ॥
बादशाह कहै या खोदाय मुझे और देई,
पेटही पसारे वही पेट वश कीन है ॥
सुंदर कहत प्रभु क्यूंही नहीं भरै पेट,
एक पेट काज एक एकके आधीन है ॥ ५ ॥
तैं तौ प्रभु पेट दियो जगत नचायो जिन,
पेटहीके लिये घर घर द्वार फिरचो है ॥
पेटहीके लिये हाथ जोरि आगे ठाढ़ो होइ,
जोई जोई कह्यो सोई सोई उन करचो है ॥
पेटहीके लिये पुनि, मेघ शीत घाम सहै;
पेटहीके लिये जाइ, रणमाँहिं मरचो है ॥
सुंदर कहत इन पेट, सब भांड किये;
और गैलें छूटै पर, पेट गैल परचो है ॥ ६ ॥
पेटसों न बली जाके, आगे सब हारि चले;
राव अरु रंक एक, पेट जीति लिये है ॥
कोउ वाघ मारत, विदारत है कुंजरकूं;

---

१ शरीर । २ लडाईमें । ३ रद । ४ रास्ता । ५ फाडना । ६ हाथी ।

ऐसे शूरवीर पेट काज, प्राण दिये हैं ॥
यंत्र मंत्र साधत, आराधंत मशान जाइ;
पेट आगे डरत, निडर ऐसे हिये हैं ॥
देवता असुर भूत, प्रेत तीनूंलोक पुनि;
सुंदर कहत प्रभु, पेट जेरे[२] किये हैं ॥ ७ ॥
प्रातही उठत जब, पेटहीकी चिंता तब;
सब कोऊ जात आपु, आपुके आहारकूं ॥
कोऊ अन्न खात पुनि, आमिष[३] भखत कोऊ;
कोऊ घास चरत, चरत कोऊ दार[४]कूं ॥
कोऊ मोती फल कोऊ, वासरस पय[५] पान;
कोऊ पौन पीवत, भरत पेट भारकूं ॥
सुंदर कहत प्रभु, पेटही भ्रमाय सब;
पेट तुम्ह दियो है, जगत होन ख्वार[६]कूं ॥ ८ ॥

इंद्व छंद ॥

पेटहि कारण जीव हने बहु, पेटहि मांस भखै रु सुरापी[७] ॥
पेटहि लेकर चोरि करावत, पेटहिकूं गठरी गहि कापी ॥
पेटहि पाश[८] गरेमहँ डारत, पेटहि डारत कूप रु वापी ॥
सुंदर काहिकूं पेट दियो प्रभु, पेटसों और नहीं कोइपापी ॥९॥
औरनकूं प्रभु पेट दियो तुम, तेरतु पेट कहूं नहिं दीसै ॥
ए भटकाइ दिये दशहू दिश, कोउक रांधत कोउक पीसै ॥
पेटहि कारण नाचत हैं सब, ज्यूं घरही घर नाचत कीसै[९] ॥
सुंदर आप न खावहु पीवहु, कौन करी इन ऊपर रीसै[१०] ॥१०॥

---

१ पूजत। २ तंग। ३ माँस। ४ लकड़ी। ५ दूध, पानी। ६ खराव। ७ शरावी। ८ फाँसी। ९ बँदर। १० क्रोध।

मनहर छंद ॥

काहेकूं काहूके आगे जाइके आधीन होइ,
दीन दीन वचन उचार मुख कहते ॥
जिनकूं तौ मद[2] अरु गरव गुमान अति,
तिनके कठोर बैन कबहूँ न सहते ॥
तुम्हारेही भजनसूं अधिक लवलीन अति,
सकलकूं त्यागिके एकांत जाइ गहते ॥
सुंदर कहत यह तुमही लगायो पाप,
पेट न हुतो तौ प्रभु बैठे हम रहते ॥११॥
पेटहीके वश रंक पेटहीके वश राव,
पेटहीके वश और खान सुलतान हैं ॥
पेटहीके वश योगी जंगम संन्यासी सेख,
पेटहीके वश वनवासी खात पान हैं ॥
पेटहीके वश ऋषि मुनि तपधारि सब,
पेटहीके वश सिद्ध साधक[3] सुजान हैं ॥
सुंदर कहत नाहिं काहूको गुमान रहै,
पेटहीके वश प्रभु सकलजहान है ॥ १२ ॥

इति धैर्य उराहनको अंग संपूर्ण ॥ ६ ॥

अथ विश्वासको अंग ॥ ७ ॥

इंदव छंद ॥

होइ निचिंत करै मत चिंतहि चोंच दई वइ चिंत करैगो।

१ छोटा-वश। २ नशा। अभिमान। ३ सिद्ध-साधना करने वाला

पाउँ पसार पर्यो कि न सोवत, पेट दियो वइ पेट भरैगो ॥
जीव जिते जलके थलके पुनि, पाहनमें पहुंचाय धरैगो ॥
भूखहि भूख पुकारत है नर, सुंदर तू कह भूख मरैगो ॥ १ ॥
धीरज धारि विचार निरंतर, तोहिं रच्यो वहि आपहि ऐ है ॥
जेतिक भूख लगी घट प्राणहि, तेतिक तूं अनयासहि पैहै ॥
जो मनमें तृषणा करि ध्यावत, तौ तिहुँलोक न खात अघैहै ॥
सुंदर तू मत शोच करै कछु, चोंच दई वइ चूनहि दै है ॥२॥
नेक न धीरज धारत हैं नर, आतुर होइ दशोदिश धावै ॥
ज्यूं पशु खैंचि तुड़ावत बंधन, जौंलगि नीर अहार न आवै ॥
जानत नाहिं महामतिमूरख, जा घर द्वार धनी पहुँचावै ॥
सुंदर आप कियो घट भाजन[१], सो भरि है मत शोच उपावै॥ ३॥
भाजन आप घड़े जितने भरिहैं, भरि हैं भरि हैं भरि हैं जू ॥
गावत हैं जिनके गुणकूं ढरिहैं, ढरिहैं ढरिहै ढरिहैं जू ॥
आदिहु अंतहु मध्य सदा हरिहैं, हरि हैं हरिहैं हरिहैं जू ॥
सुंदरदास सहाय सही करिहैं, करिहैं करिहैं करिहैं जू ॥ ४ ॥
काहिकुँ दौरत है दशहू दिश, तू नर देख कियो हरिजूको ॥
बैठि रहै दुरिके मुख मूंदि, उघारत दाँत खवाइहि टूको ॥
गर्भथके प्रतिपाल करी जिन, होइ रह्यो तबहीं जड़ मूको ॥
सुंदर क्यों विललात फिरै अब, राख हृदय विसवास प्रभूको ॥५॥
जा दिनते ग्रभवास तज्यो नर, आइ अहार लियो तबही को ॥
खातहि खात भये इतने दिन, जानत नाहिं न भूख कहीको ॥
दौरत ध्यावत पेट दिखावत, तू शठ कीट सदा अनहीको ॥
सुंदर क्यों विसवास न राखत, सो प्रभु विश्व भरै सबहीको ॥६॥
खेचर[२] भूचर जे जलकेचर, देत अहार चराचर पोषै ॥

---

१ पात्र-बर्तन। २ आकाशके चलने वाले और पृथ्वीके चलने वाले॥

वे हरि जो सबको प्रतिपालत, ज्यूं जिहिँ भाँति तिसीविधि तोषै ॥
तू अब क्यूं विसवास न राखत, भूलत है कित धोखहि धोखे ॥
तोहि तहां पहुँचाय रहै प्रभु, सुंदर बैठि रहै किन ओखे ॥७॥

मनहर छंद ॥

काहेकूं बघूरो¹ भयो, फिरत अज्ञानी नर,
तेरो तौ रिजक² तेरे, घर बैठे आइ है ॥
भावै तू सुमेरु जाइ, भावै जाइ मारुदेश,
जितनोक भाग्य लिख्यो तितनोहि पाइ है ॥
कूपमांझ भरि, भावै सागरके तीर भर,
जितनोक भाँडो³ नीर, तितनो समाइ है ॥
ताहितै संतोष करि, सुंदर विश्वास धरि,
जितनो रच्यो है घट, सोई जु भराइ है ॥ ८ ॥
काहेकूं फिरत नर, दीन भयो घर घर,
देखियत तेरो तौ, आहार इक सेर है ॥
जाको देह सागरमें, सुन्यो शतयोजन⁴को,
ताहूकूं तौ देत प्रभु यामें नाहिं फेर है ॥
भूख्यो कोउ रहत न जानिये जगतमाहिं,
कीरी अरु कुंजर सबनहीकूं दे रहै ॥
सुंदर कहत विसवास क्यूं न राखै शठ,
बेर बेर समुझाय कह्यो केती बेर है ॥ ९ ॥
तेरे तौ अधीरज तू आगिलीहि चिंता करै,
आज तौ भरयो है पेट काल कैसी होइ है ॥
भूख्योही पुकारे अरु दिन उठि खातो जाइ,
अतिही अज्ञानी जाकी मति गई खोइ है ॥

---

१ वावला । २ भोजन–आहार । ३ वर्तन । ४ चारसौ कोश ।

ताकूं नहीं जानै शठ जाको नाम विश्वंभर[1],
तहां तहां प्रगट सबनि देत सोइ है ॥
सुंदर कहत तोहिं वाको तौ भरोसो नहिं,
एक विसवास बिन याही भाँति रोइ है ॥ १० ॥
देख धों सकल विश्व भरत भरनहार,
चूंचके समान चून सबहीकूं देत है ॥
कीट पशु पक्षी अजगर मछ कछ पुनि,
उनके न सौदा कोउ न तौ कछु खेत है ॥
पेटहीके काज रात दिवस भ्रमत शठ,
मैं तो जान्यो नीके करि तू तौ कोउ प्रेत है ॥
मानुषशरीर पाय करत है हाय हाय,
सुंदर कहत नर तेरे शिर रेत है ॥ ११ ॥
तू तो भयो बावरो उतावरो फिरत अति,
प्रभुको विश्वास गहि काहे न रहतु है ॥
तेरो जो रिजक है सो आइ है सहजमांहि,
यूंही चिंता करि करि देहकूं दहतु है ॥
जिन यह नख शिख सजिके सँवारचो तोहिं,
अपने कियेकी वह लाजकूं वहतु है ॥
काहेकूं अज्ञानी कछु शोच मनमाहिं करै,
भूख्यो तूं कदै न रहै सुंदर कहतु है ॥ १२ ॥
जगतमें आइके विसारचो है जगतपति,
जगत कियो है सोई जगत भरतु है ॥
तेरे निशि दिन चिंता औरही परी है आइ,

---

१ संसारका भरण पोषण करने वाला परमेश्वर ।

उद्यम अनेक भाँति भाँतिके करतु है ॥
इत उत जायके कमाई करि लाऊं कछु,
नेकु न अज्ञानीनर धीरज धरतु है ॥
सुंदर कहत एक प्रभुके विश्वास विन,
वादहीकूं वृथा शठ पचिके मरतु है ॥ १३ ॥

इति विश्वासको अंग संपूर्ण ॥ ७ ॥

अथ देहमलिनके गर्वप्रहारको अंग ॥ ८ ॥

मनहर छंद ॥

देह तौ मलिन अति बहुत विकार भरि,
ताहू माहिं जराव्याधि[1] सब दुःखराशी है ॥
कबहूंक पेटपीर कबहूंक शिरवाय,
कबहूंक आँख कान मुखमें विथासी[2] है ॥
औरहू अनेकरोग नख शिख पूरि रहे,
कबहूंक श्वास चलै कबहूंक खाँसी है ॥
ऐसो ये शरीर ताहि आपनोके मानत है,
सुंदर कहत यामें कौन सुखवासी है ॥ १ ॥
जा शरीरमाहिँ तू अनेकसुख मानि रह्यो,
ताहि तू विचार यामें कौन बात भली है ॥
मेद मज्जा मांस रगरगमें रकत भरचो,
पेटहू पिटारीसीमें ठौरठौर मली है ॥
हाड़नसूं भरचो मुख हाड़नके नैन नाक,
हाथ पाउँ सोउ सब हाड़नकी नली है ॥

---

१ बुढ़ापा रोगसे ग्रसित । २ दर्द ।

सुंदर कहत याहि देखि जनि भूलै कोई,
भीतर भँगार भरी ऊपर तौ कली है ॥ २ ॥

इंदव छंद ॥

हाड़को पिंजर चाम मढ़्यो सब, माहिं भर्यो मल मूत्र विकारा ॥
थूक रु लार परै मुखतें पुनि, व्याधि बहै सब औरहु द्वारा ॥
मांसकि जीभसुँ खाय सबै कछु, ताहिते ताहिको कौन विचारा ॥
ऐसे शरीरमें पैठिके सुंदर, कैस जु कीजिय शोच अचारा॥३॥
थूक रु लार भर्यो मुख दीसत, आँखिमें गीड़र नाकमें सेढो ॥
औरहु द्वार मलीन रहैं अति, हाड रु मांसके भीतर भेढो ॥
ऐसे शरीरमें वास कियो तब, एकस दीसत ब्राह्मण ढेढो ॥
सुंदर गर्व कहा इतने पर, काहकूँ तू नर चालत टेढो ॥४॥
जा दिन गर्भसँयोग भयो तब, ता दिन बूंद छिया हुति ताहीं ॥
द्वादशमास अधोमुख[2] झूलत, बूड़ि रह्यो पुनि वा रस माहीं ॥
ता रजवीरजकी यह देह सु, तू अब चालत देखत छाहीं ॥
सुंदर गर्व गुमान कहा शठ, आपनि आदि विचारत नाहीं॥५॥

इति देहमलिनके गर्वप्रहारको अंग संपूर्ण ॥ ८ ॥

अथ नारीनिंदाको अंग॥ ९ ॥

मनहर छंद ॥

कामिनीको तनु मानु कहिये सघनवन,
वहाँ कोउ जाय सो तौ भूलही परतु है ॥
कुंजर है गति कटि केहरीको भय जामें,
वेणी कालीनागिनी ऊ फणिकूं धरतु है ॥

---

१ कूर । २ नीचेको मुख ऊपरको पाँय ।

कुच हैं पहार जहाँ कामचोर बसैं तहाँ,
साधिके कटाक्षबाण प्राणकूं हरतु है ॥
सुंदर कहत एक और डर जामें अति,
राक्षसीवदन खाँउ खाँउही करतु है ॥ १ ॥
विषहीकी भूमिमाहिं विषके अंकुर भये,
नारी विष वेली बढ़ी नखशिख देखिये ॥
विषहीके जर मूल विषहीके डार पात,
विषहीके फूल फल लागे जु विशेखिये ॥
विषके तंतू[2] पसार उरझाई आंटी मार,
सब नर वृक्ष पर लपटेही लेखिये ॥
सुंदर कहत कोऊ संततरु बचि गये,
तिनके तौ कहूँ लता लागी नहिं पेखिये ॥ २ ॥
उदरमें नरक नरक अधद्वारनमें,
कुचनमें[3] नरक नरक भरी छाती है ॥
कंठमें नरक गाल चिबुक[4] नरक विंव,
मुखमें नरक जीभ लालहु चुचाती है ॥
नाकमें नरक आँख कानमें नरक बहै,
हाथ पाँउ नख शिख नरक दिखाती है ॥
सुंदर कहत नारी नरकको कुंड यह,
नरकमें जाइ परै सो नरकपाती है ॥ ३ ॥
कामिनीको अंग अतिमलिन महाअशुद्ध,
रोमरोम मलिन मलिन सब द्वार है ॥
हाड़ माँस मज्जा मेद चामसूं लपेटि राखै,
ठौर ठौर रकतके भरेई भंडारै[5] है ॥

१ अवश्यकरके । २ वेलि । ३ चूची । ४ ठुड्डी । ५ खज़ाना—कोश ।

मूत्रहू पुरीष आंत एकमेक मिलि रही ;
औरही उदरमाहिं विविधविकार है ॥
सुंदर कहत नारी नख शिख निंद्यरूप;
ताहि जो सराहै सो तौ बड़ोई गँवार है ॥ ४ ॥

कुंडलिया छंद ॥

रसिकप्रिया रसमंजरी, और शृँगारहि जान॥
चतुराई करि बहुतविधि, विषय बनाई आन ॥
विषय बनाई आन, लगत विषैयिनकूं प्यारी ॥
जागे मदन प्रचंड, सराहै नख शिख नारी ॥
ज्यूं रोगी मिष्टान खाइ, रोगहि विस्तारे ॥
सुंदर ये गति होइ, जोइ रसिकप्रिया धारै ॥ ५ ॥
रसिकप्रियाकि सुनतही, उपजे बहुत विकार ॥
जो या माहीं चित धरै, वहै होत नर ख्वार ॥
वहै होत नर ख्वार, वार तौ कबहुँ न लागै ॥
सुनत विषयकी बात, लहर विषही की जागै;
ज्यूं को ऊँघ्यो हुतो, लेइ पुनि सेज बिछाई ॥
सुंदर ऐसीजान, सुनत रसिकप्रियाभाई ॥ ६ ॥

इति नारीनिंदाको अंग संपूर्ण ॥ ९ ॥

अथ दुष्टजनको अंग ॥ १० ॥

मनहर छंद ॥

अपने न दोष देखै परके औगुण पेखै;
दुष्टको स्वभाव उठि निंदाही करतु है ॥
जैसे कोई महल सँवारि राख्यो नीके करि ;

---

१ मल । २ कामी । ३ कामदेव । ४ देखे ।

कीरी[1] तहाँ जाइ छिद्र ढूंढ़त फिरतु है ॥
भोरहीतें सांझ-लग सांझहीते भोर लग;
सुंदर कहत दिन ऐसेहि भरतु है ॥
पावँके तरेकी नहीं सूझे आग मूरखकूं;
औरकूं कहत तेरे शिरपै, बरतु है ॥ १ ॥

इंदव छंद ॥

घात अनेक रहै उर अंतर, दुष्ट कहै मुखसूं अति मीठी ॥
लौटत पोटत व्याघ्रही[2] ज्यूं नित, ताकत है पुनि ताहिकि पीठी ॥
ऊपरते छिरकै जल आन सु, हेठै[3] लगावत जारि अँगीठी ॥
यामहिं कूँर[4] कछू मति जानहु, सुंदर आपुनि आंखिति दीठी२॥
आपनु काज सँवारनके हित, औरकु काज बिगारत जाई ॥
आपनु कारज होउ न होउ, बुरो करि औरकु डारत भाई ॥
आपहु खोवत औरहु खोवत, खोइ दुनो घर देत बहाई ॥
सुंदर देखतही बनिआवत, दुष्ट करै नहिं कौन बुराई ॥३॥
ज्यूं नर पोषत है निज देहहि, अन्न विनाश करै तिहि बारा ॥
ज्यूं अहि और मनुष्यहि काटत, वाहि कछू नहिं होत अहारा ॥
ज्यूं पुनि पावक झारि सबै कछु, आपहि नाश भयो निरधारा ॥
त्यूं यह सुंदर दुष्ट स्वभावहु, जानि तजो किन तीन प्रकारा ४
सर्प डसै सु नहीं कछु तालक, बीछू लगै सु भलो करि मानौ ॥
सिंहहु खाय तु नाहिं कछू डर, जो गज मारत तौ नाहिं हानौ ॥
आगि जरौ जल बूड़ि मरौ गिरि, जाइ गिरौ कछु भै मत आनौ ॥
सुंदर और भले सबही यह, दुर्जन-संग भलो जिन जानो५॥

॥ इति दुष्टजनको अंग संपूर्ण ॥ १० ॥

---

१ चींटी। २ बाघ। ३ नीचे। ४ टेढ़ा–झूठा।

अथ मनको अंग ॥ ११ ॥

मनहर छंद ॥

हटकि हटकि मन, राखत जु छिन छिन ॥
सटकि सटकि चहुँ ओर अब जातु है ॥
लटकि लटकि ललचाय लोलें बार बार,
गटकि गटकि करि विष फल खातु है ॥
झटकि झटकि तार तारत करम हीन,
भटकि भटकि कहूँ नेक न अघातु है ॥
पटकि पटकि शिर सुंदर जु मानि हारि,
फिटकि फिटकि जाइ सूधो कौन बातु है ॥ १ ॥
पलहीमें मरिजाय पलही में जीवतु है,
पलहीमें परहाथ देखत बिकानो है ॥
पलहीमें फिरै नवखंडहु ब्रह्मांड सब,
देख्यो अनदेख्यो सो तौ याते नहिं छानो है ॥
जातो नाहिं जानियत, आवतो न दीसै कछु,
ऐसेसी बलाई अब तासूं परचो पानो है ॥
सुंदर कहत याकी गतिहू न लखि परै,
मनकी प्रतीत कोउ करै सो दिवानो है ॥ २ ॥
घेरिये तौ घेरचोहू न आवत है मेरो पूत,
जोई परबोधिये सो, कान न धरतु है ॥
नीति न अनीति देखै, शुभ न अशुभ पेखै,
पलहीमें होती अनहोती हू करतु है ॥

---

१ चोंच । २ जहांतक ब्रह्माकी सृष्टिहै । ३ विश्वास । ४ पागल ।

गुरुकी न साधुकी न लोकवेदहूकी शंक,
काहुकी न मानै न तौ काहुते डरतु है ॥
सुंदर कहत ताहि, धीजिये[1] सु कौन भाँति,
मनको स्वभाव कछु कह्यो न परतु है ॥ ३ ॥
काम[2] जब जागै तब, गिनत न कोऊ शंक[3],
जानै सब जोई करि देखत न मा धी[4] है ॥
क्रोध जब जागै तब, नेकु न सँभारि सकै,
ऐसी विधि मूलकी अविद्या जिन साधी है ॥
लोभ जब जागै तब, तृपति न क्यूंही होइ,
सुंदर कहत इन ऐसेहीमें खाधी है ॥
मोह मतवारो निशि दिनही फिरत रहै,
मनसों न कहूं हम देख्यो अपराधी है ॥४॥
देखवेकूं दौरै तौ अटकि जाइ वाही ओर,
सुनवेकूं दौरे तौ रसिक शिरताज है ॥
सूंघवेकूं दौरे तौ अघाय न सुगंध करि,
खायवेकूं दौरे तौ न धापै महाराज है ॥
भोगहीकूं दौरे तौ तृपत नहीं होइ क्यूंहीं,
सुंदर कहत याही नेकही न लाज है ॥
काहुको न कह्यो करै, आपुनीही टेक धरै;
मनसों न कोऊ हम देख्यो दगाबाज है ॥ ५ ॥
देखै न कुठौर ठौर कहत औरकी और,
लीन जाइ होत हाड़ माँस औ रकतमें ॥
करत बुराई सर औसर न जानै कछु,
धक्का आइ देत रामनामसूं लगतमें ॥
बहायें सुरासुर बहायें सब भेषीजन,

१ विश्वास करना । २ मदन । ३ डर । ४ लड़की । ५ मूर्खता ।

सुंदर कहत दिन घालत भगतमें ॥
औरहू अनेक अंतराईही करत रहै,
मनसों न कोऊ है अधम[1] या जगतमें ॥ ६ ॥
जिन ठगे शंकर विधाता[2] इंद्र देव मुनि,
आपनोहू अधिपति[3] ठग्यो जिन चंद है ॥
और योगी जंगम संन्यासी शेख कौन गिनै,
सबनिकूं ठगत ठगावै न सुछंद[4] है ॥
तापेश्वर ऋषीश्वर, सब पचि[5] पचि गये;
काहूके न आवै हाथ, ऐसो यापै बंद है ॥
सुंदर कहत वश कौन विधि कीजे ताहि,
मनसों न कोऊ या जगतमाहिं रंद है ॥ ७ ॥
रंककूं नचावै अभिलाष धन पायबेकी,
निशि दिन शोच करि ऐसेही पचत है ॥
राजाही नचावै सब भूमिहीको राज लेवे,
औरहू नचावै जोई देहसूं रचत है ॥
देवता असुर सिद्ध पन्नग[6] सकललोक,
कीट पशु पक्षी कहु कैसेके बचत है ॥
सुंदर कहत काहू संतकी कही न जाय,
मनके नचाए सब जगत नचत है ॥ ८ ॥

इंदव छंद ॥

केतक द्यौस[7] भये समुझावत, नेक न मानत है मन भोंडू ॥
भूलि रह्यो विषयासुखमें कछु, और न जानत है शठ दोंडू[8] ॥

---

१ नीच । २ ब्रह्मा । ३ मालिक । ४ स्वतंत्र । ५ यत्नकर कर हार ।
६ नाग । ७ दिन । ८ मूर्ख ॥

आँखि न कान न नाक बिना शिर, हाथ न पावँ नहीं मुख पोंहू
सुंदर ताहि गहै कहु क्यूंकरि, नीकसि जाइ बड़ो मन लोंडू ॥९
दौरत है दशहू दिशकूं शठ, वायु लग्यो तबते भयु बेंडा।
लाज न कान कछू नहिं राखत, शील स्वभावकी फोरत भेंडा।
सुंदर सीख कहा कहि दीजिय, भेदत बाण न छेदत गेंडा।
लालच लागि रह्यो मन बीखर, बारहवाट आठरहें पडा ॥ १०
श्वाने कहूं कि सियार कहूं कि, बिलाड़ कहूं मनकी मति तैसी।
ढेड़ कहूं किधूं डूम कहूं किधूँ, भाँड़ कहूं किधूं भंडइ जैसी।
चोर कहूं वटपार कहूं ठग, जार कहूं उपमा कहूँ कैसी।
सुंदर और कहा कहिये अब, या मनकी गति दीसत ऐसी॥११
कै बेर तूं मन रंक भयो शठ, माँगत भीख दशोदिश डूल्यो।
कै बेर तू मन छत्र धरचो शिर, कामिनि संग हिंडोरन झूल्यो।
कै बेर तू मन छीन भयो अति, कै बेर तू सुख पायके फूल्यो।
सुंदर कै बेर तोहिं कह्यो मन, कौन गली किहि मारग भूल्यो॥१२
इंद्रिनके सुख चाहत है मन, लालच लागि भ्रमै शठ यूंहीं।
देखि मरीचिँ भरचो जल पूरण, धावत है मृग मूरख ज्यूंहीं।
प्रेत पिशाच निशाचर डोलत, भूख मरै नहिं धावत क्यूंहीं।
वायु बघूरहि कौन गहै कर, सुंदर दौरत है मन त्यूंहीं ॥१३
है सबको शिरताज ततक्षण, जो अभिअंतर ज्ञान विचारै।
जो कछु और विषै सुख वंछत, तौ यह देहअमोलक हारै।
छांड़ि कुबुद्धि भजै भगवंतहि, आपु तरै पुनि औरहि तारै।
सुंदर तोहिं कह्यो कितनी बिर, तू मन क्यूं नहिं आपु सँभारै १४
कौन स्वभाव परचो उठि दौरत, अमृत छांड़ि चचोरत हाड़ै।
ज्यूं भ्रमकी हथनी दृग देखत, आतुर होइ परै गज खाड़ै।

१ कुत्ता । २ स्त्री । ३ किर्ण ।

वाद व्रथा भटकै निशि-वासर, एकहु सीख लगी नहिं राँडे ॥
सुंदर तोहि सदा समुझावत, रे मन तूं भ्रमवो किन छाँडे ॥१५॥
जो मन नारिकि ओर निहारत, तौ मन होतहि ताहिकु रूपा ॥
जो मन काहुसुँ क्रोध करै पुनि, तौ मन है तवही तद्रूपो ॥
जो मन मायहि माय रटै नित, तौ मन बूड़त मायके कूपा ॥
सुंदर जो मन ब्रह्म-विचारत, तौ मन होतहि ब्रह्मस्वरूपा ॥१६॥

॥ मनहर छंद ॥

कवहुँक हँसि ऊठे, कवँहुक रोइ देत;
कवहुं वकत कहुँ अंतहू न लहिये ॥
कवहुँक खाइ ढौ अघात नहिं काहूकरि;
कवहुँक कहै मेरे कछु नहिं चहिये ॥
कवहूँ आकाश जाइ कवहूँ पाताल जाइ,
सुंदर कहत ताहि कैसे करि गहिये ॥
कवहुँक आय लगै, कवहुँक उठि भगै;
भूतकेसे चिह्न करै ऐसो मन कहिये ॥ १७ ॥
कवहुं तौ पांखको परेवा के दिखावै मन,
कवहुँक धूरके चावर करि लेत है ॥
कवहूँ तौ गुटिका उछारत आकाश ओर,
कवहूँ तौ राते पीरे रंग श्याम[1] श्वेते[2] है ॥
कवहुँ तौ आंवकूं उगाई करि ठाढ़ो करै,
कवहूँ तो शीश-धर जुदे करि देत है ॥
बाजीगर ख्याल ऐसो सुंदर कहत मन,
सदाही भ्रमत रहै ऐसो कोऊ प्रेत है ॥ १८ ॥
कवहुँक साध होत, कवहुँक चोर होत;
कवहूँक राजा होत, कवहुँक रंक सो ॥

---

१ सदृश । २ सफेद ।

कबहूँक दीन होत, कबहू गुमानी होत ॥
कबहूक सूधो होत, कबहुँक बंक¹ सो ॥
कबहूक कामी होत, कबहुँक यती होत,
कबहू निर्मल होत, कबहुक पंक सों ॥
मनको स्वरूप ऐसो सुंदर फटिक जैसो,
कबहूक शूर होत कबहूँ मयंक² सो ॥ १९ ॥
हार्थीकोसो कान कीधौं पीपरको पात किधौं ।
ध्वजाको उडान कहूं थिर न रहतु है ॥
पानीकोसो घेर किधौं पौन उरझेर किधौं,
चक्रको सो फेर कोउ कैसेके गहतु है ॥
रहटकी माल किधौं चरखाको ख्याल किधौं,
फेरी खाता बाल कछु सुधि न लहतुहै ॥
धूमके सो धाव ताकूं राखवेको चाव ऐसो,
मनको स्वभाव सो तौ सुंदर कहतु है ॥२०॥
सुख मानै दुःख मानै संपत्ति-विपत्ति मानै,
हर्ष मानै शोक मानै मानै रंक धन है ॥
घटि मानै बढ़ि मानै शुभहू अशुभ मानै,
लाभ मानै हानि मानै याहीते कृपण³ है ॥
पाप मानै पुण्य मानै उत्तम-मध्यम मानै,
नीच मानै ऊंच मानै मानै मेरो तन है ॥
स्वर्ग मानै नर्क मानै बंध मानै मोक्ष मानै,
सुंदर सकल मानै ताते नाम मन है ॥ २१ ॥
जोई जोई देखै कछु सोई सोई मन आहि,
जोई जोई सुनै सोई मनहीको भर्म है ॥

---

१ टेढ़ा । २ चन्द्रमा । ३ सूम ।

जोई जोई सूंघै जोई खावै जो संपर्श[1] होइ,
जोई जोई करै सोई मनहीको कर्म है ॥
जोई जोई ग्रहै[2] जोई त्यागै जोई अनुरागै[3],
जहाँ जहाँ जाइ सोई मनहींको श्रम[4] है ॥
जोई जोई कहै सोई सकल सुंदर मन,
जोई जोई कल्पै[5] सोई मनहींको धर्म है ॥२२॥
एकही विटप[6] विश्व ज्यूंको त्यूंही देखियत,
आतिहि सघन ताके पत्र फल फूल है ॥
आगले झरत पात नये नये होत जात,
ऐसे याही तरुको अनादी[7] काल मूल है ॥
दशचारलोक लों पसारि रह्यो जहाँ तहाँ,
अधरु ऊरध पुनि सूक्ष्म[8] रु स्थूल[9] है ॥
कोऊ तौ कहत सत कोऊ तौ कहै असत[10],
सुंदर कहत भ्रमहीको मन मूल है ॥ २३ ॥
तोसों न कुपूत कोऊ कितहूँ न देखियत,
तोसों न सुपूत कोऊ देखियत और है ॥
तूंही आप भूलै महा नीचहूते नीच होइ;
तूंही आप जानै तौ सकलशिरमौर है ॥
तूंही आप भ्रमै तब जगत भ्रमत देखै,
तेरे स्थित भये सब ठौरही को ठौर है ॥
तूंही जीवरूप तूंही ब्रह्म है आकाशवत,
सुंदर कहत मन तेरी सबदौर है ॥ २४ ॥
मनहींके भ्रमते जगत यह पेखियत,
मनहींको भ्रम गये जगत बिलात है ॥

---

१ छूना । २ धारण । ३ प्रेमकरना । ४ परिश्रम । ५ कल्पना फर्ज । ६ वृक्ष । ७ पुरातन । ८ बारीक । ९ मोटा । १० झूठा ।

मनहींको भ्रम जेवरीमें उपजत साँप,
मनके विचारे साँप जेवरी समात है ॥
मनहींके भ्रमते मरीचिकाकूं[1] जल कहै,
मनहींके भ्रम सीपं[2] रूपोसो दिखात है ॥
सुंदर सकल यह दीसै मनहींको भ्रम,
मनहींको भ्रम गये ब्रह्म होइ जात है ॥२५ ॥
मनहीं जगतरूप होइ करि विस्तरचो,
मनहीं अलख[3]रूप जगतसूं न्यारो[4] है ॥
मनहीं सकलघटव्यापक अखंड एक,
मनहीं सकल यह जगत पियारो है ॥
मनहीं आकाशवत[5] हाथ न परत कछु,
मनके न रूपरेख वृद्धिहीन-वारो[6] है ॥
सुंदर कहत परमारथ विचारै जव,
मन मिटि जाइ एक ब्रह्म निज सारो है॥२६॥

इति मनको अंग संपूर्ण ॥ ११ ॥

अथ चाणकको अंग ॥ १२ ॥

मनहर छंद ॥

जोई जोई छूटवेको करत उपाय अज्ञ[7],
सोई सोई दृढ़करि बंधन परतु है ॥
योगयज्ञ जप तप तीरथव्रतादि और,
जंपापात लेत जाइ हिमाले गरतु है ॥
कानहु फराई पुनि केशहु लुंचाई अंग,
विभूति लगाई शिर जटाहू धरतु है ॥

१ सूर्य्यरश्मि । २ सितूहा । ३ अदृश्य । ४ अलग । ५ शून्यवत
६ घटना-बढना । ७ मूर्ख ।

विन ज्ञान पाय नहिं छूटत हृदयग्रंथी,
सुंदर कहत यूंही भ्रमिके मरतु है ॥१॥

सर्व लघुअक्षर ॥

जप तप करत धरत व्रत जत सत,मन वच क्रम भ्रम कसट सहत तन॥
वलकल वसन[१] अशन[२] फल पत्र जल,कसत रसन[३] रस तजत वसत वन ॥
जरत मरत नर गरत परत सर,कहत लहत हय[४] गज[५] दल[६] वल घन॥
पचत पचत भव भय न टरत शठ,घट घट प्रगट रहत न लखत जन २॥

पूर्ववत् ॥

योग करै यज्ञ करै वेद विधि त्याग करै;
जप करै तप करै यूंही आयु[७] खूटि[८] है ॥
यम करै नेम करै तीरथहु व्रत करै,
पुहुमी[९] अटन[१०] करै वृथा श्वास टूटि है ॥
जीवेको यतन[११] करै मनमें वासना धरै,
पचि पचि यूंही मरै काल शिर खूटि है ॥
औरहू अनेकविधि कोटिक उपाय करै,
सुंदर कहत विन ज्ञान नहीं छूटि है ॥ ३ ॥
बुद्धिकरि हीननर रजे[१२] तम छाय रह्यो,
वन वन फिरत उदास होइ घरते ॥
कठिनतपस्या धरि मेघ शीत घाम सहै,
कंद मूल खाइ कोऊ कामनाके डरते ॥
अतिहि अज्ञान उर विविधउपाय करै,
निजरूप भूलिके बँधत जाइ परते ॥

---

१ वस्त्र । २ भोजन । ३ जीभ । ४ घोड़ा । ५ हाथी । ६ सैना । ७ उमर । ८ खतम होना । ९ पृथ्वी । १० घूमना । ११ उपाय । १२ रजोगुण तमोगुण ।

सुंदर कहत औंधी ओर कैसे दीखै मुख,
हाथमाहिं आरसी[1] न फेरै मूढ़[2] करते ॥ ४ ॥
मेघ सहै शीत सहै शीशपर घाम सहै,
कठिन[3] तपस्या करि कंद मूल खात है ॥
योग करै यज्ञ करै तीरथ रु व्रत करै,
पुण्य नानाविधि करै मनमें सुहात है ॥
और देवी देवता उपासना अनेक करै,
आंबनकी हौंस कैसे आक डोडे जात है ॥
सुंदर कहत एक रविके[4] प्रकाश विनु,
जेंगनोंकी[5] ज्योति कहा रजनी[6] विलात है ॥ ५ ॥
कोइ फिरै नागे पायँ गुदरी बनायकरि,
देहकी दशा दिखाइ आइ लोक धूत्यो है ॥
कोई दूधाहारी होइ कोई फलाहारी होइ,
कोई अधोमुख झूलै झूलि धूंम घूत्यो है ॥
कोई नहिं खाए लौणे कोई मुख गहै मौनं,
सुंदर कहत यूंहीं वृथा भूस कूत्यो है ॥
प्रभुसूं तौ प्रीति नाहिं ज्ञानसूं परिचै नाहिं॥
देखो भाई आंधरेने ज्यूं बजार लूत्यो है ॥ ६ ॥

इंदव छंद ॥

आसन मारि सवाँरि जटा नख, उज्ज्वल अंग विभूति चढ़ाई ॥
या हमकूं कछु देहि दया करि, घेरि रहैं बहु लोग लुगाई ॥
कोउक उत्तम भोजन ल्यावत, कोउक ल्यावत पान मिठाई ॥
सुंदर लेकरि जात भयो सब, मूरखलोकनि या विधि पाई ॥ ७ ॥

---

१ आईना । २ मूर्ख । ३ कठोर । ४ सूर्य्य । ५ जुगुनू । ६ रात । ७ शिरनीचे करना । ८ धूयाँ । ९ नमक । १० मुखसे कछु न बोलना ।

ऊरधं पाय अधोमुख ह्वै करि, घूटत धूमहि देह झुलावै ॥
मेघहु शीतहु घाम सहे शिर, तीनहु काल महादुख पावै ॥
हाथ कछू न परै कबहूं कण, मूरख कूकस कूटि उड़ावै ॥
सुंदर वंछि विषैसुखकूं घर, बूड़त है अरु झांझ ले गावै ॥ ८ ॥
गेहं तज्यो पुनि नेहं तज्यो पुनि, खेहं लगाइ जु देह सँवारी ॥
मेघ सहै शिर शीत सहै तन, धूप समै जु पँचागिनि बारी ॥
भूख सहै रहि रूख तरै पर, सुंदरदास सहै दुख भारी ॥
डासन छाँड़ि जु कासन ऊपर, आसन मारि पै आश न मारी ॥ ९ ॥
जो कुछु कष्ट करै बहु भाँतिनि, जात अज्ञान नहीं मन केरो ॥
ज्यूं तमं पूरि रह्यो घर भीतर, कैसहु दूर न होय अँधेरो ॥
लाठिनि मारिय ठेलि निकारिय, और उपाय करे बहुतेरो ॥
सुंदर शूल प्रकाश भयो तब, तौ कितहू नहिं देखिय नेरो ॥ १० ॥
धार बह्यो बड़ धारि रह्यो जल, धार सह्यो गिरि धार गरचो है ॥
भार सँच्यो धन भारतमें कर, भार लह्यो शिर भार परचो है ॥
भार तप्यो वहि मार गयो यम, मार दई मन तौ न मरचो है ॥
सार तज्यो षटसार परचो कहि, सुंदर कारज कौन सरचो है ॥ ११ ॥
कोउ भया पय पान करै नित, कोउक खातहि अन्न अलौना ॥
कोउक कष्ट करै निशि वासर, कोउक बैठि जु साधत पौना ॥
कोउक वाद विवाद करै अति, कोउक धारि रहै सुख मौना ॥
सुंदर एक अज्ञान गये बिनु, सिद्ध भये नहिं दीसत कौना ॥ १२ ॥

सवैया छंद ॥

कोउक अंग विभूति लगावत, कोउक होत निराट दिगंबरं ॥
कोउक सेत कषायक वोढत, कोउक काथ रँगै बहु अंबरं ॥

---

१ ऊपर । २ भुस्सी । ३ एक बाजेका नामहै । ४ घर । ५ स्नेह । ६ भस्म । ७ अंधकार । ८ पहाड़ । ९ नग्न । १० वस्त्र ।

कोउक वल्कल[1] शीश जटा नख, कोउक वोढत है जु वघंबर ॥
सुंदर एक अज्ञान गये बिनु, ए सब दीसत आहि अडंबर[2]॥१३॥

इंदव छंद ॥

कोउक जात प्रयाग बनारस, कोउ गया जगनाथहि धावै ॥
को मथुरा बदरी हरिद्वार सु, कोउ गँगा कुरुक्षेत्र नहावै ॥
कोउक पुष्कर ह्वै पंचतीरथ, दौरिहि दौरि जु द्वारका आवै ॥
सुंदर वित्त[3] गड्यो घरमांहि सु, बाहिर ढूंढ़त क्यूं करि पावै ॥१४॥
आगे कछू नहिं हाथ परचो पुनि, पीछे बहारि गयो निज भौना ॥
ज्यूं कोइ कामिनि कंतहि मारि, चली सँग औरहि देखि सलौनैं[4] ॥
सोउ गयो तजिके ततकाल कहै, न बनै जु रही मुख मौना ॥
तैसहि सुंदर ज्ञान विना घरछांड़ि, भये नर भांड़के दौना ॥ १५ ॥
ज्यूं कोउ कोश कव्यो नहिं मारग, तेलकले घरमें पशु जोए ॥
ज्यूं बनियां गयु वीसके तीसकुँ, बीसहुमें दशहू नाहिं होए ॥
ज्यूं कोउ चौबा छबेकूँ चल्यो पुनि, होइ दुबे दुइ गांठके खोए ॥
तैसहि सुंदर और क्रिया सब, राम बिना निहचै नर रोए॥१६॥
ज्यूं कोउ राम बिना नर मूरख, औरानिके गुण जीभ भनैगी ॥
आन क्रिया गढ़के गड़वा पुनि, होतहि बेरे कछू न बनैगी ॥
ज्यूं हथ फेरि दिखावत चांवर, अंत तु धूरिकि धूरि छिनैगी ॥
सुंदर भूल भई अतिशै करि, सूतेकि भैंस पाँड़ाहि जनैगी॥१७॥
होइ उदास विचार बिना नर, गेह तज्यो वन जाइ रह्यो है ॥
अंबर छांड़ि बघंबर ले करिके, तपको तन कष्ट सह्यो है ॥
आसन मारि सुआसन ह्वै मुख, मौन गही मन तौ न गह्यो है ॥
सुंदर कौन कुबुद्धि लगी कहि, या भवसागर माहिं बह्यो है॥१८॥

---

१ भोजपत्र । २ पाषंड । ३ धन । ४ नमकीन । ५ व्यायगी ।

भेष धर्‌यो परि भेद न जानत, भेद लहै बिन खेदहि पैहैं ॥
भूखहि मारत नींद निवारत, अन्न तजै फल पत्र न खैहैं ॥
और उपाय अनेक करै पुनि, ता हित हाथ कछू नहिं ऐहैं ॥
या नर देह वृथा शठ खोवत, सुंदर राम बिना पछतैहैं ॥ १९ ॥
आपन आपन थान मुकाम सराहनकूं सब भाँति भली है ॥
यज्ञ व्रतादिक तीरथ दान, पुरान कथा जु अनेक चली है ॥
कोटिक और उपाय जहांलगि, ते सुनिके नर-बुद्धि छली है ॥
सुंदर ज्ञान बिना न कहूं सुख, भूलनकी बहुभाँति गली है॥२०॥
कोउक चाहत पुत्र धनादिक, कोउक चाहत बांझ जनायो ॥
कोउक चाहत धातु रसादिक, कोउक चाहत पार दिखायो ॥
कोउक चाहत यंत्रनि मंत्रनि, कोउक चाहत रोग गमायो ॥
सुंदर राम बिना सबही भ्रम, देखहु या जग यूं डहँकायो॥२१॥
काहेकुं तूं नर वेष बनावत, काहेकुं तूं दशहू दिश डूलै ॥
काहेकुं तूं तनु कष्ट करै अति, काहेकुं तूं मुखतै कहि फूलै ॥
काहेकुं और उपाय करै अब, आन क्रि[illegible] करके मत भूलै ॥
सुंदर एक भजै भगवंतहि, तौ सुख[illegible]गरमें नित झूलै॥२२॥

इति चाणकको अंग संपूर्ण ॥ १२ ॥

अथ विपरीतज्ञानको अंग ॥ १३ ॥

मनहर छंद ॥

एकब्रह्म मुखसूं बनायकरि कहत है,
अंतःकरण तौ विकार[1]नसूं भर्‌यो है ॥
जैसे ठग[7] गोबरको कूपो भरि राखत है,
सेरपंचघृत[8] लेकै ऊपर ज्यूं कर्‌यो है ॥

---

१ क्लेश । २ पात । संदेह । ४ कार्य्य । ५ हृदय । ६ अलाबला । ७ धूर्त्त । ८ घी।

जैसे कोई भांडेमाहिं प्याजकूं छिपाय राखै,
चीथिरा कपूरको ले मुख बाँधि धरयो है ॥
सुंदर कहत ऐसे ज्ञानी हैं जगत मांहि.
तिनकूं तौ देखि करि मेरो मन डरयो है ॥ १ ॥
देहसूं ममत्व[1] पुनि गेहसूं ममत्व सुत[2],
दारासूं[3] ममत्व मन मायामें रहतु है ॥
थिरता न लहै जैसे कंदुक[4] चौगानमाँहि[5],
कर्मनिके वश मारयो धकाकूं बहतु है ॥
अंतहकरण सदा जगतसूं रचि रह्यो,
मुखसूं बनाय बात ब्रह्मकी कहतु है ॥
सुंदर अधिक मोहिं याहिते अचंभो आहि,
भूमिपर परयो कोउ चंदकूं गहतु है ॥ २ ॥
मुखसूं कहत ज्ञान, भ्रमै मन इंद्रि प्रान,
मारगके जलमें न प्रतिबिंब[6] लहिये ॥
गांठमें न पैसा कोउ भयो रहै साहुकार,
वाणिनमें मुहर रुपैया गिनि लहिये ॥
स्वपनेमें पंचामृत जीमके तृपत भयो,
जागेतें मरत भूख खायवेकूं चहिये ॥
सुंदर सुभट[7] जैसे कायर[8] मारत गाल,
राजा भोज सम कहा गंगूतेली कहिये ॥ ३ ॥
संसारके सुखनिसूं आशक्त अनेकविधि,
इंद्रिहु लोलुप[9] मन. कबहुँ न गह्यो है ॥
कहत है ऐसे मैं तौ एक ब्रह्म जानत हूं,

---

१ ममता । २ लड़का । ३ स्त्री । ४ गेंद । ५ मैदान । ६ छाया । ७ बहादुर । ८ कादर । ९ लबार । चुगलखोर ।

ताहिते छोड़िके शुभकर्मनते रह्यो है ॥
ब्रह्मकी न प्राप्ति पुनि कर्म सब छूटि गये,
दोउनते भ्रष्ट होइ अधंविच बह्यो है ॥
सुंदर कहत ताहि त्यागिये श्वंपच जैसे,
याहि भांति ग्रंथमें वसिष्ठजीहू कह्यो है ॥ ४ ॥
ज्ञानीकीसी बात कहै मन तौ मलिन रहै,
वासना अनेक भरि, नेकु न निवारी है ॥
जैसे कोउ आभूषणं अधिक बनाइ राखै,
कलई ऊपर करि भीतर भंगारी है ॥
ज्यूंही मन आवै त्यूंही खेलत निशंकं होइ,
ज्ञान सुनि सीखि लियो, ग्रंथ न विचारीहै॥
सुंदर कहत वाके अटक न कोउ आहि,
जोई वासूं मिलै जाइ ताहीकूं बिगारी है ॥ ५ ॥
हंस श्वेत बकं श्वेत देखिये समान दोउ,
हंस मोती चुगै बक मछरीकूं खात है ॥
पिंक अरु काक दोउ कैसेकरि जाने जाइँ,
पिक अंबडारि काक करंकहि जात है ॥
सैंधौ अरु फटिंकं पषाणसम देखियत,
वह तौ कठौर वह जलमें समात है ॥
सुंदर कहत ज्ञानी बाहिरभीतर शुद्ध,
ताकी पटंतर और बातनि की बात है ॥ ६ ॥

इति विपरीतज्ञानको अंग संपूर्ण ॥ १३ ॥

---

१ नष्ट २ । नरक लहर । ३ डोम । ४ कामना । ५ गहना । ६ निडर । ७ बकुला । ८ कोयल । ९ कौवा । १० घूर । ११ स्फटिकमणि । १२ उपमा ।

अथ वचनविवेकको अंग ॥ १४ ॥

मनहर छंद ॥

जाके घर ताजी तुरकिनको तबेलो बाँध्यो,
ताके आगे फेरि फेरि टट्टुवा दिखाइये ॥
जाके खासा मलमल साफनेके ढेर परे,
ताके आगे आनि करि चौसई[1] रखाइये ॥
जाके पंचामृत खात खात सब दिन बीते,
सुंदर कहत ताहि राबरी चखाइये ॥
चतुर प्रवीण आगे मूरख उच्चार करै,
सूरजके आगे जैसे जगनो[2] लखाइये ॥ १ ॥
एक वाणी रूपवंत भूषण बसन अंग,
अधिक विराजमान कहियत ऐसी है ॥
एक वाणी फाटे टूटे अंबर उढ़ाय आनि,
ताहुमाहिँ विपरीत[3] सुनियत जैसी है ॥
एक वाणी मृतक[4]सी बहुत शृंगार किये,
लोकनिकूं नीकी लगै संतनिकूं भय[5]सी है ॥
सुंदर कहत वाणी त्रिविध जगतमाहिँ,
जानै कोई चतुर प्रवीण जाकी जैसी है ॥ २ ॥
राजाको कुँवर जो सुरूप कै कुरूप होइ,
ताकूं तौ शलाम करि गोदं[6] ले खेलाइये ॥
और कोउ रैतको सुरूप होइ शोभनीक[7],

१ टसर । २ जुगनू-खद्योत । ३ उलटा । ४ मुर्दा । ५ डर
६ लंक । ७ सुहावना ।

ताहूकूं तौ देखि करि निकट बुलाइये ॥
काहुको कुरूप कारो कूबरो है अंगहीन,
वाकी ओर देखि देखि माथोही हलाइये ॥
सुंदर कहत वाके बापहीको प्यारो होइ,
यूंही जानि वाणीको विवेक ऐसे पाइये ॥ ३॥
बोलिये तौ तब जब बोलवेकी शुद्धि होइ,
न तौ मुख मौन गहि चुप होइ रहिये ॥
जोरिये तौ तब जब जोरवेकी जान परै,
तुक छंद अरथ अनूप जामें लहिये ॥
गाइये तौ तब जब गायवेको कंठ होइ,
श्रवणके सुनतही मन जाइ गहिये ॥
तुक भंग छंद भंग अरथ न मिलै कछु,
सुंदर कहत ऐसी वाणी नहिं कहिये ॥४॥
एकनिके वचन सुनत अतिसुख होइ,
फूलसे झरत हैं अधिक मनभावने ॥
एकनिके वचन तौ अंसि मानौ वरषत,
श्रवणके सुनत लगत अलखावने ॥
एकनिके वचन कटुक कडु विषरूप,
करत मरम छेद दुःख उपजावने ॥
सुंदर कहत घट घटमें वचन भेद,
उत्तम मध्यम अरु अधम सुहावने ॥ ५ ॥
काक अरु रासभ उलूक जब बोलत हैं,
तिनके तौ वचन सुहात कहु कौनकूं ॥
कोकिला रु सारी पुनि सूवा जब बोलत हैं,
सब कोउ कान दे सुनत रव रौनकूं ॥

१ ज्ञान । २ कृपाण । ३ तिक्त । ४ गर्दभ । घूघू ।

ताहिते सुवचन विवेककरि बोलिये ज्यु,
यूंही आकबाक बकि तोरिये न पौनकूं ॥
सुंदर समुझि ऐसे वचन उच्चार करौ,
नहिं तौ समुझिकरि बैठौ गहि मौनकूं॥६॥
प्रथम हिये विचार ढींमसो न दीजै डार,
ताहिते सुवचन सँभारिकरि बोलिये ॥
जानै न कुहेत हेत भावै तैसी कही देत,
कहिये सु तब जब मनमाहिं तोलिये ॥
सबहीकूं लागै दुःख कोउ नहीं पावै सुख,
बोलिके वृथाही ताते छाती नहिं छोलिये ॥
सुंदर समुझिकरि कहिये सरस[1] बात,
तबहीं तौ वदन कपाट[2] गहि खोलिये ॥७॥
और तौ वचन ऐसे बोलत हैं पशु जैसे,
तिनके तौ बोलवेमें ढंगहूं न एक है ॥
कोऊ रात दिवस बकतही रहत ऐसे,
जैसी विधि कूपमें बकत मानौ भेक[3] है ॥
विविध प्रकार करि बोलत जगत सब,
घट घट प्रतिमुख वचन अनेक है ॥
सुंदर कहत ताते वचन विचारि लेहु,
वचन तौ वहै जामें पाइये विवेक है ॥ ८ ॥
जैसे हंस नीर[4]कूं तजत है असार[5] जानि,
सार जानि क्षीर[6]कूं निरालो करि पीजिये ॥
जैसे दधि मथत मथत काढ़ि लेत घृत,

१ रसीली–श्रेष्ठ । २ किँवाड़ । ३ मेढक । ४ पानी । ५ निरस । ६ दूध

और रही वही सब छाँछ छांड़ि दीजिये ॥
जैसे मधुमक्षिका सुवासकूं भ्रमर[1] लेत,
तैसेही विचारकरि भिन्न भिन्न कीजिये ॥
सुंदर कहत ताते वचन अनेकभाँति,
वचनमें वचन विवेक करि लीजिये ॥ ९ ॥
प्रथमही गुरुदेव मुखते उच्चार करचो,
वेई तौ वचन आय लगे निज हिये हैं ॥
तिनको विवेक करि अंतहकरण माहिं,
अतिहि अमोलनग भिन्न भिन्न किये हैं ॥
आपको दरिद्र गयो परउपकार हेत,
नगही निगलिके उगलि नग लिये हैं ॥
सुंदर कहत यह वाणी यूं प्रगट भई,
और कोई सुनि करि रंक जीव जिये हैं ॥१०॥
वचनते दूर मिलै वचन विरोध[2] होइ ॥
वचनते राग बढ़ै वचनते दोष जू ॥
वचनते ज्वाल[3] उठै वचन शीतल होइ,
वचनते मुदित वचनहीते रोष जू ॥
वचनते प्यारो लगै वचनते दूर भगै,
वचनते मरिजाइ वचनते पोष जू ॥
सुंदर कहत यह वचनको भेद ऐसो,
वचनते बंध होत वचनते मोष जू ॥ ११ ॥
वचनते गुरु शिष्य बाप पूत प्यारो होइ
वचनते बहुविधि होत उतपात है ॥

---

१ भवँरा। २ लड़ाई। ३ अग्निकी लू। ४ प्रसन्न।

वचनते नारी अरु पुरुष सनेहि अति,
वचनते दोउ आप आपमें रिसात है ॥
वचनते सब आइ राजाके हुजूर होइँ,
वचनते चाकरहू छोड़िके पलात है ॥
सुंदर सुवचन सुनत अतिसुख होइ,
कुवचन सुनतहि प्रीति घटि जात है ॥ १२ ॥
एक तौ वचन सुनि कर्महिमें वहिजाय,
करत बहुतविधि स्वर्गकी उमेद[1] है ॥
एक है वचन दृढ़ ईश्वर उपासनाके[2],
तिनमें तौ सकलही वासनाको छेद है ॥
एक है वचन तामें एकही अखंडब्रह्म,
सुंदर कहत यूं बतावै अंतवेद है ॥
वचन तौ अनेक प्रकार सब देखियत,
वचनविवेक किये वचनमें भेद है ॥ १३ ॥
वचनते योग करै वचनते यज्ञ करै,
वचनते तप करि देहकूं दहतु है ॥
वचनते बंधन करत है अनेक विधि,
वचनते त्याग करि वचन रहतु है ॥
वचनते उरझे रु सुरझै वचनहूते,
वचनते भाँति भाँति शंकट सहतु है ॥
वचनते जीव भयो वचनते शिव होइ,
सुंदर वचनभेद वेद यूं कहतु है ॥ १४ ॥

इति वचनविवेकको अंग संपूर्ण ॥ १४ ॥

---

१ भागना । २ भजन-ध्यान ।

अथ निर्गुणउपासनाको अंग ॥ १५ ॥

इंदव छंद ॥

ब्रह्म कुलाल रचै बहु भाजन, कर्मनिके वश मोहिं न भावै ॥
विष्णुहि शंकट आय सहै प्रभ, काहुक रक्षक काहु सतावै ॥
शंकर भूत पिशाचनिको पति, पाणि कपाल लिये बिललावै ॥
या हित सुंदर त्रीगुण त्यागि सु, निर्गुण एक निरंजन ध्यावै ॥१॥

सवैया छंद ॥

कोटिक बात बनाय कहैं कहाँ, होत भये सबही मन रंजनें ॥
शास्त्र सुस्मृति रु वेद पुराण, बखानत हैं अति लायके अंजन॥
पानिमें बूड़त पानि गहै कित, पार पहूंचत हैं मति भंजनें ॥
सुंदर तहांलमि अंधकि जेवरि, जौलुं न ध्याइय एक निरंजन॥२॥

इंदव छंद ॥

मंजन सो जु मनो मल मंजन, सज्जन सो जु कहै गति गूझे ॥
गंजन सो जु इंद्री गहि गंजन, रंजन सो जु बुझावे अबूझे ॥
भंजन सो जु भरचो रसमांहि, विद्वज्जन सो कितहूं न अरूझे ॥
व्यंजन सो जु बढ़ै रुचि सुंदर, अंजन सो जु निरंजन सूझे ॥३॥
जा प्रभुते उतपत्ति भई यह, सो प्रभु हैं उर इष्ट हमारे ॥
जो प्रभु है सबके शिर ऊपर, ता प्रभुकूं शिरही हम धारे ॥
रूप न रेख अलेख अखंडित, भिंन्न रहै सब कारज सारे ॥
नाम निरंजन है तिनको पुनि, सुंदर ता प्रभु की बलिहारे ॥ ४ ॥

---

१ हाथपर कपार रखके । २ रोवे । ३ सतोगुण–रजोगुण–तमोगुण । ४ मनको प्रसन्न करनेवाला । ५ धर्म शास्त्र । ६ तोड़ना । ७ भोजन । ८ अलग ।

जो उपजै विनशै गुणधारत, सो यह जानहु अंजन माया
आव न जाय मरै नाहिं जीवत, अच्युत एक निरंजन राया
ज्यूं तरु तत्त्व रहै रस एकाहि, आवत जात फिरै यह छाया
सो परब्रह्म सदा शिर ऊपर, सुंदर ता प्रभुसूं मन लाया॥ ५
जो उपज्यो कछु आहि जहांलग, सो सब नाश निरंतर होई।
रूप धरचो सु रहै नहिं निश्चल, तीनहु लोक गिनै कहाँ कोई।
राजस तामस सात्त्विक जे गुण, देखत काल ग्रसै पुनि वोई।
आपहि एक रहै जु निरंतर, सुंदरके मन मानत सोई ॥ ६।
देवनिके शिर देव विराजित, ईश्वरके शिर ईश्वर कैये।
लालनिके शिर लाल निरंतर, खूबनिके शिर खूबहि लैये।
पाकनिके शिर पाक शिरोमणि, देखि विचार उहै दृढ़ गैये।
सुंदर एक सदा शिर ऊपर, और कछू हमकूं नाहिं चैये ॥ ७
शेष महेश गणेश जहाँलगि, विष्णु विरंचिहुके शिर स्वामी।
व्यापक ब्रह्म अखंड अनाव्रत, बाहर भीतर अंतरजामी।
वोर न छोर अनंत कहे गुण, या हित सुंदर है घन नामी।
ऐसु प्रभू जिनके शिर ऊपर, क्यूं परिहै तिनकूं काहि स्वामी ॥८

इति निर्गुणउपासनाको अंग संपूर्ण ॥ १५ ॥

अथ पतिव्रताको अंग ॥ १६ ॥

मनहर छंद ॥

आनकि वोर निहारतही जस, जात पतिव्रत एक वृतीको।
होत अनादर ऐसिहि भांति जु, पीछे फिरे नाहिं शूर सतीको।
नेकहिमें हरवो हुइ जात खिसै, अध विंदु जु योग यतीको।

१ जो अपने नियमोंसे न हटे-परमेश्वर।

राम ह्वैते गये जन सुंदर, एक रती बिन पाव रतीको ॥१॥
जो हरिकूं तजि आन उपासत, सो मतिमंद फजीतहि होई ॥
ज्यूं अपने भरतारहि छाँड़ि भई, व्यभिचारिणिकामिनि कोई ॥
सुंदर ताहि न आदर मान, फिरै बिमुखी अपनी पतँ खोई ॥
बूड़ि मरै किन कूप मँझार कहा, जगजीवत है शठ सोई ॥ २ ॥
होइ अनन्यँ भजै भगवंतहि, और कछू उरमें नहिं राखै ॥
देवि रु देव जहाँलग हैं डरके, तिनसूं वहि दीनें न भाखै ॥
योगहु यज्ञ व्रतादि क्रिया तिनको, तु नहीं स्वपने अभिलाखै ॥
सुंदर अमृतपान कियो तब, तौ कहु कौन हलाहलँ चाखै ॥३॥
एक सही सबके उर अंतर, ता प्रभुकूं कहु काहि न गावै ॥
शंकटमाहिं सहाय करै पुनि, सो अपनी पति क्यूं बिसरावै ॥
चारपदारथ और जहाँलगि, आठहु सिद्धि नवैंनिधि पावै ॥
सुंदर छार परौ तिनके मुख, जो हरिकूं ताजि आनकुँ ध्यावे ॥४॥
पूरणकाम सदा सुखधाम नि-,रंजन राम सिरज्जनहारो ॥
सेवक होइ रह्यो सबको नित, कीटहि कुंजर देत अहारो ॥
भंजनदुःख दरिद्रनिवारण, चिंत करै पुनि साँझसवारो ॥
ऐसे प्रभू तजि आन उपासत, सुंदर है तिनको मुखकारो ॥५॥

मनहर छंद ॥

पतिहीसूं प्रेम होइ, पतिहीसूं नेम होइ;
पतिहीसूं क्षेम होइ, पतिहीसूं रत है ॥
पतिही है यज्ञ योग, पतिही है रस भोग;
पतिहीसूं मिटै सोग, पतिहीको यत है ॥
पतिही है ज्ञान ध्यान, पतिही है पुण्य दान;
पतिही है तीर्थ स्नान, पतिहीको मत है ॥

---

१ पुंश्चली । २ बहिर्मुख । ३ प्रतिष्ठा । ४ एक । ५ दुःखी । ६ विष ।

पति बिनु पत नाहीं, पति बिनु गत नाहीं;
सुंदर सकलविधि, एक पतिव्रत है ॥ ६ ॥
जलको सनेही मीन, बिछुरत तजै प्रान,
मणि बिनु अहि जैसे, जीवत न लहिये ॥
स्वाति-बिंदुको सनेही, प्रगट जगतमाहिं;
एक सीप दूसरो सु, चातकहु कहिये ॥
रविको सनेही पुनि, कमल सरोवरमें;
शशिको सनेही हू, चकोर जैसे रहिये ॥
तैसेही सुंदर एक, प्रभुसूं सनेह जोर;
और कछु देखि काहु-वोर नहीं बहिये ॥ ७ ॥

॥ इति पतिव्रताको अंग संपूर्ण ॥ १६ ॥

अथ विरह उराहनेको अंग ॥ १७ ॥

मनहर छंद ॥

पीयको अँदेशो भारी, तोसूं कहूं सुन प्यारी;
यारी तोरि गये सो तौ, अजहुँ न आए हैं ॥
मेरे तौ जीवनप्राण, निशि दिन उहै ध्यान;
मुखसूं न कहूं आन, नैन उर लाए हैं ॥
जबते गए बिछोहि[2], कल न परत मोहिं;
तातें हूं पूछत तोहि, किन विरमाएँ है ॥
सुंदर विरहनीको, शोचसखी वार वार;

१ प्रीति । २ अलग-दर्द-छोंड । ३ ठहरायेहैं ।

हमकूं बिसार अब, कौनके कहाए हैं ॥ १ ॥
हमकूं तौ रैन दिन, शंक मनमाहिं रहै,
उनकी तौ बातनिमें, ढंगहु न पाइये ॥
कबहूं सँदेशा सुनि, अधिकउछाहैं होइ;
कबहुँक रोइ रोइ, आंशुन बहाइये ॥
औरनके रस वश, होइ रहे प्यारेलाल;
आवनकी कही कही, हमकूं सुनाइये ॥
सुंदर कहत ताहि, काटिये सु कौन भाँति,
जोइ तरु आपने सु, हाथते लगाइये ॥ २ ॥
मोसूं कहै औरसीही, वासूं कहै औरसीही,
जाकूं कहै ताहीके, प्रतीत कैसे होत है ॥
काहूंसूं समासैं करै, काहूंसूं उदास फिरै;
काहूसूं तौ रसवश, एकमेक पोत है ॥
दग़ावाजी दुवधा तौ मनकी न दूर होइ;
काहूके अँधेरो घर, काहूके उँद्योत है ॥
सुंदर कहत जाके, पीर सो करै पुकार;
जाके दुःख दूर गये, ताको भई वोत है ॥ ३ ॥
हिये और जिये और, लिये और दिये और;
किये और कौन सु, अनूपपाटी पढ़े हैं ॥
मुख और वैन और, नैन और तन और;
मन और काया सब, यंत्रमाहिं कढ़े हैं ॥
हाथ और पावँ और, शीशहू श्रवण और;
नख शिख रोम रोम, कलईसूं मढ़े हैं ॥
ऐसी तौ कठोरता न, सुनी नहिं देखी जग,

---

१ वियोगनी नारि—जो पतिके प्रेममें व्याकुलहो । २ प्रसन्नता । ३ मिलाप । ४ उजेला—प्रकाश ।

सुंदर कहत कोइ, ब्रह्महीके गढ़े हैं ॥ ४ ॥

इति विरहउराहनेको अंग संपूर्ण ॥ १७ ॥

अथ शब्दसारको अंग ॥ १८ ॥

मनहर छंद ॥

भूल्यो फिरै भ्रमते कहत कछु और और,
करत न ताप दूरि, करत संताप[1]कूं ॥
दक्ष[2] भयो रहै पुनि, दक्षप्रजापति जैसे;
देत पर[3]दीक्षणा न, दीक्षा देत आपकूं ॥
सुंदर कहत ऐसे, जामें न युगति कछु,
और जाप जपै न जपत निजजापकूं ॥
बाल भयो ज्वान भयो, वय वीते वृद्ध भयो;
बपु[4]रूप होइके विसरि गयो आपकूं ॥ १ ॥

इंदव छंद ॥

पान उहे जु पियूंष[5] पिवै नित, दान उहै जु दरिद्रहि भानै[6] ॥
कान उहै सुनिये यश केशव, मान उहै करिये सनमानै ॥
तान उहै सुरतान रिझावत, जान उहै जगदीशहि जानै ॥
बान उहै मन वेधत सुंदर, ज्ञान उहै उपजै न अज्ञानै ॥२॥
शूर उहै मनको वश राखत, कूर उहै मनमांहिं लजै है ॥
त्याग उहै अनुराग नहीं कहुँ, भाग उहै मनमोह तजै है ॥
तज्ञ[7] उहै निज तत्त्वहि जानत, यज्ञ उहै जगदीश यजै है ॥
रत्त[8] उहै हरिसूं रति सुंदर, भक्त उहै भगवंत भजै है ॥ ३ ॥

१ पश्चाताप-दुःख । २ प्रवीण । ३ पर उपदेश । ४ परमेश्वर-शरीर । ५ सुधा । ६ नाश । ७ बुद्धिमान । ८ प्रेमी ।

चापै उहै कसिये रिपु ऊपर, दौंप उहै दलकारहि मारै ॥
छाप उहै हरि आप दई शिर, थाप उहै थपि और न धारै ॥
जाप उहै जपिये अजपा नित, व्याप उहै निजव्याप विचारै ॥
बाप उहै सबको प्रभु सुंदर, पाप हरै अरु ताप निवारै ॥४॥
भौंन उहै भय नाहिं न जामहिं, गौन उहै फिरि होइ न गौना ॥
वौन उहै वमिये विषयारस, रौन उहै प्रभुसूं नहिं रौना ॥
मौन उहै जु लिये हरि बोलत, लौन उहै सब और अलौना ॥
स्रौन उहै गुरु संत मिलै जब, सुंदर शंक रहै नहिं कौना॥५॥
कार उहै अविकार रहै नित, सार उहै जु असारहि नाखै ॥
प्रीति उहै जु प्रतीति धरै उर, नीति उहै जु अनीति न भाखै ॥
तंत उहै लगि अंत न टूटत, संत उहै अपनो सँत राखै ॥
नाँद उहै सुनि वाद तजै सब, स्वाद उहै रस सुंदर चाखै॥६॥
श्वास उहै जु उश्वास न छांड़त, नाश उहै फिरि होइ न नाशा ॥
पाप उहै सतपास लगै जम पास, कटै प्रभुके नित पासा ॥
वास उहै गृहवास तजै वनवास, सही तिहि ठोहर वासा ॥
दास उहै जु उदास रहै, हरिदास सदा कहि सुंदरदासा ॥ ७ ॥
श्रोत्रे उहै श्रुतिसारं सुनै अरु, नैन उहै निजरूप निहारै ॥
नाक उहै हरि नाकहि राखत, जीभ उहै जगदीश उचारै ॥
हाथ उहै करिये हरिको कृत, पावँ उहै प्रभुके पथ धारै ॥
शीश उहै करि श्यामसमर्पण, सुंदर यूं सबकारज सारै ॥ ८ ॥
सोवत सोवत सोइ गयो शठ, रोवत रोवत कै बेर रोयो ॥
गोवत गोवत गोइ धरचो धन, खोवत खोवत तैं सब खोयो ॥
जोवत जोवत बीत गये दिन, बोवत बोवत तैं विष बोयो ॥

---

१ धनुष–शरासन– । २ क्रोध–घमंड । ३ नित्तजपाजाय । ४ गृह–घट । ५ निर्दोष । ६ सत्य–प्रण । ७ शब्द । ८ बाजा । ९ कान । १० वेदका सारांश ।

सुंदर सुंदर राम भज्यो नहिं, ढोवत ढोवत बोझहि ढोयो ॥९॥
देखत देखत देखत मारग, बूझत बूझत बूझत आयो ॥
सूझत सूझत सूझ परी सब, गावत गावत गोविंद गायो ॥
साधत साधत साध भयो पुनि, तावत तावत कंचन तायो ॥
जागत जागत जागि परयो जब, सुंदर सुंदर सुंदर पायो ॥१०॥

इति शब्दसारको अंग संपूर्ण ॥ १८ ॥

अथ भक्तिज्ञानमिश्रितको अंग ॥ १९ ॥

इंदव छंद ॥

बैठत रामहि ऊठत रामहि, बोलत रामहि राम रह्यो है ॥
खावत रामहि पीवत रामहि, धामहि रामहि राम गह्यो है ॥
जागत रामहि सोवत रामहि, जोवत रामहि राम लह्यो है ॥
देतहु रामहि लेतहु रामहि, सुंदर रामहि राम रह्यो है ॥१॥
श्रोत्रहु रामहि नेत्रहु रामहि, वक्तृहु रामहि रामहि गाजै ॥
शीशहु रामहि हाथहु रामहि, पाँवहु रामहि रामहि छाजै ॥
पेटहु रामहि पीठिहु रामहि, रोमहु रामहि रामहि बाजै ॥
अंतर राम निरंतर रामहि, सुंदर रामहि राम विराजै ॥२॥
भूमिहु रामहि आपहु रामहि, तेजहु रामहि वायुहि रामे ॥
व्योमहु² रामहि चंदहु रामहि, शूरहु³ रामहि शीतहि घामे ॥
आदिहु रामहि अंतहु रामहि, मध्यहु रामहि पुर्ष रु बामे ॥
आजहु रामहि कालहु रामहि, सुंदर रामहि रामहि थामे ॥३॥
देखहु राम अदेखहु रामहि, लेखहु राम अलेखहु रामे ॥
एकहु राम अनेकहु रामहि, शेषहु राम अशेषहु तामे ॥

१ सुवर्ण । २ आकाश-शून्य । ३ सूर्य्यनारायण ।

मौनहु राम अमौनहु रामहि, गौनहु रामहि ठामकुठामे ॥
बाहिर रामहि भीतर रामहि, सुंदर रामहि है जग जामे ॥४॥
दूरहु राम नजीकहु रामहि, देशहु राम प्रदेशहु रामे ॥
पूरब रामहि पश्चिम रामहि, दक्षिण रामहि उत्तर धामे ॥
आगेहु रामहि पीछेहु रामहि, व्यापक रामहिहैं वन ग्रामे ॥
सुंदर राम दशो दिश पूरण, स्वर्गहु राम पतालहु तामे ॥५॥
आपहु राम उपावत रामहि, भंजन राम सँवारन वामे ॥
दृष्टहु राम अदृष्टहु[1] रामहि, इष्टहु राम करै सब कामे ॥
पूर्णहु राम अपूर्णहु रामहि, रक्त[2] न पीत न श्वेत न श्यामे ॥
शून्यहु राम अशून्यहु रामहि, सुंदर रामहि नाम अनामे ॥६॥

इति भक्तिज्ञानमिश्रितको अंग संपूर्ण ॥ १९ ॥

अथ विपर्ययको अंग ॥ २० ॥

सवैया (इकतीस मात्रात्मक) ॥

श्रवणहु देखि सुनै पुनि नयनहु, जिह्वा सुँघै नाशिका[3] बोल ॥
गुदा खाय इंद्रिय जल पीवै, विनही हाथ सुमेरहि[4] तोल ॥
ऊंचे पाव मुंडि नीचेकूं, तीनलोकमें विचरत डोल ॥
सुंदरदास कहै सुन ज्ञानी, भली भाँति या अर्थहि खोल ॥ १ ॥
अंधा तीनलोककूं देखै, बैरा सुनै बहुतविधि नाद ॥
नकटा बास कमलकी लेवै, गुंगा करै बहुत संवाद ॥
ठुंठा पकरि उठावै पर्वत, पंगू करै निरत अल्हादं[5] ॥
जो कोउ याको अर्थ विचारै, सुंदर सोई पावै स्वाद ॥ २ ॥

---

१ अदेख । २ लाल । ३ नाक । ४ पहाड़ । ५ प्रसन्नता ।

कुंजरकूं कीरी गिलि बैठी, सिंहहि खाय अघानो स्याल ॥
मछरी अग्निमाहिं सुख पायो, जलमें बहुत हुती बेहाल ॥
पंगु चढ़्यो पर्वतके ऊपर, मृतकहि देखि डरानो काल ॥
जो को अनुभवि होय सु जानै, सुंदर ऐसा उलटाख्याल॥ ३ ॥
बूंदहिमाहिं समुद्र समानो, राईमाहिं समानो मेर ॥
पानीमाहिं तुंबिका डूबी, पाहन तरत न लागी बेर ॥
तीन लोकमें भया तमासा, सूरज कियो सकल अंधेर ॥
मूरख होय सु अर्थहि पावै, सुंदर कहै शब्दमें फेर ॥ ४ ॥
मछरी बगलाकूं गहि खायो, मूषा खायो कारो-साँप ॥
सूवे पकरि बिलारी खाई, ताके मुवे गयो संताप ॥
बेटी अपनी मैया खाई, बेटे अपनो खायो बाप ॥
सुंदर कहै सुनौ हो संतो, तिनकूं कोउ न लाग्यो पाप ॥ ५ ॥
देवमाहिंते देवल प्रगट्यो, देवलमाहीं प्रगट्यो देव ॥
शिष्य गुरुहि उपदेशन लाग्यो, राजा करै रंककी सेव ॥
वंध्यापुत्र पंगु इक जायो, ताकूं घर खोवनकी टेव ॥
सुंदर कहत सु पंडित ज्ञाता, जो कोइ याको जानै भेव ॥ ६ ॥
कमलमाहिंते पानी उपज्यो, पानीमाहिंतें निपज्यो सूर ॥
सूरमाहिं शीतलता उपजी, शीतलतामें सुख भरपूर ॥
ता सुखको क्षयँ होय न कबहूं, सदा एकरस निकट न दूर ॥
सुंदर कहत सत्य यह यूंही, यामें रती न जानहु कूर ॥ ७ ॥
हंस चढ्यो ब्रह्माके ऊपर, गरुड चढ्यो पुनि हरिकी पीठ ॥
बैल चढ्यो है शिवके ऊपर, सो हम दीठो[४] अपनी दीठ ॥
देव चढ्यो पातीके ऊपर, जर्ख चढ्यो दायनि पर नीठ ॥
सुंदर एक अचंभा हूवा, पानीमाही जरै अगीठ ॥ ८ ॥

---

१ ज्ञानी । २ सिखलाना । ३ नाश । ४ देखा ।

कपरा धोबीकूं गहि धोवै, माटी वपरी घडै कुम्हार ॥
सूइ विचारी दर्जिहि सीवै, सोना तावै पकरि सुनार ॥
लकरी बढ़ईकूं गहि छीले, खाल सु बैठी धमै लुहार ॥
सुंदरदास कहै सो ज्ञानी, जो कोइ याको करै विचार॥ ९ ॥
जा घरमाहिं बहुत सुख पायो, ता घरमाहिं बसै अब कौन ॥
लागी सबै मिठाई खारी, मीठो लग्यो एक वह लौन ॥
पर्वत उडै रूइ थिर बैठी, ऐसो कोइक बाज्यो पौन ॥
सुंदर कहै न मानै कोई, तातें पकरि रहीये मौन ॥ १० ॥
रजनीमाहिं दिवस हम देख्यो, दिवसमाहिं देखी हम रात ॥
तेल भरयो संपूरण तामें, दीपक जरै जरै नहिं बात ॥
पुरुष एक पानीमें प्रगट्यो, ता निगुराकी कैसी जात ॥
सुंदर सोई लहै अर्थकूं, जो नित करै पराई तात ॥ ११ ॥
उनयो मेघ बढ्यो चहुँ दिशिमें, वर्षन लग्यो अखंडितधार ॥
बूड्यो मेरु नदी सब सूखीं, उर लाग्यो निशि दिन इक तार ॥
कांसा परयो बीजली ऊपर, कीनो सब कुटुंब संहार ॥
सुंदर अर्थ अनूपम याको, पंडित होय सु करै विचार ॥ १२ ॥
वाड़ीमाहीं माली निपज्यो, हालीमाहीं निपज्यो खेत ॥
हंसहि उलटि श्याम रंग लायो, भ्रमर उलटिकरि हूवो श्वेत ॥
शशियर उलटि राहुकूं ग्रास्यो, सूर उलटि करि ग्रास्यो केत ॥
सुंदर सुगराकूं तजि भाग्यो, निगुरा सेंती बांध्यो हेत ॥ १३ ॥
अग्नि मथन करि लकरी काढ़ी, सो वह लकरी प्राणआधार ॥
पानी मथि करि घीउ निकास्यो, सो घृत खायो वारंवार ॥
दूध दहीकी इच्छा भागी, जाकूं मथत सकलसंसार ॥

---

१ रात । २ बत्ती । ३ काला भौंरा । ४ निगोड़ा ।

सुंदर अब तौ भये सुखारे, चिंता रही न एक लगार॥१४॥
पात्रमांहिं झोली गहि राखै, योगी भिक्षा माँगन जाइ॥
जागै जगत सोवही गोरख, ऐसा शब्द सुनावै आइ॥
भिक्षा फिरै बहुत गुरु ताकूं, सो वही भिक्षा चेले खाइ॥
सुंदर योगी युग युग जीवै, ता अवधूत कि दूर बलाइ॥१५॥
परधन हरै करै परनिंदा, परतियकूं राखै घरमांहिं॥
माँस खाय मदिरा पुनि पीवै, ताहि मुक्तिको संशय नाहिं॥
अकर्म गहै कर्म सब त्यागै, ताकी संगत पाप नशाहिं॥
ऐसी करै सुसंत कहावै, सुंदर और उपजि मरि जाहिं१६
निर्दयी होइ तरै पशु घाँतिक, दयावंत बूडै भँवमाहिं॥
लोभी लगै सबनकूं प्यारो, निर्लोभीकूं ठोहर नाहिं॥
मिथ्यावादी मिलै ब्रह्मकूं, सत्य कहैं ते यमपुरि जाहिं॥
सुंदर धूपमाहिं शीतलता, जरत रहै सो बैठै छाहिं॥१७॥
बढ़ई चरखा भलो सँवारयो, फिरने लाग्यो नीकी भात॥
बहु सासूकूं कहि समुझावै, तू मेरे ढिग बैठी कात॥
ताको तार न टूटै कबहूँ, प्यूनी घटै नहीं दिन रात॥
सुंदर विधिसूं बनै जुलाहा, खासा निपजै ऊंची जात१८॥
माइ बाप तजि धी उमड़ानी, हरषत चली खसमके पास॥
वहू बिचारी बढ़ि बरुतांवर, जाके कहे चलति है सास॥
भाई खरो भलो हितकारी, सब कुटुंबको कीनो नास॥
ऐसी विधि घर बस्यो हमारो, कहि समुझावें सुंदरदास॥१९॥
घर घर फिरै कुँवांरी कन्या, जने जनेसूं करती संग॥
वेश्या सो तौ भइ पतिव्रता, एक पुरुषके लागी अंग॥

१ वर्तन । २ योगी । ३ शराब । ४ संदेह । ५ कठोर । ६ कस[illegible]
७ संसार । ८ झूठ बोलनेवाला । ९ शौहर । १० खुश किस्म[illegible]
११ तरह । १२ अनव्याही ।

कलियुगमाहीं सतयुग थाप्यो, पापी उदय धर्मको भंग[१] ॥
सुंदर कहत अर्थ[२] सो पावै, जो नीके करि भजै अनंग[३]॥२०॥
विप्र रसोईं करने लाग्यो, चोका भीतर बैठो आइ ॥
लकरीमाहीं चूला दीयो, रोटी ऊपर तवा चढ़ाइ ॥
खिचरीमाहीं हँडिया रांधी, सालन आँक[४] धतूरा खाइ ॥
सुंदर जीमत अतिसुख पायो,अबके भोजन कियो अघाइ ॥२१॥
बैल उलटि नायककूं लाद्यो, वस्तु माहिं भरि गूण अपार ॥
भली भाँतिका सौदा कीया, आय दिशांतर या संसार ॥
नायिकिनी पुनि हर्षन लागी, मोहिं मिल्यो नीको भरतार ॥
पूंजी जाइ साँईकूं सोंपी, सुंदर शिरते डारचो भार॥२२॥
बनियां एक बनजकूं आयो, परे तावरा भारी भैठ ॥
भली वस्तु कछु लीनी दीनी, खैंचि गठरियां बाँधी ऐंठ ॥
सौदा किया चल्यो पुनि घरकूं, लेखा कियो वारितर बैठ ॥
सुंदर शाह खुशी अति हूवो, बैल गयो पूंजीमें पैठ ॥२३॥
पहराइत घर घुसे शाहके, रक्षा करने लागे चोर ॥
कोटवाल काठहुकरि बाँध्यो, छूटै नहीं सांझ अरु भोर ॥
राजा ग्राम छोड़िके भाग्यो, हूवो सकल जगतमें शोर ॥
परजा सुखी भई नगरीमें, सुंदर कोई जुलुम न जोर॥२४॥
राजा फिरै विपतिको मारचो, घर घर टुकड़ा माँगै भीख ॥
पाँव पियादो निशि दिन डोलै, घोडा चालि शकै नहि वीख ॥
आक अरंडकि लकरी चूशै, छांड़ै बहुत रस भरे ईख ॥
सुंदर कोउ जगतमें विरलो, या मूरखकूं लावै सीख २५ ॥
पानी जरै पुकारै निशि दिन, ताकूं अग्नि बुझावै आइ ॥
मैं शीतल तूं तपत भया क्यूं, वारंवार कहै समुझाइ ॥

---

१ नाश । २ द्रव्य । ३ कामदेव । ४ मदार । ५ बनिजारा । ६ शौहर । ७ बोझ । ८ पानी । ९ अंडी । १० चावता ।

मेरी झपट तोहिं जो लागै, तौ तू भी शीतल है जाइ ॥
कबहूं झरनी फेरि न उपजै; सुंदर सुखमें रहैसमाइ ॥२६॥
खसम परयो जोरूके पीछे, कह्यो न मानै भुंडीरांड[3] ॥
जित तित फिरै भटकती यूहीं, तैं तो कियो जगतमें भांड ॥
तौ हू भूख न भागी तेरी, तू गिल बैठी सारी मांड ॥
सुंदर कहै सीख सुनि मेरी, अब तू घर घर फिरबो छांड ॥२
पंथी माहिं पंथ चलि आयो, सो वह पंथ लख्यो नहिं जाहि ॥
वाही पंथ चल्यो उठि पंथी, निर्भय[6] देश पहूंच्यो आइ ॥
तहाँ दुकाल परै नहिं कबहूँ, सदा सुभिक्ष रह्यो ठहराइ ॥
सुंदर दुःखि न कोऊ दीसै, अक्षय सुखमें रहे समाइ ॥२८
एक अहेरी वनमें आयो, खेलन लाग्यो भली शिकार ॥
करमें धनुष कमरमें तरकश, सावज घेरे वारंवार ॥
मारयो सिंह व्याघ्र पुनि मारयो, मारी बहुत मृगनकी डार ॥
ऐसे सकल मारि घर लायो, सुंदर राजहि कियो जुहार ॥२
शुकके[11] बचन अमृतमय ऐसे, कोकिल[12] धारि रहै मनमाहिं ॥
सारो सुनै भागवत कबहूँ, सारस तौ उपजावै नाहिं ॥
हंस चुगै मुक्ताफल[13] अर्थहि, सुंदर मानसरोवर ताहिं ॥
काक कवीश्वर नीके जेते, सो सब दौरि करंकहि जाहिं ॥३
नष्ट होय द्विज[14] भ्रष्ट क्रिया करि, कष्ट किये नहिं पावै ठौर ॥
महिमा सकल गई तिनकेरी, रहत पगनतर सब शिरमौर ॥
जित तित फिरै नहीं कछु आदर, तिनकूं कोउ न घालै कौर ॥
सुंदरदास कही समुझावै, ऐसी कोउ करौ मति और ॥३
शास्त्र रु वेद पुराण पढ़ै किन, पुनि व्याकरण पढ़ै जे कोइ ॥

१ लू । २ ठण्डा । ३ बदमाश औरत । ४ शिक्षा । ५ राही । ६ नि[illegible]
७ निनाश । ८ शिकारी । ९ शिकार । १० सलाम, नजर । ११ शु[illegible]
१२ कोयल । १३ मोतीफल । १४ ब्राह्मण ।

संध्या करै गहै षटकर्महि, गुण अरु काल विचारै सोइ ॥
सीरा काम तबै बनिआवै, मनमें सब तजि राखै दोइ ॥
सुंदरदास कहै सुन पंडित, राम नाम विनु मुक्ति न होइ ३२

श्लोक ॥

श्लोकार्द्धेन प्रवक्ष्यामि, यदुक्तं ग्रंथ कोटिभिः ॥
ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या, जीवो ब्रह्मैव ना परः ॥ १ ॥

दोहा ॥

पीवत रस विपरीत यह, ताहि होत निज ज्ञान ॥
बहुरि जन्म होवै नहीं, रहत सु पूर्ण प्रमान ॥ १ ॥

इति रहस्यार्थदीपिकासहित विपर्ययको
अंग संपूर्ण ॥ २० ॥

अथ स्वरूप विस्मरणको अंग ॥ २१ ॥

इंदव छंद ॥

जा घटकी उनहार है जैसिहि, ता घट चेतन तैसोहि दीसै ॥
हाथिकि देहमें हाथिसों मानत, चीटिकी देहमें चीटि करीसै ॥
सिंहकि देहमें सिंहसों मानत, कीशकि देहमें मानत कीसै ॥
जैसी उपाधि भई जहाँ सुंदर, तैसोहि होइ रह्यो नख शीसै ॥१॥
जैसेहि पावक काठके योगते, काठसो होइ रह्यो इक ठौरा ॥
दीरघ काठमें दीरघ लागत, चौरस काठमें लागत चौरा ॥

---

१ पढ़ाना, पढ़ाना–दानदेना–दानलेना–यज्ञकरना–यज्ञकराना। २ बड़ा।

आपनो रूप प्रकाश करै जब, जारि करै तब औरको औरा
तैसेहि सुंदर चेतन आपहि, आपकूँ जानत नाहिंन बौरा॥

मनहर छंद ॥ प्रश्न ॥

अजेर[1] अमर अविगत[2] अविनाशी अजें[3];
कहत सकल जन, श्रुति अवगाहेते ॥
निर्गुण निर्मल अति, शुद्ध निरबंध नित;
ऐसेहि कहत और, ग्रंथनके थाहेते ॥
व्यापक अखंड एक, रस परिपूरण है;
सुंदर सकल रमि, रह्यो ब्रह्म ताहेते ॥
सहज सदा उदोत, याहिते अचंभा होत;
आपहीकूं आप भूलि, गयो सो तौ काहेते॥ ३ ॥

उत्तर ॥

जैसे मीन मांसकूं, निगलि जात लोभ लगि;
लोहको कंटक नाहिं, जानत उमाहेते ॥
जैसे कपि गागरमें, मूठ बांधि राखै शठ;
छांड़ि नहिं देत सो तौ, स्वादहीके वाहेते॥
जैसे शुक नारियर, चंचू मारि लटकत;
सुंदर सहत दुःख, देत याहि लाहेते ॥
देहको सँयोग पाइ, इंद्रिनके वश पर्यो;
आपहीकूं आप भूलि, गयो सुख चाहेते ॥ ४ ॥

इंदव छंद ॥

ज्यूं कोइ मद्य पिये अति छाकत, नाहिं कछू सुधि है भ्रम ऐसो
ज्यूं कोइ खाइ रहै ठग मूरिहि, जानै नहीं कछु कारण तैसो

१ जिसेबुढ़ापा नहो। २ व्याप्त। ३ अजन्मा—स्वयंउत्पन्न।

ज्यूं कोइ बालक शंके[१] उपावत, कंपि उठै अरु आनत भैसो[२] ॥
तैसेहि सुंदर आपकूं भूलि सु, देखहु चेतन[३] मानत कैसो ॥ ५ ॥
ज्यूं कोइ कूपमें झांकि अलापत[४], ऐसिहि भांति सु कूप अलापै ॥
ज्यूं जल हालत है लगि पौन, कहै भ्रमते प्रतिबिंबहि कापै ॥
देहके प्राणके औ मनके कृत, मानत है सब मोहिकूं व्यापै ॥
सुंदर पेच परयो अतिशै करि, भूलि गयो भ्रमते ब्रह्म आपै ॥ ६ ॥
ज्यूं द्विज कोउक छाँडि महाश्रम, शूद्र भयो करि आपकूं मान्यो ॥
ज्यूं कोउ भूपति[५] सोवत सेज[६] सु, रंक भयो सुपने महिं जान्यो ॥
ज्यूं कोउ रूपकि राशि अत्यंत, कुरूप कहै भ्रम भैचंक[७] आन्यो ॥
तैसेहि सुंदर देहसो होयके, या ब्रह्म आपहि आप भुलान्यो ॥ ७ ॥
एकहि व्यापक वस्तु निरंतर[८], विश्व नहीं यह ब्रह्म विलासै ॥
ज्यूं नटे[९] मंत्रनसूं दृग बांधत, है कछु औरहि औरहि भासै ॥
ज्यूं रजनीमह बूझ परै नहिं, जौं लगि सूरज नाहिं प्रकासै ॥
त्यूं यह आपहि आप न जानत, सुंदर ह्वै रह्यो सुंदरदासै ॥ ८ ॥

मनहरछंद ॥

इंद्रिनकूं प्रेरी पुनि, इंद्रिनके पीछे परयो;
आपनी अविद्या करि, आप तनु गह्यो है ॥
जोइ जोइ देहकूं, शंकट आइ परै कछु;
सोई सोई मानै आप, याते दुःख सह्यो है ॥
भ्रमत भ्रमत कहूं, भ्रमको न आवै अंत;
चिरंकाल[१०] बीत्यो पै, स्वरूपकूं न लह्यो है ॥
सुंदर कहत देखौ, भ्रमकी प्रबलताई;
भूतनमें भूत[११] मिलि, भूत होइ रह्यो है ॥ ९ ॥

---

१ डरपैदाकरना । २ डर । ३ चैतन्य । ४ शब्दकरना । ५ राजा ।
६ शय्या । ७ हकवकाना । ८ सर्वदा । ९ वाजीगर । १० बहुत दिन । ११ तत्त्व ।

जैसे शुक नलिका[1] न, छांड़ि देत पगनते;
जानै काहू और मोहिं, बाँधि लटकायो है ॥
जैसे कपि गुंजनको[2], ढेर करि मानै आग;
आगे धरि तापै कछु शीत न गमायो है ॥
जैसे कोऊ कारजकूं जात हुतो पूरबकूं;
भ्रमते उलटि फिरि, पश्चिमकूं आयो है ॥
तैसेहि सुंदर सब, आपहीकूं भ्रम भयो;
आपहीकूं भूलिकरि, आपही बँधायो है ॥ १० ॥
जैसे कोऊ कामनीके, हिये पर चूसे बाल[3];
सुपनेमें कहै मेरो, पुत्र कहूं गयो है ॥
जैसे काहू पुरुषके, कंठ हुती मणि सोही;
ढूंढत फिरत कछु, ऐसो भ्रम भयो है ॥
जैसे कोऊ वायु करि, बावरो बकत डोलै;
औरहीकी और कहै, सुधि भूलि गयो है ॥
तैसेहि सुंदर निज, रूपकूं बिसारि देत;
ऐसो भ्रम आपहीकूं, आप करि लयो है ॥ ११ ॥
दिन दिन छिन छिन, होइ जात भिन्न[4] भिन्न;
देहके सँयोग पराधीन[5] सो रहतु है ॥
शीत लगै घाम लगै, भूख लगै प्यास लगै;
शोक मोह मति अति खेदकूं लहतु है ॥
अंध भयो पंगु भयो, मूकहु[6] बधिर[7] भयो;
ऐसे मानि मानि भ्रम नंदीमें बहतु है ॥
सुंदर अधिक मोहिं, याहिते अचंभा आहि;

---

१ कम्पा । २ लालकरजनी । ३ लडका । ४ जुदाजुदा । ५ परवश । ६ गूंगा । ७ बहरा ।

भूलिके स्वरूपकूं, अनाथ सो कहतु है॥ १२ ॥
जैसे कोइ कहै मैं तौ, स्वपनेमें ऊंट भयो;
जागि करि देखै वहीं, मानुष स्वरूप है ॥
जैसे कोई राजा पुनि, सोवत भिखारीं होइ;
आंख उघरै तौ महा भूँपनको भूप है ॥
जैसे कोउ भ्रमहुते, कहै मेरो शिर कहां;
भ्रमके गयेते जानै शिर तद्रूपै है ॥
तैसेही सुंदर यह, भ्रम करि भूल्यो आप;
भ्रमके गयेते यह, आतमा अनूप है ॥ १३ ॥
जैसे काहू पोसतीकी, पाग परी भूमि पर;
हाथ लेके कहै एक, पाग मैं तौ पाई है ॥
जैसे शेखसली मनोरथनको कीयो घर;
कहै मेरो घर गयो, गागरी गिराई है ॥
जैसे काहू भूत लग्यो, बकत है आक बाक;
शुद्धि सब दूर भई, औरे मति आई है ॥
तैसेही सुंदर यह, भ्रमकरि भूलो आप;
भ्रमके गयेते एक आतमा सदाई है ॥ १४ ॥
आपही चेतन यह, इंद्रिन चेतनकरि;
आपही मगन होइ, आनँद बढ़ायो है ॥
जैसे नर शीतकाल, सोवत निहाली वोढ॥
आपही तपत होइ, आप सुख पायो है ॥
जैसे बाल लकरीकूं, घोड़ा करि डाक चढ़ै;
आप असवार होइ, आपही कुदायो है ॥

---

१ यतीम । २ रंक–दलिद्र । ३ महाराज । ४ सदृश । ५ रजाई ।

तैसेही सुंदर यह, जड़को सँयोग पाय;
आप सुखमानि मानि, आपही भुलायो है ॥ १५॥
कहूं भूल्यो कामरत, कहूं भूल्यो साधी जत;
कहूं भूल्यो गृहमध्य, कहूं वनवासी है ॥
कहूं भूल्यो नीचमानि, कहूं भूल्यो ऊंच मानि;
कहूं भूल्यो मोह बांधि, कहूं तौ उदासी[1] है ॥
कहूं भूल्यो मौन धरि, कहूं बकवाद करि;
कहूं भूल्यो मक्के जाइ, कहूं भूल्यो कासी है ॥
कहत सुंदर अहंकारहूते भूल्यो आप;
एक आवै रोन अरु, दूजे आवै हाँसी है ॥ १६॥
मैं वहुत दुःख पायो, मैं बहुत सुख पायो;
मैं अनंते[2] पुण्य किये, मेरे अति पाप है ॥
मैं कुलीन विद्यावंत, पंडित प्रवीन महा;
मैं तौ मूढ़ अकुलीन[3], मेरो नीच बाप है ॥
मैं हूं राजा मेरी आन, फिरै चहूं चक्रमाहिं;
मैं सो रंक द्रव्यहीन, मोहिं तौ संताप है ॥
सुंदर कहत अहंकारहीतें जीव भयो;
अहंकार गये यह, एक ब्रह्म आप है ॥ १७॥
देहही सु पुष्ट लगै, देहही दूबरी लगै;
देहहीकूं शीत लगै, देहहीकूं तावरो ॥
देहहीकूं तीर लगै, देहहीकूं तोप लगै,
देहकूं कृपाणं[4] लगै, देहहीकूं घावरो ॥
देहही सुरूप लगै, देहही कुरूप लगै;
देहही यौवनलगै, देह वृद्ध दावरो ॥

---

१ सन्यासी । २ अनगनित । ३ कुलहीन-नीचकुल । ४ तरवार ।

देहहीसूं बांधि हेत, आपविषे मानि लेत;
सुंदर कहत ऐसो, बुद्धिहीन बावरो ॥ १८ ॥

इंदव छंद ॥

आपहि चेतन-ब्रह्म-अखंडित, सो भ्रमते कछु अन्य परेखै ॥
ढूंढ़त ताहि फिरै जितही तित, साधन योग बनावत भेखै ॥
औरहु कष्ट करै अतिशय[1] करि, प्रत्यक-आतमतत्त्व न पेखै ॥
सुंदर भूलि गयो निजरूपहि, है कर कंकण दर्पण देखै ॥ १९ ॥
सूत गलेमहिं मेलि[2] भयो द्विज, ब्राह्मण होइके ब्रह्म न जान्यो ॥
क्षत्रिय होइके छत्र धरयो शिर, हय गज पैदलसूं मन मान्यो ॥
वैश्य भयो वपुकी[3] वयँ[4] देखत, झूठ प्रपंच वनीजहि ठान्यो ॥
शूद्र भयो मिलि शूद्र-शरीरहि, सुंदर आप नहीं पहिचान्यो॥२०॥
ज्यूं रविकूं रवि ढूंढ़त है कहुँ, तप्त मिलै तन शीत गमाऊं ॥
ज्यूं शशिकूं शशि चाहत है पुनि, शीतल ह्वैकरि तप्त बुझाऊं ॥
ज्यूं सनिपात भये नर टेरत, है घरमें अपने घर जाऊं ॥
त्यूं यह सुंदर भूलि स्वरूपहि, ब्रह्म कहै कब ब्रह्महि पाऊं ॥२१॥
आप न देखत है अपनो मुख, दर्पण काट लग्यो अतिथूला ॥
ज्यूं दृग देखतते रहिजात, भयो जबहीं पुतरी परिफूला ॥
छाय अज्ञान रह्यो अभिअंतर, जानि सकै नहिं आतम-मूला ॥
सुंदर यूं उपज्यो मनके मल, ज्ञान विना निजरूपहि भूला॥२२॥
दीन हुवो विललात फिरै नित, इंद्रिनके वश छिल्लक छोलै ॥
सिंह नहीं अपनो बल जानत, जंबुक[5] ज्यूं जितही तित डोलै ॥
चेतनता बिसराइ निरंतर, ले जड़ता भ्रम गांठ न खोलै ॥
सुंदर भूलि गयो निजरूपहि, देह-स्वरूप भयो मुख बोलै ॥२३॥

---

१ अत्यंत करके । २ डाल । २ शरीर । ४ अवस्था । ५ सियार ।

मैं सुखिया सुखसेज सुखासन, हय गज भूमि महारजधानी।
हूं दुखिया दिन रैन मरूं दुःख, मोहिं विपत्ति परी नाहिं छानी।
हूं अति उत्तम जाति बड़ो कुल, हूं अति नीच क्रिया कुल हानी।
सुंदर चेतनता न सँभारत, देहस्वरूप भयो अभिमानी ॥२४
गर्भविषे उतपत्ति भई जब, जन्म लियो शिशु शुद्धि न जानी।
बाल कुमार किशोर युवादिक, वृद्ध भयो अति बुद्धि नशानी।
जैसिहि भांति भई वपुकी गति, तैसोहि होइ रह्यो यह प्रानी।
सुंदर चेतनता न सँभारत, देहस्वरूप भयो अभिमानी॥२५
ज्यूं कोइ त्याग करे अपनो घर, बाहिर जाइके वेष बनावै।
मूंड़ मुंडाइ रु कान फराइ वि[१]-, भूति लगाइ जटाहु बढ़ावै।
जैसोहि स्वांग करै वपुको पुनि, तैसोहि मानत त्यूं हुइ जावै।
त्यूं यह सुंदर आप न जानत, भूलि स्वरूपहि और कहावै॥२६

इति स्वरूप विस्मरणको अंग संपूर्ण ॥ २१ ॥

अथ विचारको अंग ॥ २२ ॥

मनहर छंद ॥

प्रथम श्रवण करि, चित्त एकाग्रहि धरि,
गुरु संत आगम कहैं सु उर धारिये ॥
द्वितिय मननैं वार वारहि विचारि देखै,
जोइ कछु सुने ताहि, फिरके सँभारिये ॥
तृतियप्रकार निदिध्यासंही जु नीके करि,

---

१ भस्म । २ शरीर । ३ सावधान । ४ चिन्तवन । ५ ध्यानावस्था।

निस्संग विचारते अपनपो सु टारिये ॥
तैसेही साक्षात याही, साधन करत होई;
सुंदर कहत द्वैत-बुद्धिकूं निवारिये ॥ १ ॥
देखै तौ विचार करि, सुनै तौ विचार करि;
बोलै तो विचार करि, करै तौ विचार है ॥
खाय तौ विचार करि, पीवै तौ विचार करि;
सोवै तौ विचार करि, जागै तौ न टार है ॥
बैठै तौ विचार करि, उठै तौ विचार करि,
चलै तौ विचार करि, सोई मतसार है ॥
देइ तौ विचार करि, लेइ तौ विचार करि;
सुंदर विचार कर, याहि निरधार है ॥२॥
एकही विचार करि, सुख दुःख समै जानै,
एकही विचार करि, मलैं सब धोइ है ॥
एकही विचार करि, संसार-समुद्र तरै,
एकही विचार करि, पारंगत होइ है ॥
एकही विचार करि, बुद्धि नानाभाव तजै,
एकही विचार करि, दूसरो न कोइ है ॥
एकही विचार करि, सुंदर संदेह मिटै,
एकही विचार करि, एकब्रह्म जोइ है ॥ ३ ॥

इंदव छंद ॥

रूपको नाश भयो कछु देखिय, रूप अरूपहि माहिं समावै ॥
रूपके मध्य अरूप अखंडित, सो तौ कहूँ कछु जाय न आवै ॥
बीच अज्ञान भयो नवतत्त्वको, वेद पुराण सबै कोउ गावै ॥
सोइ विचार करै जब सुंदर, शोधतें ताहि कहूं नहिं पावै ॥४॥

---

१ द्विविधा । २ बराबर । ३ पाप । ४ निराकार । ५ ढूंढ़ना ।

भूमि सु तौ नाहिं गंधकुं छांड़त, नीर सु तौ रसतै नाहिं न्यारो।
तेज सु तौ मिलि रूप रह्यो पुनि, वायु संपर्स सदा सु पियारो।
व्योम[२] रु शब्द जुदे नाहिं होवत, ऐसेहि अंतःकरण विचारो।
ए नवतत्त्व मिले इन तत्त्वनि, सुंदर भिन्न स्वरूप हमारो॥५
क्षीण रु पुष्ट शरीरको धर्म जु, शीतहु उष्ण[३] जरा[४]मृत ठानै।
भूख-तृषा गुण प्राणकू व्यापत, शोक रुमोह उभै मन आनै।
बुद्धि विचार करै निशि-वासर, चित्त चितै सु अँहं[५] अभिमानै।
सर्वको प्रेरक सर्वको साक्षि[६] जु, सुंदर आपकूँ न्यारोहि जानै॥६
एकहि कूपते नीरहि सींचत, ईख अफीमहि अंब अनारा।
होत उहै जल स्वाद अनेकनि, मिष्ट कटूं[७]क खटा अरु खारा।
त्यूंही उपाधि संयोगते आतम, दीसत आहि मिल्यो सविकारा।
काढ़ि लिये सु विवेक विचारसुं, सुंदर शुद्धस्वरूपहि न्यारा॥७
रूप पराको न जानि परै कछु, ऊठत है जिहि मूलते छानी।
नाभिविषे मिलि सप्त किये स्वर, पुर्ष संयोग पश्यंति[८] बखानी।
नाद संयोग हृदय पुनि कंठ जु, मध्यम याहि विचारते जानी।
अक्षर भेदं मिलै मुखद्वार सु, बोलत सुंदर वैखरिवानी॥८
ज्यूं कोइ रोग भयो नरके घट, वैद कहै यह वायु विकारा।
कोउ कहै ग्रह आइ लगै ताते, पुण्य किये कछु होइ उवारा।
कोइ कहै यह चूक परी कछु, देवनि दोष दियो निरधारा।
तैसेहि सुंदर तंत्रनिके मत, भिन्नहि भिन्न कहैं जु विचारा॥९
जे विषयातम पूरि रहे तिनकूं, रजनी महँ बादर छायो।
कोउ मुमुक्षु किये गुरुदेव तु, निर्भययुक्त जु शब्द सुनायो।
वादर दूर भये उनके पुनि, तारनसूं रज्जु[९] सर्प दिखायो।

---

१ लगना। २ आकाश। ३ गरम। ४ बुढ़ापा। ५ मैं। ६ साक्षी। ७ कड़ुवा। ८ देखना। ९ जेवरी।

सुंदर शूर प्रकाशतही भ्रम, दूर भयो रजुंको रजु पायो॥१०॥
कर्म शुभाशुभकी रजेनी पुनि, अर्ध तमोमैय अर्ध उजारी ॥
भक्ति सु तौ यह है अरुणोदय, अंत निशा दिन संधि विचारी ॥
ज्ञान सु भानुं उदै निशि वासर, वेद पुराण कहै जु पुकारी ॥
सुंदर तीनप्रभावँ बखानत, यूं निहचै समुझै विधि सारी॥११॥

मनहर छंद ॥

देहहीसो आप मानि, देहहीसो होइ रह्यो;
जड़ता अज्ञान तम, शूद्र सोई जानिये ॥
इंद्रिनके व्यापारनि, अत्यंत निपुण बुद्धि;
तम रज दुहूँ करि, वैश्यहु प्रमानिये ॥
अंतहकरणमाहिं, अहंकार बुद्धि जाके;
रजगुण वर्धमान, क्षत्री पहिचानिये ॥
सत्वगुण बुद्धि एक, आतमविचार जाके;
सुंदर कहत वही ब्राह्मण बखानिये ॥ १२ ॥
आतमाके विषे देह, आइ करि नाश होइ;
आतम अखंड सदा, एकही रहतु है ॥
जैसे सांप कंचुंकीकूं, लिये रहै कोउ दिन;
जीर्रन उतारि करि, नौतन गहतु है ॥
जैसे द्रुमहूके पत्र, फूल फल आइ होत;
तिनके गयेतें द्रुम, औरहु लहतु है ॥
जैसे व्योममाहिं अभ्रे, होइके बिलाइ जात;
ऐसोहि विचार करि, सुंदर कहतु है ॥ १३ ॥
खरीकी डलीसूं अंक लिखत विचारियत;

१ जेवरी । २ रात्रि–निशा–यामिनी । ३ अंधकार मय । ४ सूर्योदय । ५ सूर्य्य । ६ प्रताप । ७ केंचल । ८ पुराना । ९ बादल ।

लिखत लिखत वही, डली घसि जातु है ॥
लेखो समुझ्यो है जब समुझ परी है तब;
जोइ कछु सही भयो, सोई ठहरातु है ॥
दारेहीसूं दार मथि, प्रगट पावक भयो;
वहै दार जारी पुनि, पावक समातु है ॥
तैसेही सुंदर बुद्धि, ब्रह्मको विचार करि;
करत करत वह, बुद्धिहू बिलात है ॥ १४ ॥
आपकूं समुझि देखौ, आपहि सकल माहिं॥
आपहीमें सकल जगत देखियतु है ॥
जैसे व्योम व्यापक अखंड परिपूरण है,
बादल अनेक नाना रूप लेखियतु है ॥
जैसे भूमि घट जल, तरंग पावक दीप;
वायुमें बबूरा सोई, विश्व रेखियतु है ॥
ऐसेही विचारत विचारहू विलीन होइ,
सुंदरही सुंदर रहत पेखियतु है ॥ १५ ॥
देहको संयोग पाइ, जीव ऐसो नाम भयो;
घटके संयोग घटाकाशही कहायो है ॥
ईश्वर सकल विराट्में विराजमान,
मठके संयोग मठाकाश नाम पायो है ॥
महाकाशमाहिं सब घट मठ देखियत,
बाहिर भीतर एक गगन समायो है ॥
तैसेहि सुंदर ब्रह्म ईश्वर अनेकजीव,
द्विविध उपाधि भेद, ग्रंथनमें गायो है ॥ १६ ॥

---

१ लकडी । २ ववडर । ३ भारी–ब्रह्माण्ड–परमेश्वरका रूप ।
४ आकाश ।

प्रश्न ॥

देह दुःख पावै किधों? इंद्रिय दुःख पावै किधों?
प्राण दुःख पावै किधों? लहै न अहारकूं?
मन दुःख पावै किधों? बुद्धि दुःख पावै किधों?
चित्त दुःख पावै किधों? दुःख अहंकारकूं
गुण दुःख पावै किधों? श्रोत्र दुःख पावै किधों?
प्रकृति दुःख पावै किधों? पुरुष आधारकूं?
सुंदर पूछत कछु जानि न परत ताते
कौन दुःख पावै गुरु कहौ या विचारकूं ॥ १७ ॥

उत्तर ॥

देहकूं तौ दुःख नाहिं, देह पंचभूतनको;
इंद्रिनकूं दुःख नाहिं, दुःख नाहिं प्रानकूं ॥
मनहूंकूं दुःख नाहिं, बुद्धिहूकूं दुःख नाहिं;
चित्तहूकूं दुःख नाहिं, नाहि अभिमानकूं ॥
गुणनकूं दुःख नाहिं, श्रोत्रहूकूं दुःख नाहिं;
प्रकृतिकूं दुःख नाहिं, दुःख न पुमानकूं ॥
सुंदर विचारि ऐसे, शिष्यसूं कहत गुरु;
दुःख एक देखियत, बीचके अज्ञानकूं ॥ १८ ॥
पृथिवि भाजन अंग, कनक कुंडल पुनि ॥
जलहि तरंग दोऊ, देखि करि मानिये ॥
कारण कारज एतो, प्रगटही थूलरूप;
ताहिते नजरमाहिं, देखि करि आनिये ॥

---

१ शरीर-पुरुष ।

पावक पवन व्योम, एतो नहीं देखियत;
दीपक बघूरा अभ्र, प्रत्यक् बखानिये ॥
आतमा अरूप अति सूक्षमते सूक्षम है ॥
सुंदर कारण ताते, देहमें न जानिये ॥ १९ ॥
जैन मत उहै जिन राजकूं न भूलि जाय;
दान तप शील सत्य भावनाते तरिये ॥
मन वच काय शुद्ध, सबसूं दयालु रहै;
दोषबुद्धि दूरि करि, दया उर धरिये ॥
बौध नाम तब जब, मनको निरोध[2] होइ;
बोधके विचार शोध, आतमाको करिये ॥
सुंदर कहत ऐसे, जीवतही मुक्ति होइ;
मुएते मुकति कहै, ताकूं परिहरिये ॥ २० ॥
देह वोर देखिये तौ, देह पंचभूतनको;
ब्रह्मा अरु कीट लग, देहही प्रधान[3] है ॥
प्राण वोर देखिये तौ, प्राण सबहीके एक;
क्षुधा पुनि तृषा दोऊ, व्यापत समान है ॥
मन वोर देखिये तौ, मनको स्वभाव एक;
संकल्प[4] विकल्प करै, सदाही अज्ञान है ॥
आतमविचार किये, आतमाही दीसै एक ।
सुंदर कहत कोऊ, देखिये न आन है ॥ २१ ॥

॥ इति विचारको अंग संपूर्ण ॥ २२ ॥

---

१ इच्छा विचार । २ रोकना । ३ मुख्य । ४ प्रवृत्ति-निर्वृत्ति ।

अथ सांख्यज्ञानको अंग ॥ २३ ॥
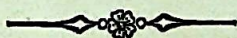
मनहर छंद ॥

क्षिति[1] जल पावक पवन नभ[2] मिलि करि,
शब्द रु सपरस, रूप रस गंध जू ॥
श्रोत्र त्वँक[3] चक्षु घ्राण, रसना[6] रसको ज्ञान;
वाँक पाणि पाप पायु, उपस्थहि बंध जू ॥
मन बुद्धि चित्त अहंकार ऐ चौवीश तत्त्व,
पंचविंश जीवतत्त्व, करत है द्वंद्व जू ॥
षटविंश जानु ब्रह्म, सुंदर सु निहकर्म;
व्यापक अखंड एकरस निरसंध जू ॥ १ ॥
श्रोत्र दिग त्वक वायु, लोचन प्रकाश रवि;
नाशिका अश्विनी जिह्वा, वरुण बखानिये ॥
वाक अग्नि हस्त इंद्र, चरण उपेंद्र बल;
मेढु प्रजापति गुदा, मृत्युहूकूं ठानिये ॥
मन चंद्र बुद्धि विधि, चित्त वासुदेव आहि;
अहंकार रुद्रको, प्रभाव करि मानिये ॥
जाकी सत्ता पाइ सब, देवता प्रकाशत हैं;
सुंदर सो आतमाहि, न्यारो करि जानिये ॥ २ ॥

इंदव छंद ॥

श्रोत्र सुनैं दृग देखत हैं रसना, रस घ्राण सुगंध पियारो ॥
कोमलता त्वक जानत है पुनि, बोलत है मुख शब्दउचारो ॥

---

१ पृथ्वी । २ आकाश । ३ त्वचा । ४ नेत्र । ५ नाशिका । ६ जिह्वा । ७ वाणी । ८ हाथ । ९ गुदा । १० नितंव ।

पाणिग्रहै पद गौन करै मल मूत्र, तजै उभैयो अध-द्वारो ॥
जासु प्रकाश प्रकाशत हैं सब, सुंदर सोइ रहै घट न्यारो ॥३॥
बुद्धि भ्रमै मन चित्त भ्रमै अहंकार भ्रमै कछु जानत नाहीं ॥
श्रोत्र भ्रमै त्वक घ्राण भ्रमै रसना दृग देखि दशोंदिशि जाहीं
वाक भ्रमै कर पाद भ्रमै गुदद्वार उपस्थ भ्रमै कहु काहीं ॥
तेरे भ्रमाये भ्रमै सबही पुनि, सुंदर क्यूं तु भ्रमै उनमाहीं ॥४॥
बुद्धिको बुद्धि रु चित्तको चित्त, अहंको अहं मनको मन वोई ॥
नैनको नैनहि वैनको वैनहि, कानको कान त्वचा त्वक होई॥
घ्राणको घ्राणहि जीभको जीभहि, हाथको हाथ पगौ पग दोई ॥
शीशको शीशहि प्राणको प्राणहि, जीवको जीवहि सुंदर सोई ॥५॥

मनहर छंद ॥

प्रश्न ॥

कैसेके जगत यह, रच्यो है जगतगुरु;
मोसूं कहौ प्रथमहि, कौन तत्त्व कीनो है?
पुरुष कि प्रकृति कि, महतत्त्व अहंकार;
किधौं उपजाय तम, रज-सत्व तीनौ है?
किधौं व्योम वायु तेज, आप कै अवनि कीन्ह;
किधौं पंचविषय पसार, करि लीनो है?
किधौं दशइंद्रि किधौं, अंतहकरण कीन्ह;
सुंदर कहत किधौं, सकल [३]विहीनो है; ॥ ६ ॥

उत्तर ॥

ब्रह्मते पुरुष अरु, प्रकृति प्रगट भई;
प्रकृतिते महतत्त्व, पुनि अहंकार है ॥
अहंकारहूते तीन-गुण सत्व रज तम,
तमहूते महाभूत, विषय पसार है ॥

---

१ हाथ । २ दोनो । ३ विना-रहित ।

रजहूतें इंद्री दश, पृथक पृथक भई,
सत्वहूते मनआदि, देवता विचार है ॥
ऐसे अनुक्रम[1] करि, शिष्यसूं कहत गुरु;
सुंदर सकल यह, मिथ्या भ्रम-जार है ॥ ७ ॥

प्रश्न ॥

मेरो रूप भूमि है कि? मेरो रूप आप है कि?
मेरो रूप तेज है कि? मेरो रूप पौन है?
मेरो रूप व्योम है कि? मेरो रूप इंद्रि दश?
अंतःकरण है कि? बैठो है कि गौन[2] है?
मेरो रूप त्रिगुण कि? अहंकार महतत्त्व?
प्रकृतिपुरुष किधौं? बोलै है कि मौन है?
मेरो रूप स्थूल है कि? सूक्षम है मेरो रूप?
सुंदर पूछत गुरु? मेरो रूप कौन है? ॥ ८ ॥

उत्तर ॥

तू तौ कछु भूमि नाहिं, अप तेज वायु नाहिं;
व्योम पंचविषै नाहिं, सो तौ भ्रमकूप है ॥
तू तौ कछु इंद्रिय रु, अंतहकरण नाहिं;
तीनगुण तू तौ नाहिं, न तौ छाहिं धूप है ॥
तू तौ अहंकार नाहिं, पुनि महतत्त्व नाहिं;
प्रकृतिपुरुष नाहिं, तू तौ स्वअनूप है ॥
सुंदर विचार ऐसे, शिष्यसूं कहत गुरु;
नाहिं नाहिं कहत रहैं, सोई तेरो रूप है ॥ ९ ॥
तेरो तौ स्वरूप है, अनूप चिदानंद घन,

---

१ क्रमक्रमसे– रीतिवार । २ चलता ।

देह तौ मलीन जड़, या विवेक कीजिये ॥
तू तौ निहसंग निराकार, अविनाशी अज;
देह तौ विनाशवंत, ताहि नहिं धीजिये ॥
तू तौ षटउरमी रहित, सदा एकरस;
देहकी विकार सब, देह शिर दीजिये ॥
सुंदर कहत यूं विचारि, आपु भिन्न जानि;
परकी उपाधि कहा, आप खैंचि लीजिये ॥ १० ॥

देहही नरकरूप, दुःखको न वारापार;
देहहीहै स्वर्गरूप, झूठो सुख मान्यो है ॥
देहहीकूंबंध-मोक्ष, देह अपरोक्ष-प्रोक्ष;
देहहीके क्रिया कर्म, शुभाशुभ ठान्यो है ॥
देहहीमें और देह, सुखी ह्वै विलास करै;
ताहिकूं समझे बिना, आतमा बखान्यो है ॥
दोउ देहते अलिप्त, दोउको प्रकाशक है;
सुंदर चैतन्यरूप न्यारो करि जान्यो है ॥ ११ ॥

देह हलै देह चलै, देहहीसूं देह मिलै;
देह खाइ देह पीवै, देहही भरत है ॥
देहही हिमालय गलै, देहही पावक जलै;
देह रणमाहि जूझै, देहही परत है ॥
देहही अनेककर्म, करत विविधभाँति;
चमककी सत्ता पाइ, लोह ज्यूं फिरत है ॥
आतमा चैतन्यरूप; व्यापक साक्षी अनूप;
सुंदर कहत सो तौ, जन्मे न मरत है ॥ १२ ॥

---

१ प्रत्यच्छ–सामने । २ गुप्त–अप्रत्यच्छ । ३ अलग । ४ साखी ।

प्रश्नोत्तर ॥

देह यह किनको है? देह पंचभूतनको,
पंचभूत कौनते हैं? तामसा हंकारतें ॥
अहंकार कौनतें है? जासूं महतत्त्व कहैं,
महतत्त्व कौनतें हैं? प्रकृति मंझारतें ॥
प्रकृति सो कौनतें है? पुरुष है जाको नाम,
पुरुष सो कौनतें है? ब्रह्म निराधारतें ॥
ब्रह्म अब जान्यो हम? जान्यो है तौ निश्चै[1] कर,
निश्चै हम कियो है तौ? चुप मुखद्वारतें ॥ १३ ॥

पूर्ववत् ॥

एक घट माहिं तौ सुगंध जल भरि राख्यो;
एक घटमाहिं तौ दुर्गंधजल भरचो है ॥
एक घटमाहिं पुनि, गंगोदक[2] राख्यो आनि,
एक घटमाहिं आनि, मदिराहु करचो है ॥
एक घृत एक तेल, एकमाहिं नवनीत,
सबहीमें सविता[3]को, प्रतिबिंब परचो है ॥
तैसेही सुंदर ऊंच-नीच-मध्य एक ब्रह्म,
देह भेद देखि भिन्न भिन्न नाम धरचो है ॥ १४ ॥
भूमिपर अपैं[4] अपहूके परे पावक है;
पावकके परे पुनि, वायुहू बहत है ॥
वायू परे व्योम व्योमहूके परे इंद्रि दश;
इंद्रिनके परे अंतःकरण रहत है ॥
अंतहकरण पर, तीनोगुण अहंकार;

---

१ विश्वास । २ गंगाजीका जल । ३ सूर्य्य । ४ पानी ।

अहंकार पर महतत्त्वकूं लहत है ॥
महतत्त्व पर मूल-माया माया परब्रह्म;
ताहिते परातपर, सुंदर कहत है ॥ १५ ॥
भूमि तौ विलीन[1] गंध, गंध तौ विलीन अप;
अपहू विलीन रस, रस तेज खात है॥
तेज रूप रूप वायु,वायुही सुपर्स लीन;
सो परस व्योम शब्द, तमही बिलात है॥
इंद्रि दश रज मन, देवता विलीन सत्त्व;
तीनगुण अहं महतत्त्व गलि जात है ॥
महतत्त्व प्रकृति[2] रु, प्रकृति पुरुष लीन;
सुंदर पुरुष जाइ, ब्रह्ममें समात है ॥ १६ ॥
आतमा अचल शुद्ध, एकरस रहै सदा;
देह व्यवहारनमें, देहहीसों जानिये ॥
जैसे शशिमंडल[3] अभंग[4] नहिं भंग होइ;
कला आवै जाइ घट बढ़ सो बखानिये ॥
जैसे द्रुम स्थिर नदीहूके तट देखियत;
नदीके प्रवाह[5]माहिं, चलतसो मानिये॥
तैसे आतमा अनंत, देहसों प्रकाश करै;
सुंदर कहत यूं विचारि भ्रम भानिये ॥ १७ ॥
आतमा शरीर दोऊ, एकमेक देखियत;
जबलग अंतहकरणमें अज्ञान है ॥
जैसे अँधियारी रैन, घरमें अँधेरो होय,
आँखिनको तेज ज्यूंको, त्यूंही विदमान[6] है ॥

---

१ मिलाहुआ । २ माया । ३ चन्द्रमण्डल । ४ अटूट । ५ धारा।
६ मौजूद ।

यद्यपि अँधेरेमाहिं, नैनकूं न सूझै कछु;
तद्यपि अंधेरे सूं अलेप[1] सो बखान है ॥
सुंदर कहत तौलौं, एकमेक जानियत;
जौलौं नहिं प्रगट प्रकाश ज्ञानभान है ॥ १८ ॥
देहजड़ देवलमें, आतम चेतनदेव;
याहिकूं समुझि करि, यासूं मन लाइये ॥
देवलकूं विनशतें[2], बेर नाहिं लागै कछु;
देव तौ अभंग सदा, देवलमें पाइये ॥
देवकी शकति[3] करि, देवलकी पूजा होत;
भोजन विविधभाँति, भोगहू लगाइये ॥
देवलते न्यारो देव, देवलमें देखियत;
सुंदर विराजमान, और कहाँ जाइये ॥ १९ ॥
प्रीतिसी न पाती कोऊ, प्रेमसे न फूल और;
चित्तसो न चंदन, सनेह सो न सेहरा ॥
हृदय सो न आसन, सहजसो न सिंहासन;
भावसी न सेज और, शून्य[4] सो न गेहरा ॥
शीलसो न स्नान अरु ध्यानसो न धूप और;
ज्ञानसो न दीपक अज्ञान तम केहरा ॥
मनसी न माला कोऊ, सोहं सो न जाप और;
आतमासो देव नाहिं, देहसो न देहरा ॥ २० ॥
श्वासोश्वास रातिदिन, सोहं सोहं होय जाय;
याहि माला वारंवार, दृढ़के धरतु है ॥
देह परे इंद्रि परे, अंतहकरण परे;

---

१ जिसे तीनों गुण न व्यापैं । २ नाश । ३ शक्ति । ४ आकाश ।
५ आत्मज्ञान ।

एकही अखंड जाप, तापकूं हरतु है ॥
काष्ठकी रुद्राक्षकी रु सूतहूकी माला और;
इनके फिराये कछु, कारज सरतु है ।
सुंदर कहत तातें, आतमा चैतन्यरूप;
आपको भजन सो तौ आपही करतु है ॥ २१ ॥

क्षीर नीर मिले दोऊ, एकठेही होइ रहे;
नीर जैसे छाँड़ि हंस, क्षीरकूं गहतुं है ॥
कंचनमें और धातु, मिलि करि बान परचो;
शुद्ध करि कंचन सुनार ज्यूं लहतु है ॥
पावकहू दार[२] दध्य, दारहूसो होइ रह्यो;
मथि करि काढ़ै वह, दारकूं दहतु है ॥
तैसेही सुंदर मिल्यो, आतमा अनातमा जू;
भिन्न भिन्न[३] करै सो तौ, सांख्यहीकहतु है ॥ २२ ॥

अन्नमयकोश[४] सो तो, पिंड है प्रगट यह ;
प्राणमयकोश पंच[५]–वायू ही बखानिये ॥
मनोमयकोश पंच–कर्मइंद्रि हैं प्रसिद्ध;
पंचज्ञानइंद्रिय विज्ञानमय जानिये ॥
जाग्रत[६] स्वपन विषे, कहिये चत्वार कोश;
सुषुपतिमाहिं कोश, आनंदमै मानिये ॥
पंचकोश आतमाको, जीव नाम कहियत;
सुंदर शंकर-भाष्य, सांख्य ये बखानिये ॥ २३ ॥

जाग्रत-अवस्था जैसे, सदनमें बैठियत;
तहाँ कछु होइ ताहिं, भलीभाँति देखिये ॥

---

१ पीड़ा। २ काष्ठ। ३ अलग अलग। ४ पेट। ५ प्राण-पान-समान-उदान व्यान। ६ जागना।

सुपन--अवस्था जैसे, देहरीमें बैठे जाइ;
रहै जोइ वहाँ ताकी, वस्तु सब लेखिये ॥
सुषुपति भोंहरेमें, बैठते न सूझ परै;
वहां अंधघोर तहाँ, कछुही न पेखिये ॥
व्योम अनुस्यूत घर, देहरे भोंहरे माहिं;
सुंदर साक्षीस्वरूप, तुरियाँ विशेषिये ॥ २४ ॥
जाग्रतके विषे जीव, नैननमें देखियत;
विविधव्योहार सब, इंद्रिनि गहतु है ॥
सुपनेहु माहिं पुनि, वैसेही व्योहार होत;
नैननते आइ करि कंठमें रहतु है ॥
सुषुपति हृदयमें विलीन होइ जात सब;
जाग्रत सुपनकी तौ, सुधि न लहतु है ॥
तीनहू अवस्थाकूंहीं, साक्षी जब जानै आप;
तुरिया स्वरूप यह, सुंदर कहतु है ॥ २५ ॥

इंदव छंद ॥

भूमिते सूक्षमें आपकुं जानहु, आपते सूक्षम तेजको अंगा ॥
तेजते सूक्षम वायु वहै नित, वायुते सूक्षम व्योम उतंगा ॥
व्योमते सूक्षम है गुण तीन, तिहूंते अहं महतत्त्व प्रसंगा ॥
ताहिते सूक्षम मूलप्रकृति जू, मूलते सुंदर ब्रह्म अभंगा ॥२६॥
ब्रह्म निरंतर व्यापक अग्नि, अरूप अखंडित है सबमाहीं ॥
ईश्वर पावक राशि प्रचंड जु, संग उपाधि लिये बरताहीं ॥
जीव अनंत मशाल चिराग़ सु, दीप पतंग अनेक दिखाहीं ॥
सुंदर द्वैतउपाधि मिटै जब, ईश्वर जीव जुदे कछु नाहीं ॥२७॥

---

१ किञ्चित् निद्रा । २ भुइँधरा । ३ चतुर्थ अवस्था । ४ महीन । ५ पांखी ।

ज्यूं नर पावक लोह तपावत, पावक लोह मिले सु दिखाहीं ॥
चोट अनेक परै घनकी शिर, लोह बधै कछु पावक नाहीं ॥
पावक लीन भयो अपने घर, शीतल लोह भयो तब ताहीं ॥
त्यूं यह आतम देह निरंतर, सुंदर भिन्न रहै मिलि माहीं२८॥
आतम चेतन शुद्ध निरंतर, भिन्न रहै कहूँ लिप्त न होई ॥
है जड़ चेतन अंतहकर्ण जु, शुद्ध अशुद्ध लिये गुण दोई ॥
देह अशुद्ध मलीन महाजड़, हालि न चालि सकै पुनि होई ॥
सुंदर तीन विभाग किये बिन, भूलि परै भ्रमते सब कोई ॥२९॥

सवैया (इकतीसमात्रक) ॥

ब्रह्म अरूप अरूपी पावक, व्यापक युगल न दीसत रंग ॥
देह दारते प्रगट देखियत, अंतःकरण अग्नि द्वय अंग ॥
तेज प्रकाश कल्पना तौलगि, जौलगि रहै उपाधिप्रसंग ॥
जहँके तहाँ लीन पुनि होई, सुंदर दोई सदा अभंग ॥ ३० ॥
देह सरांव तेल पुनि मारुत, बाती अंतःकरण विचार ॥
प्रगट ज्योति यह चेतन दीसै, जाते भयो सकल उजियार ॥
व्यापक अग्नि मथन करि जोए, दीपक बहुतभाँति विस्तार ॥
सुंदर अद्भूत रचना तेरी, तूंहीं एक अनेक प्रकार ॥ ३१ ॥
तिलमें तेल दूधमें घृंत है, दारमाहिंपावक पहिचान ॥
पुहुपमाहिं ज्यूं प्रगट वासना, ईखमाहिं रस कहत वखान ॥
पोस्तातिमाहिं अफीम निरंतर, वनस्पतीमें शहद प्रमान ॥
सुंदर भिन्न मिल्यो पुनि दीसत, देहमाहिं यूं आतम जान॥ ३२॥

सवैया (बत्तीसमात्रक) ॥

जाग्रत स्वप्न सुषूपति तीनूं, अंतःकरण अवस्था पावै ॥
प्राण चलै जाग्रत अरु स्वप्न, सुषूपातिमें कछु वे न रहावै ॥

---

१ लीन । २ दीया । ३ पवन । ४ घी । ५ पुष्प । ६ पोस्ता ।

प्राण गयेते रहै न कोऊ, सकल देखते थाट विलावै ॥
सुंदर आतमतत्त्व निरंतर, सो तौ कितहूँ जाय न आवै॥ ३३॥

सवैया (एकतीसमात्रक)॥

पंद्रहतत्त्व [1]स्थूलकुंभमें, सूक्ष्म लिंग भरचो ज्यूं तोय[2] ॥
इहाँ जीव आभास जानु उत, ब्रह्म इंदु प्रतिबिंब[3] जु दोय ॥
घट फूटे जल गयो विलय ह्वै, अंतःकरण कहै नहिं कोय ॥
तब प्रतिबिंब मिलै शशिही माहि, सुंदर जीव ब्रह्ममय होय॥ ३४॥

मनहर छंद ॥

जैसे व्योम कुंभके, बाहिर अरु भीतर है;
कोऊ नर कुंभकूं, हजारकोश ले गयो ॥
ज्यूंही व्योम इहां त्यूंही, उहां पुनि है अखंड;
इहां न विछोह न, उहां मिलापके भयो ॥
कुंभ तौ नयो पुरानौ, होइके विनाशि जाइ;
व्योम तौ न ह्वै पुरानो, न तौ कछु ह्वै नयो ॥
तैसेही सुंदर देह, आवै रहै नाश होइ;
आतमा अचल अविनाशी है अनामैयो[4] ॥ ३५॥
देहके संयोगहीते, शीत लगै घाम लगै
देहके संयोगहीते, क्षुधा तृषा पौनकूं ॥
देहके संयोगहीते, कटुके[5] मधुर स्वाद;
देहके संयोग कहै, खाटो खारो लौनकूं ॥
देहके संयोग कहै, मुखते अनेक बात,
देहके संयोगही, पकरि रहै मौनकूं ॥
सुंदर देहके योग, दुःख मानै सुख मानै,

---

१ भारीघडा । २ जल । ३ परछाईं । ४ रोगराहित । ५ करुवा ।

देहको संयोग गये, दुःख सुख कौनकूं ॥ ३६ ॥
आपकी प्रसंशा सुनि, आपही खुशाल होइ;
आपहीकी निंदा सुनि, आप मुरझाइ है ॥
आपहीकूं सुख मानि, आप सुख पावत है;
आपहीकूं दुःख मानि, आप दुःख पाइ है ॥
आपहीकी रक्षा करै, आपहीकी घात करै;
आपही हत्यारो होइ, गंगा जाइ न्हाइ है ॥
सुंदर कहत ऐसे, देहहीकूं आप मानि;
निजरूप भूलिके करत हाइ हाइ है ॥ ३७ ॥

इति सांख्यज्ञानको अंग संपूर्ण ॥ २३ ॥

अथ अपने भावको अंग ॥ २४ ॥

इंदव छंद ॥

एकहि आपनु भाव जहाँ तहँ, बुद्धिके योगते विभ्रम भासै ॥
जो यह क्रूर तु क्रूर वही पुनि, याके खसेते उहाँ पुनि खासै ॥
जो यह साधु तु साधु वहै पुनि, याके हँसेते उहाँ पुनि हासै ॥
जैसहि आप करै मुख सुंदर, तैसहि दर्पण माहिँ प्रकाशै ॥ १ ॥

मनहर छंद ॥

जैसे श्वान काचके सदँनमध्य देखि और,
भूंकि भूंकि मरत करत अभिमाँन जू ॥
जैसे गज फाटिक शिलासूं लरि तोरै दंत

---

१ घरके भीतर। २ अहंकार।

जैसे सिंह कूपमाहिं, उझक भुलान जू ॥
जैसे कोउ फेरि खात, फिरत सु देखै जग;
तैसेही सुंदर सब, तेरोही अज्ञान जू ॥
अपनोही भ्रम सो तौ, दूसरो दिखाइ देत;
आपकूं विचारे कोऊ, देखिये न आन जू ॥ २ ॥
नीच-ऊंच-भलो बुरो, सज्जन दुर्जन पुनि;
पंडित-मूरख शत्रु-मित्र रंक-राव है ॥
मान-अपमान पुण्य-पाप सुख-दुःख सोऊ;
स्वरग-नरक बंध-मोक्षहूको चाव है ॥
देवता-असुर भूत-प्रेत कीट[1]-कुंजरहूं[2];
पशु अरु पक्षी श्वान[3], शूकर बिलाव है ॥
सुंदर कहत यह, एकही अनेक रूप;
जोई कछु देखिये सो, अपनोही भाव है ॥ ३ ॥
याहीके जागत काम, याहीके जागत क्रोध;
याहीके जागत लोभ, येही मोह माता है ॥
याहीको तौ याही वैरी, याहीको तौ याही मित्र;
याकूं याही सुख देत, याही दुःखदाता है ॥
याही ब्रह्मा याही रुद्र, याही विष्णु देखियत;
याही देव दैत यक्ष, सकल संघाता है ॥
याहीको प्रभाव सो तौ, याहीकूं दिखाइ देत;
सुंदर कहत येही, आतमा विख्याता है ॥ ४ ॥
याहीको तौ भाव याकूं शंक उपजावत है;
याहीको तौ भाव याही, निःशंक करतु है ॥

---

१ कीड़ा । २ नाग–हाथी–वारण । ३ कुत्ता । ४ फल । ५ प्रकट ।

याहीको तौ भावै याकूं, भूत प्रेत होइ लगै;
याहीको तौ भाव याकी, कुमति हरतु है ॥
याहीको तौ भाव याही, वायुको बघूरा करै;
याहीको तौ भाव याही, थिरके धरतु है ॥
याहीको तौ भाव याकूं, धारमें बहाइ देत;
सुंदर याहीको भाव, याहि ले तरतु है ॥ ५ ॥
आपहीको भाव सो तौ, आपकूं प्रगट होत;
आपही आरोप करि, आप मन लायो है ॥
देवी अन्य देव कोऊ, भावकूं उपासै ताहीं;
कहै मैं तौ पुत्र धन, इनहींते पायो है ॥
जैसे श्वान हाड़कूं चचोरि करि मानै मोद;
आपहीको मुख फोरि, लोहू चाटि खायो है ॥
तैसेही सुंदर यह आपुही चेतन आहि;
अपने अज्ञान करि, औरसूं बँधायो है ॥ ६ ॥

इंदव छंद ॥

नीचेते नीचे रु ऊँचेते ऊपर, आगेते आगे रु पीछेते पीछो ॥
दूरते दूर नजीकते नेरेहु, आड़ेते आड़ोहि तीछेते तीछो ॥
बाहिर भीतर भीतर बाहिर, ज्यूं कोउ जानत त्यूं कर ईछो ॥
जैसोहि आपनो भाव है सुंदर, तैसोहि है दृग खोलिके पीछो ॥ ७ ॥
आपने भावते शूरसों दीसत, आपने भावते चंद्रसों भासै ॥
आपने भावते तारे अनंत जु, आपने भावते वीज चकासै ॥
आपने भावते नूर है तेज है, आपने भावते ज्योति प्रकाशै ॥
तैसोहि ताहि दिखावत सुंदर, जैसोहि होत है जाहिको आशै ॥ ८ ॥

---

१ मनकी भावना-कामना। २ दुष्टबुद्धि। ३ पवन-हवा-समीर। ४ प्रसन्नता।

आपने भावते सेवक साहिब, आपने भाव सबै कोउ ध्यावै ॥
आपने भावते अन्य[1] उपासत, आपने भावते भक्तहु गावै ॥
आपने भावते दुष्ट संहारन, आपने भावते बाहिर आवै ॥
जैसोहि आपनो भाव है सुंदर, ताहिकुँ तैसोहि होइ दिखावै॥९॥
आपने भावते दूर बतावत, आपने भाव नजीक बखान्यो ॥
आपने भावते दूध पियावत, आपने भावते बीठल जान्यो ॥
आपने भावते चारिभुजा पुनि, आपने भावते सिंहसो मान्यो ॥
सुंदर आपने भावको कारण, आपहि पूरणब्रह्म पिछान्यो १०॥
आपने भावते होइ उदास जु, आपने भावते प्रेमसूँ रोवै ॥
आपने भाव मिल्यो पुनि जानत, आपने भावते अंतर[2] जोवै[3] ॥
आपने भाव रहै नित जाग्रत, आपने भाव समाधिमें सोवै ॥
सुंदर जैसोहि भाव है आपनो, तैसोहि आप तहाँ तहँ होवै ११॥
आपने भावते भूलि पर्‍यो भ्रम, देहस्वरूप भयो अभिमानी ॥
आपने भावते चंचलता अति, आपने भावते बुद्धि थिरानी ॥
आपने भावते आप बिसारत, आपने भावते आतम-ज्ञानी ॥
सुंदर जैसोहि भाव है आपनो, तैसोहि होइ गयो यह प्रानी॥१२॥

इति अपने भावको अंग संपूर्ण ॥ २४ ॥

अथ जगत्मिथ्याको अंग ॥२५॥

मनहर छंद ॥

किये न विचार कछु, भनक परी है कान;
धारि आइ सुनि करि, डरि विष खायो है ॥
जैसे कोई अनछतो, ऐसेही बुलाइयत,

---

१ दूसरा—आन । २ गुप्त । ३ देखना ।

वार वीत गई पर, कोऊ नहीं आयो है ॥
वेदहु वरणिके जगत-तरु[1] ठाढ़ो कियो;
अंत पुनि वेद जर मूलते उठायो है ॥
तैसेही सुंदर याको, कोई एक पावै भेद;
जगतको नाम सुनि, जगत भुलायो है ॥ १ ॥
ऐसोहि अज्ञान कोई, आयके प्रगट भयो;
दिव्य-दृष्टि दूर गई, देखै चाम-दृष्टिकूं[2] ॥
जैसे एक आरसी, सदाही हाथमाहिं रहै;
सुमुख न देखै फेर, फेर देखै पृष्टिकूं[3] ॥
जैसे एक व्योम पुनि, बादरसूं छाइ रह्यो;
व्योम नहिं देखत, देखत बहु वृष्टिकूं[4] ॥
तैसे एक ब्रह्महि, विराजमान सुंदर है;
ब्रह्मकूं न देखै कोऊ, देखै सब सृष्टिकूं[5] ॥ २ ॥
अनछतो जगत अज्ञानते प्रगट भयो;
जैसे कोई बालक वेताल देखि डरयो है ॥
जैसे कोई स्वपनेमें, दाब्यो है ओथारे आइ;
मुखते न आवै बोल, ऐसो दुःख परयो है ॥
जैसे अँधियारी रैन, जेवरी न जानै ताहिं;
आपहिते साँप मानि, भय अति करयो है ॥
तैसेही सुंदर एक, ज्ञानके प्रकाश बिनु;
आप दुःख पाय आय, आप पचि मरयो है ॥ ३ ॥
मृत्तिका समाइरही भाजनके रूपमाहिं;
मृत्तिकाको नाम मिटि, भाजनहि गह्यो है ॥
कनक समाइ ज्यूंही, होई रह्यो आभूषण;

---

१ संसाररूपीवृक्ष । २ चमरदृष्टि । ३ पीठ । ४ वर्षा । ५ रचना ।

कनक कहे न कोइ, आभूषण कह्यो है ॥
बीजहू समाइ करि, वृक्ष होइ रह्यो पुनि;
वृक्षहीकूं देखियत, बीज नाहिं लह्यो है ॥
सुंदर कहत यह, यूंही करि जान्यो सब;
ब्रह्महीं जगत होइ, ब्रह्म दूरि रह्यो है ॥ ४ ॥
कहत है देहमाहिं, जीव आइ मिलि रह्यो;
कहाँ देह कहाँ जीव, वृथा चूक पर्‍यो है ॥
बूड़वेके डरते, तरनको उपाव करै;
ऐसे नाहिं जानै यह, मृगजल[१] भर्‍यो है ॥
जेवरीको साँप मानि, सीपविषे रूपो जानि;
औरको औरहि देखि, यूंही भ्रम कर्‍यो है ॥
सुंदर कहत यह, एकही अखंडब्रह्म;
ताहिकूं पलटिके जगत नाम धर्‍यो है ॥ ५ ॥

इति जगत् मिथ्याको अंग संपूर्ण ॥ २५ ॥

अथ अद्वैतज्ञानको अंग ॥ २६ ॥

इंदव छंद ॥ (प्रश्नोत्तर) ॥

हौ तुम कौन ? हुं ब्रह्म अखंडित, देह में क्यूं नहिं ? देहके नेरे ॥
बोलत कैसे ? कहूं नहिं, बोलत, जानिय कैसे ? अज्ञान है तेरे ॥
दूर करौ भ्रम निश्चय धारि, कहौ गुरुदेव कहूं नित टेरे ॥
हौ तुम ऐसे तु हूं पुनि ऐसेहि, दोइ नहीं नहिं द्वैतहि मेरे ॥ १ ॥

---

१ मृगजल वह है जब कि जेठ वैसाखके दिनोंमें दुपहरके समय सूर्य्यकी प्रचण्ड किर्णोंकिसी अपारदर्शक वस्तुपर पड़कर नाचने लगती हैं और जलकी कांति प्रकट करतीहैं।

बोधोक्ति ॥

हूं कछु और कि तूं कछु और कि, ये कछु और कि सो कछु औरै
हूं अरु तूं यह है कछु सो पुनि, बुद्धिविलास भयो झकझौरै
हूं नहिं तू नहिं है कछु सो नहिं, बूझ विना जितही तित दौरै
हूं पुनि तूं पुनि है कछु सो पुनि, सुंदर व्यापि रह्यो सब ठौरै ॥१
उत्तम मध्यम और शुभाशुभ[1], भेद अभेद जहाँ लग जो है
दीसत भिन्न तवो अरु दर्पण[2], वस्तु विचारत एकहि लो है
जो सुनिये अरु दृष्टि परै कछु, वा विन और कहूं अब को है
सुंदर सुंदर व्यापि रह्यो सब, सुंदरमें पुनि सुंदर सो है ॥३
ज्यूं वन एक अनेक भये द्रुम, नाम अनंतनि जातिहु न्यारी
वापि तड़ाग रु कूप नदी सब, है जल एक सु देखु निहारी
पावक एक प्रकाश बहूविधि, दीप चिराग मसालहु वारी
सुंदर ब्रह्म विलास अखंडित, भेद अभेदकि बुद्धि सु टारी ॥४
एक शरीरमें अंग भये बहु, एक धँरापर[3] धाँम[4] अनेका
एक शिलामहँ[5] कोर किये सब; चित्र बनाइ धरे इकठेका
एक समुद्र तरंग अनेकहु, कैसे जु कीजिय भिन्न विवेका
द्वैत कछू नहिं देखिय सुंदर, ब्रह्म अखंडित एकको एका ॥५
ज्यूं मृतिका घट नीर तरंगहि, तेज मसाल किये जु बहूता
वाय बघूरनि गांठ परी बहु, वादल व्योमसु व्योम जु भूता
वृक्ष सु बीजहि बीज सु वृक्षहि, पूत सु बापहि बाप सु पूता
वस्तु विचारत एकहि सुंदर, तांन[6] रु वान तु देखिय सूंता[7] ॥६
भूमिहु चेतन आपहु चेतन, तेजहु चेतन है जु प्रचंडा
बायुहिं चेतन व्योमहु चेतन, शब्दहु चेतन पिंड ब्रह्मंडा

---

१ मंगलामंगल । २ आरसी । ३ पृथ्वी । ४ घर । ५ पत्थरतान ।
६ भरनी । ७ सूत ।

है मन चेतन बुद्धिहु चेतन, चित्तहु चेतन आहि उडंडा[1] ॥
जो कछु नाम धरै सुहि चेतन, चेतन सुंदर ब्रह्म अखंडा ॥ ७ ॥
एक अखंडित ब्रह्म विराजत, नाम जुदो करि विश्व कहावै ॥
एकहि ग्रंथ पुराण बखानत, एकहि दत्त वसिष्ठ सुनावै ॥
एकहि अर्जुन उद्धवसूं कहि, कृष्ण कृपा करिके समुझावै ॥
सुंदर द्वैतै[2] कछू मति जानहु, एकहि व्यापक वेद बतावै ॥८॥

मनहर छंद (प्रश्नोत्तर)

शिष्य पूछै गुरुदेव, गुरु कहै पूछ शिष्य;
मेरे एक संशय है, क्यूं न पूछै अबही ॥
तुम कहो एक ब्रह्म, अजहूं मैं कहूं एक;
एकता अनेकताको, यह भ्रम सबही ॥
भ्रम यह कौनकूं है, भ्रमाहिकूं भ्रम भयो;
भ्रमहिकूं भ्रम कैसे, तू न जानै कबही ॥
कैसे करि जानूं प्रभु, गुरु कहै निश्चै धरि;
निश्चैऐसे जान्यो अब, एक ब्रह्म तबही ॥ ९ ॥

बोधोक्ति ॥

ब्रह्म है ठौरको ठौर, दूसरो न कोऊ और;
वस्तुको विचार किये, वस्तु पहिचानिये ॥
पंचतत्त्वै[3] तीनगुण, विस्तरे विविधै[4] भांति;
नाम रूप जहां लगि, मिथ्या माया मानिये॥
शेषनाग आदि देके, वैकुंठ गोलोक पुनि;
वचन विलासैं[5] सब, भेद भ्रम भानिये ॥
नतौ कछु उरझ्यो[6] न, सुरझ्यो कहूं सो कौन;

---

१ प्रबल । २ द्विविधा । ३ आग, पानी, वायु, आकाश, पृथ्वी ये पंचतत्त्वहैं । ४ अनेक । ५ केलि-विनोद । ६ लिपटना ।

सुंदर सकल यह, उहावाही जानिये ॥ १० ॥
प्रथमहि देहमेंतें, बाहिरकूं चूकि परचो;
इंद्रिय व्यापार सुख सत्य करि जान्यो है ॥
कोउक संयोग पाइ, सद्गुरुसूं भेट भई;
उन उपदेश देके, भीतरकूं आन्यो है ॥
भीतरके आवतहि, बुद्धिको प्रकाश भयो;
कौन देह कौन मैं, जगत किन मान्यो है ॥
सुंदर विचारत यूं, उपजै अद्वैत ज्ञान;
आपकूं अखंड ब्रह्म, एक पहिचान्यो है ॥ ११ ॥

हंसाल छंद ॥

सकल संसार विस्तार करि वरणियो, स्वर्ग पाताल मृत ब्रह्महीहै
एकते गिनतही गिनिय जो सौ लगे, फेरि करि एकको एकहीहै
ये नहीं ये नहीं रहै अवशेष सो, अंतही वेदने यूं कही है
कहत सुंदर सही अपनपो जानु जब, आपने आपमें आपही है॥१
एक तू दोय तू तीन तू चार तू, पांच तू तत्त्वते जगत कीयो
नाम अरु रूप ह्वै बहुत विधि विस्तरचो,तुम बिना औरको नाहिं बीयो
राव तू रंक तू दीन तू दानि तू, दोइ करि मेलते लीय दीयो
सकलही एह तुवमाहिं उपजै खपै, कहत सुंदर बड़ो विपुल हीयो॥

मनहर छंद ॥

तोहिमें जगत यह, तूहि है जगतमाहिं;
तोमें अरु जगतमें, भिन्नता कहां रही ॥
भूमिहीते भाजन अनेक विधि नाम रूप;

१ भूल । २ कार्य्य । ३ सच्चागुरु । ४ एकता । ५ फैलाव । ६ मृत्यु
लोक । ७ बाकी ८ दाता । ९ पचना, नष्टहोना । १० अधिक ।

भाजन[1] विचारि देखे, उहै एक है मही[2] ॥
जलते तरंग[3] फेन, बुद्बुदा अनेक भांति;
सोउ तौ विचारे एक, वंहै जल है सही ॥
जेते महापुरुष हैं, सबको सिद्धांत एक;
सुंदर अखिल[4] ब्रह्म, अंत वेद ये कही ॥ १४ ॥
जैसे ईख रसकी मिठाई, भांति भांति भई;
फेरि करि गारे, इक्षु रसही लहतु है ॥
जैसे घृत थीजके डरासो बांधि जात पुनि;
फेर पिघलेते वह घृतही रहतु है ॥
जैसे पानी जमीके पषाण हू सो देखियत;
सो पषाण फेरि पानी, होयके बहतु है ॥
तैसेही सुंदर यह जगत है ब्रह्ममय;
ब्रह्म सो जगतमय, वेद सु कहतु है ॥ १५ ॥
जैसे काठ कोरी तामें, पूतरी बनाय राखी;
जो विचारि देखिये तो, उहै एक दार है ॥
जैसे माला सूतहूकी, मणिकाहू सूतहिके;
भीतरहू पोयो पुनि, सूतहीको तार है ॥
जैसे एक समुद्रके, जलहीको लौण भयो;
सोउ तौ विचारे पुनि, उहै जल खार है ॥
तैसेही सुंदर यह, जगत सो ब्रह्ममय;
ब्रह्म सो जगतमय, याही निरधार है ॥ १६ ॥
जैसे एक लोहके, हथ्यार नाना विध किये;
आदि-मध्य-अंत एक, लोहही प्रमानिने ॥

---

१ वर्तन-पात्र । २ पृथ्वी-धरती-सुवर्ण । ३ लहर । ४ सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड ।

जैसे एक कंचनमें, भूषण अनेक भये;
आदि-मध्य-अंत एक, कंचनही जानिये ॥
जैसे एक मेनके, सँवारे नर हाथी यह;
आदि-अंत-मध्य एक, मेनही बखानिये ॥
तैसेही सुंदर यह, जगत सो ब्रह्ममय;
ब्रह्म सो जगतमय, निश्चै करि मानिये ॥ १७ ॥
ब्रह्ममें जगत यह, ऐसी विधि देखियत;
जैसी विधि देखियत, फूलरी महीरमें ॥
जैसी विधि गिलिम दुलीचेमें अनेक भांति;
जैसी विधि देखियत, चूनरीहु चीरमें ॥
जैसी विधि कांगुरेहु, कोट पर देखियत;
जैसी विधि देखियत, बुदबुदा नीरमें ॥
सुंदर कहत लीक, हाथ परी देखियत;
जैसी विधि देखियत, शीतला शरीरमें ॥ १८ ॥
ब्रह्म अरु माया जैसे, शिव अरु शक्ति पुनि;
पुरुष प्रकृति दोउ, कहिके सुनाये हैं ॥
पति अरु पत्नी ईश्वर अरु ईश्वरीहु;
नारायण लक्ष्मी द्वै, वचन कहाये हैं ॥
जैसे कोई अर्धनारी, नटेश्वर रूप धरै;
एक बीजहूते दोऊ, दाली नाम पाये हैं ॥
तैसेही सुंदर वस्तु, ज्यूं है त्यूंही एकरस;
उभय प्रकार होइ, आपही दिखाये हैं ॥ १९ ॥

---

१ सुवर्ण । २ स्त्री । ३ लक्ष्मी ।

इंदव छंद ॥

ब्रह्म निरीह निरामय निर्गुण, नित्य निरंजन और न भासै ॥
ब्रह्म अखंडित है अध ऊरध, बाहिर भीतर ब्रह्म प्रकासै ॥
ब्रह्महि सूक्षम थूल जहां लगि, ब्रह्महि साहिब ब्रह्महि दासै ॥
सुंदर और कछू मत जानहु, ब्रह्महि देखत ब्रह्म तमासै॥२०॥
ब्रह्महि माहिं विराजत ब्रह्महि, ब्रह्मविना जनि औरहि जानौ ॥
ब्रह्महि कुंजरै कीटहु ब्रह्महि, ब्रह्महि रंक रु ब्रह्महि रानौ ॥
कालहि ब्रह्म स्वभावहु ब्रह्महि, कर्महु जीवहु ब्रह्म बखानौ ॥
सुंदर ब्रह्म विना कछु नाहिंन, ब्रह्महि जानि सबै भ्रम भानौ२१॥
आदि हुतो सुहि अंतहि है पुनि, मध्य कहा कछु और कहावै ॥
कारण कारज नाम-धरै पुनि, कारज कारणमाहिं समावै ॥
कारज देखि भयो विच विभ्रम, कारण देखि विभ्रम बिलावै ॥
सुंदर निश्चय ये अभिअंतर, द्वैत गये फिरि द्वैत न आवै ॥२२॥

मनहर छंद ॥

द्वैत करि देखै जब, द्वैतही दिखाई देत;
एक करि देखै तब, उहै एक अंग है ॥
सूरजकूं देखै जब, सूरज प्रकाशि रह्यो;
किरणकूं देखै तौ, किरण नाना रंग है ॥
भ्रम जब भयो तब, माया ऐसो नाम धरचो;
भ्रमके गयेते, एक ब्रह्म सरवंग है ॥
सुंदर कहत याकी, दृष्टिहूको फेर भयो;
ब्रह्म अरु मायाके तौ, माथे नाहिं शृंगहै ॥ २३ ॥
श्रोत्र कछु और नाहिं, नेत्र कछु और नाहिं;

१ चेष्टारहित। २ रोगरहित। ३ हाथी। ४ सन्देह।

नाशा कछु और नाहिं, रसना न और है ॥
त्वक[1] कछु और नाहिं, वाक[2] कछु और नाहिं;
हाथ कछु और नाहिं, पावँनकी दौर है ॥
मन कछु और नाहिं, बुद्धि कछु और नाहिं;
चित्त कछु और नाहिं, अहंकार तौर है ॥
सुंदर कहत एक, ब्रह्मविना और नाहिं;
आपहिमें आप व्यापि, रह्यो सब ठौर है ॥ २४ ॥

इति अद्वैतज्ञानको अंग संपूर्ण ॥ २६ ॥

अथ ब्रह्म निःकलंक को अंग ॥ २७ ॥

मनहर छंद ॥

एक कोउ दाता गउ, ब्राह्मणकूं देत दान;
एक कोउ दयाहीन, मारत निशंक है ॥
एक कोउ तपस्वी, तपस्यामाहिं सावधान;
एक कोउ काम क्रीड़ा, कामिनीको अंक है ॥
एक कोउ रूपवंत, अधिक विराजमान;
एक कोउ कोढ़ि कोढ़, चूवत करंक[3] है ॥
आरसीमें प्रतिबिंब, सबहीको देखियत;
सुंदर कहत ऐसे, ब्रह्म निःकलंक है ॥ १ ॥
रविके प्रकाशते, प्रकाश होत नेत्रन को;
सब कोउ शुभाशुभ, कर्मकूं करतु है ॥
कोउ यज्ञ दान तप, जप नेम व्रत कोउ;

१ खाल। २ वाणी। ३ मज्जा—पीब।

इंद्रि वश करि कोउ, ध्यानकूं धरतु है ॥
कोउ परदारा, परधनकूं तकत जाइ;
कोउ हिंसा करि करि, उदर भरतु है ॥
सुंदर कहत ब्रह्म, साक्षीरूप एकरस;
याहीमें उपजि करि, याहीमें मरतु है ॥ २ ॥
जैसे जलजंतु जलहीमें, उतपन्न होय;
जलहीमें विचरत, जलके आधार है ॥
जलहीमें क्रीड़ा करि, विविध व्योहार होत;
काम क्रोध लोभ मोह, जलमें संहार है ॥
जलकूं न लागै कछु, जीवनके राग द्वेष;
उनहीके क्रिया कर्म, उनहीके लार है ॥
तैसेही सुंदर यह, ब्रह्ममें जगत सब;
ब्रह्मकूं न लागै कछु, जगत विकार है ॥ ३ ॥
स्वेदज[1] जरायुज[2] अंडज[3], उदभिज[4] पुनि;
चार खानि तिनके, चौराशीलक्ष जंत हैं ॥
जलचर थलचर, व्योमचर भिन्न भिन्न;
देह पंच भूतनकी, उपजि खपंत हैं ॥
शीत घाम पवन, गगनमें चलत आइ;
गगन अलिप्त जामें, मेघहू अनंत हैं ॥
तैसेही सुंदर यह, सृष्टि सब ब्रह्ममाहिं;
ब्रह्म निःकलंक सदा, जानत महंत हैं ॥ ४ ॥

इति ब्रह्म निःकलंकको अंग संपूर्ण ॥ २७ ॥

---

१ पसीनेसे पैदाहुये जीव । २ पिंडजपशु मनुष्यादि । ३ अंडोंसे पैदा-हुये जीव चिड़िया इत्यादि । ४ स्थावर—वृक्षादि ।

अथ शूरातनको अंग ॥ २८ ॥

मनहर छंद ॥

सुनत नगारे चोट, विकसै[1] कमल मुख;
अधिक उछांह[2] फूल्यो, मायहू[3] न तनमें ॥
फेरै जब सांग[4] तब, कोई नहिं धीर धरै;
कायर[5] कंपायमान, होत देखि मनमें ॥
कूदके पतंग[6] जैसे, परत पावकमाहिं[7];
ऐसे टूटि परै बहु, सांवतके घनमें ॥
मारि घमसान[8] करि, सुंदर जुहारै[9] श्याम;
सोई शूरवीर रोपि, रहै जाइ रनमें[10] ॥ १ ॥
हाथमें गहै खड्ग[11], मारवेकूं एक पग;
तन मन अपनो समरपण कीनो है ॥
आगे करि मीचकूं[12] जु, परयो डाकि रण बीच;
टूक टूक होइके, भगाइ दल दीनो है ॥
खाइ लौन श्यामको, हरामखोर कैसे होइ;
नामयाद जगतमें, जीत्यो पन तीनो है ॥
सुंदर कहत ऐसो, कोउ एक शूरवीर;
शीशकूं उतारिके, सुयश जाइ लीनो है ॥ २ ॥
पाँव रोपि रहै रणमाहिं रजपूत[13] कोउ;

---

१ फूलकी कलियोंका फूलना। २ आनंद। ३ नहीं समाताहै शरीरमें। ४ अस्त्रका नामहै। ५ डरपोक। ६ पांखी-कीड़े। ७ अग्नि में। ८ घूमधाम। ९ बंदगी करना। १० संग्राम। ११ तलवार। १२ मृत्युमें। १३ ठाकुर-क्षत्रिय।

हय गज गाजत जुरत जहां दल है ॥
बाजत जुझाऊ सहनाई सिंधु राग पुनि;
सुनतहि कायरकि, छूटि जात कल है ॥
झलकत बरछी, तिरछी तरवार बहैं;
मार मार करत परत खल भल है ॥
ऐसे युद्धमें अडिग्गे,[1] सुंदर सुभट सोइ;
घरमाहिं शूरमा कहावत सकल है ॥ ३ ॥
असन[2] बसन[3] बहु, भूषण सकल अंग;
संपत्ति विविध भांति, भरचो सब घर है ॥
श्रवण नगारो सुनि, छिनकमें छांड़ि जात;
ऐसे नाहिं जानै कछु, मेरो वहां मर है ॥
मनमें उछाह रणमाहिं, टूक टूक होइ;
निर्भय निःशंक वाके, रंचहू न डर है ॥
सुंदर कहत कोउ, देहको ममत्व नाहिं;
शूरमाको देखियत, शीश बिनु धर है ॥ ४ ॥
जूझवेको चाव जाके, ताकि ताकि करै घाव;
आगे धरि पावँ फिर, पीछे न सँभारि है ॥
हाथ लिये हथियार, तीछन लगावे धार;
बार नहिं लागै सब, पिसुन प्रहारि है ॥
वोट नहिं राखै कछु, लोटपोट होइ जाइ;
चोट नहिं चूकै शीश, रिपुको उतारि है ॥
सुंदर कहत ताहि, नेकहू न शोच पोच;
सोई शूरवीर धीर, मर जाइ मारि है ॥ ५ ॥
अधिक आजानबाहु, मनमें उछाह किये;
दीये गज ढाहि मुख, वरषत नूर है ॥

---

१ मनमें कायरता न हो—पैर पीछे नपड़ै। २ भोजन। ३ वस्त्र।

काढ़ै जब तरवार, बाल सब ठाढ़े होइँ;
अति विकराल पुनि, देखत करूर है ॥
नेक न उसास लेत, फौजकूं फिटाइ[2] देत;
खेत[3] नाहिं छांड़ै मारि, करै चकचूर है ॥
सुंदर कहत ताकी, कीरति प्रसिद्ध होइ;
सोइ शूरवीर धीर, श्यामके हजूर है ॥ ६ ॥
ज्ञानको कवँच[4] अंग[5], काहुसूं न होइ भंग;
टोप शीश झलकत[6], परम विवेक है ॥
तन ताजी[7] असवार, लीये समशेर[8] सार;
आगेहीकूं पावँ धरै, भागनेकी टेक[9] है ॥
छूटत बंदूक बान, मचै जहां घमसान;
देखिके पिसुन[10] दल, मारत अनेक है ॥
सुंदर सकल लोकमाहिं, ताको जैजैकार;
ऐसो शूरवीर कोऊ, कोटिनमें एक है ॥ ७ ॥
शूरवीर रिपुं सनमुख, देखि चोट करै;
मारै तब ताकि ताकि, तरवार तीरसूं ॥
साधु आठौ याम बैठो, मनहीसूं युद्ध करै;
जाके मुहँ माथो नहिं, देखिये शरीर सूं ॥
शूरवीर भूमि पर, दूरहीते दौरि लगै;
साधु सों न कोप करै, राखै धरि धीरसूं ॥
सुंदर कहत तहां, काहुको न पावँ टिकै;
साधुको संग्राम है, अधिक शूरवीर सूं ॥ ८ ॥
खैंचि करड़ी कमान, ज्ञानको लगायो बान;
मारचो महाबल मन, जग जिन रान्यो है ॥

---

१ भयानक। २ हटादेना। ३ मैदान। ४ बख्तर। वख्तर। ५ बदन-शरीर-देह। ६ प्रकाशित-शोभित। ७ घोड़ा। ८ तरवार। ९ प्रण। १० शत्रु।

ताके अगवानी पंच, योधाहू कतल[1] किये;
और रह्यो परचो सब, अरि दल[2] भान्यो[3] है ॥
ऐसो कोउ सुभट[4], जगतमें न देखियत;
जाके आगे कालहूसों, कंपिके परान्यो[5] है ॥
सुंदर कहत ताकी, शोभा तिहूंलोक माहिं;
साधुसों न शूरवीर, कोई हम जान्यो है ॥ ९ ॥

कामसों प्रबल महा, जीते जिन तीन लोक;
सो तौ एक साधुके, विचार आगे हारचो है ॥
क्रोधसों कराल जाके, देखत न धीर धरै;
सोउ साधु क्षमाके, हथ्यारसूं विदारचो[6] है ॥
लोभ सों सुभट साधु, तोपसूं गिराय दियो;
मोहसों नृपति साधु, ज्ञानसूं प्रहारचो है ॥
सुंदर कहत ऐसो, साधु कोउ शूरवीर;
ताकी ताकी सबही, पिसुनँ[7] दल मारचो है ॥ १० ॥

मारे काम क्रोध सब, लोभ मोह पीसि डारे;
इंद्रिहु कतल करि, कियो रजपूतो है ॥
मारचो महामत्त मन, मारे अहंकार मीन;
मारे मद मत्सर हू, ऐसो रण रूतो है ॥
मारी आशा तृष्णा पुनि, पापिनी साँपिनी दोउ;
सबको प्रहार करि, निज पद पूतो है ॥ ॥
सुंदर कहत ऐसो, साधु कोई शूरवीर;
वैरि सब मारिके निचिंत होइ सूतो है ॥ ११ ॥

कियो जिन मन हाथ, इंद्रिनको सब साथ;

---

१ मारडाला । २ शत्रुकीसैन्य । ३ नाश किया । ४ योद्धा । ५ भागना । ६ फारना । ७ चुगुलखोर ।

घेरि घेरि आपनेही, नाथसूं लगाये हैं ॥
औरहू अनेक वैरी, मारे सब युद्ध करि;
काम-क्रोध लोभ-मोह, खोदके बहाये हैं ॥
कियो है संग्राम[1] जिन, दियो है भगाइ दल;
ऐसे महा सुभट सु, ग्रंथनमें गाये हैं ॥
सुंदर कहत और, शूर यूंहि खोपि[2] गये;
साधु शूरवीर वेई, जगतमें आये हैं॥१२॥
महामत्त हाथी मन, राख्यो है पकरि जिन;
अतिहि प्रचंड[3] जामें, बहुत गुमान है ॥
काम क्रोध लोभ मोह, बांधे चारौ पाँव पुनि;
छूटने न पावैं नेक, प्राण पीलवान[4] है ॥
कबहूँ जो करै जोर, सावधान सांझ भोर;
सदा एक हाथमें, अंकुश गुरु ज्ञान है ॥
सुंदर कहत और काहुके न वश होइ;
ऐसो कौन शूरवीर, साधुके समान है ॥ १३ ॥

इति शूरातनको अंग संपूर्ण ॥ २८ ॥

अथ साधुको अंग ॥ २९ ॥

इंदव छंद ॥

प्रीति प्रचंड लगै परब्रह्महि, और सबै कछु लागत फीको ॥
शुद्ध ह्वै मन होइ सु निर्मल, द्वैत प्रभाव मिटै सब जीको ॥
गोष्टि रु ज्ञान अनंत चलै जहँ, सुंदर जैसु प्रवाह नदीको ॥

---

१ लड़ाई । २ बिलायगये । ३ तेज । ४ हाथीवान ।

ताहिते जानि करौ निशिवासर, साधुको संग सदा अतिनीको १॥
जो कोइ जाइ मिलै उनसूं नर, होत पवित्र लगै हरि रंगा॥
दोष कलंक सबै मिटि जाइँ सु, नीचहु जाइ जु होत उतंगो[1]॥
ज्यूं जल और मलीन महाअति, गंग मिल्यो हुइ जातहि गंगा॥
सुंदर शुद्ध करै ततकाल जु, है जगमाहिं बड़ो सतसंगा॥२॥
ज्यूं लट भृंग करै अपने सम, तास जु भिन्न कहै नहिं कोई॥
ज्यूं द्रुमे[2] और अनेकन भांतिन, चंदनके ढिग चंदन होई॥
ज्यूं जल क्षुद्र[3] मिलै जब गंगहि, होइ पवित्र उहै जल सोई॥
सुंदर जाति स्वभाव मिटै सब, साधुकि संगति साधुहि होई॥३॥
जो कोउ आवत है उनके ढिग, वाहि सुनावत शब्द सँदेसो॥
ताहिकूँ तैसिहि औषधि लावत, जाहिकुँ रोगहि जानत जैसो॥
कर्म कलंकहि काटत हैं सब, शुद्ध करै पुनि कंचन तैसो॥
सुंदर वस्तु विचारत है नित, संतनको जु प्रभावहि ऐसो॥४॥
जो परब्रह्म मिल्यो कोउ चाहत, तौ नित संत समागमें कीजै॥
अंतर मेटि निरंतर ह्वै करि, ले उनकूं अपनो मन दीजै॥
वे मुखद्वार उचार करैं कछु, सो अनयास सुधारस पीजै॥
सुंदर शूर प्रकाश भयो जब, और अज्ञान सबै तम छीजै॥५॥
जा दिनते सतसंग मिल्यो तब, ता दिनते भ्रम भाजि गयो है॥
और उपाय थके सबही तब, संतनि अद्वय ज्ञान दयो है॥
पोत प्रवालहि क्यूं करि खूवत, एक अमूलक लाल लयो है॥
कौन प्रकार रहै रजनी-तम; सुंदर शूर प्रकाश भयो है॥६॥
संत सदा सबको हित बंछत, जानत है नर बूड़त काढ़ै॥
दे उपदेश मिटाइ सबै भ्रम, ले करि ज्ञान जहाजहि चाढ़ै॥

---

१ ऊंचा। २ वृक्ष—विटप। ३ अपवित्र। ४ मिलाप। ५ इच्छा विचार।

जे विषया सुख नाहिंन छाड़त, ज्यूं कंपि मूठ गहै शठ गाढ़ै ॥
सुंदर वे दुखकूं सुख मानत, हाँटहि हाट विकावत आढ़ै ॥ ७ ॥
सो अनयास तरै भव-सागर, जो संतसंगतमें चलि आवै ॥
ज्यूं कनिहार न भेद करै कछु, आइ चढ़ै तिहि नाव चढ़ावै ॥
ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य रु शूद्र, मलेछ चँडालहि पार लगावै ॥
सुंदर बेर नहीं कछु लागत, या नरदेह अभैपद पावै ॥ ८ ॥
ज्यूं हम खाइ पिवैं अरु ओढ़हिं, तैसेहि ये सबलोक बखानै ॥
ज्यूं जलमें शशिके प्रतिबिंबहि, आप समा जलजंतु प्रमानै ॥
ज्यूं खग छांह धरापर दीसत, सुंदर पंछि उड़ै असमानै ॥
त्यूं शठ देहनके कृत देखत, संतनकी गति क्यू कोउ जानै॥९॥
जो खपरा कर ले घर डोलत, मांगत भीखहि तौ नहिं लाजै ॥
जो सुख सेज पटंबर भूषण, लावत चंदन तौ नहिं राजै ॥
जो कोउ आय कहै मुखते कछु, जानत ताहि बयारहि बाजै ॥
सुंदर संशय दूर भयो सब, जो कछु साधु करै सोइ छाजै॥१०॥
कोउक निंदत कोउक वंदत, कोउक देतहि आइ जु भक्षण ॥
कोउक आय लगावत चंदन, कोउक डारत धूरि ततक्षण ॥
कोउ कहै यह मूरख दीसत, कोउ कहै यह आहि विचक्षण ॥
सुंदर काहुसुँ राग न द्वेष न, ए सब जानहु साधुके लक्षण॥११॥
तात मिलै पुनि मात मिलै सुत, भ्रात मिलै युवती सुखदाई ॥
राज मिलै गज बाजि मिलै सब, साज मिलै मन वांछित पाई ॥
लोक मिलै सुरलोक मिलै, विधि लोक मिलै वैकुंठहु जाई ॥
सुंदर और मिलै सबही सुख, संत समागम दुर्लभ भाई॥१२॥

---

१ बंदर । २ दृढ़—मज़बूत । ३ बाज़ार । ४ बे प्रयत्न । ५ दुःखरूपी समुद्र सम दुनियासे । ६ मल्लाह । ७ चन्द्रमा । ८ छाँह । ९ पक्षी ।

मनहर छंद ॥

देवहू भयेते कहा, इंद्रहू भयेते कहा;
विधिहू[1]के लोकते बहुरि आइयतु है ॥
मानुष भयेते कहा, भूपति[2] भयेते कहा;
द्विजहू[3] भयेते कहा, पार जाइयतु है ॥
पशुहू भयेते कहा, पंछीहू भयेते कहा;
पन्नग[4] भयेते कहा, क्यूं अघाइयतु है ॥
छूटवेको सुंदर उपाय एक साधुसंग;
जिनकी कृपाते अति सुख पाइयतु है ॥ १३ ॥
इंद्राणी शृंगार धरि, चंदन लगायो अंग;
वाहि देखि इंद्र अति, कामवश भयो है ॥
शूकरीहू करदमे[5], बीचमाहिं लोटि करि;
आगे जाइ शूकरको, मन हरि लयो है ॥
जैसो सुख शूकरको, तैसो सुख मघवांको[6];
तैसो सुख नर पशु, पक्षिनकूं दयो है ॥
सुंदर कहत जाके, भयो ब्रह्मानंद सुख;
सोइ साधु जगतमें, जीतिकरि गयो है ॥१४॥
धूलि जैसो धन जाके, शूलि सो संसार सुख;
भूलि जैसो भाग देखै, अंतकसी यारी है ॥
पाप जैसी प्रभुताई, शाप जैसो सनमान;
बड़ाई बिछुन जैसी, नागनीसी नारी है ॥
अग्नि जैसो इंद्र-लोक, विघ्न जैसो विधि-लोक;
कीरति कलंक जैसी, सिद्धिसी ठगारी है ॥

---

१ ब्रह्मा-विधाता । २ राजा । ३ ब्राह्मण । ४ साँप । ५ कूड़ा कीच धूर-नरक । ६ इन्द्र ।

वासना[1] न कोई बाकी, ऐसी मति[2] सदा जाकी;
सुंदर कहत ताहि, वंदना[3] हमारी है ॥ १५ ॥
कामही न क्रोध जाके, लोभही न मोह ताके;
मदही न मत्सर न, कोउ न विकारो है ॥
दुःखही न सुख मानै, पापही न पुण्य जानै;
हरष न शोक आनै, देहहीते न्यारो है ॥
निंदा न प्रशंसा करै, रागही न द्वेष धरै;
लेनहि न देन जाके, कछु न पसारो है ॥
सुंदर कहत ताकी, अगम अगाध गति;
ऐसो कोउ साधु सो तौ, रामजीकूं प्यारो है ॥ १६ ॥
आठौ याम[4] यम नेम, आठौ याम रहै प्रेम;
आठौ याम योग यज्ञ, कीयो बहु दान जू ॥
आठौ याम जप तप, आठौ याम लीयो व्रत;
आठौ याम तीरथमें, करत है स्नान जू ॥
आठौ याम पूजा विधि, आठौ याम आरतिहु;
आठौ याम दंडवत, सुमिरण ध्यान जू ॥
सुंदर कहत जिन, कियो सब आठौ याम;
सोई साधु जाके उर, एक भगवान जू ॥ १७ ॥
जैसे आरसीको मैल, काटत शिकलिगर;
मुखमें न फेर कोऊ, वहै वाको पोत है ॥
जैसे वैद नैनमें, शलाका[5] मेलि शुद्ध करै;
पटल गयेते तहां, ज्यूंकी त्यूंही जोत है ॥
जैसे वायु वादल, विखेरके उड़ाइ देत;

---

१ चाह–इच्छा । २ बुद्धि । ३ नमस्कार । ४ पहर । ५ सेराई ।

रवि[1] तौ आकाशमाहिं, सदाही उदोत[2] है ॥
सुंदर कहत भ्रम, क्षणमें विलाय जात;
साधुहीके संगते स्वरूप ज्ञान होत है ॥ १८ ॥
मृतक[3] दादुर[4] जीव, सकल जिवाये जिन;
वरषत वाणी मुख, मेघकीसी धारकूं ॥
देत उपदेश कोउ, स्वारथ न लवलेश;
निशिदिन करत है, ब्रह्मके विचारकूं ॥
औरहू संदेह सब, मेटत निमिष[5]माहिं;
सूरज मिटाइ देत, जैसे अंधकारकूं ॥
सुंदर कहत हंस, वासी सुखसागरके;
संत जन आए हैं सो, परउपकारकूं ॥ १९ ॥
हीराही न लालही न, पारस न चिंतामणि;
औरहु अनेक नग, कहौ कहा कीजिये ॥
कामधेनु[6] सुरतरु, चंदन नदी समुद्र;
नौकाहू जहाज बैठ, कबहूंक छीजिये ॥
पृथ्वी अप तेज वायु, व्योम लौं सकल जड़;
चंद्र सूर शीतल, तपत गुण लीजिये ॥
सुंदर विचारि हम, शोधि सब देखे लोक;
संतनके सम कहौ, और कहा दीजिये ॥ २० ॥
जिन तन मन प्राण, दीने सब मेरे हेत;
औरहू ममत्त्व बुद्धि, आपनी उठाइ है ॥
जागत हू सोवत हू, गावत हैं मेरे गुण;
करत भजन ध्यान, दूसरी न काई है ॥

---

१ श्रीसूर्य्यनारायण । २ उदयहोतेहैं । ३ मुर्दा । ४ मेढक । ५ पलमात्र । ६ गौ जो सदा दूध देतीहै ।

तिनके मैं पीछे लग्यो, फिरतहूं निशिदिन;
सुंदर कहत मेरी, उनते बड़ाई है ॥
वहै मेरे प्रीय[1] मैं हूं, उनके आधीन सदा;
संतनकी महिमा[2] तौ, श्रीमुख सुनाई है ॥ २१ ॥
जगत व्योहार सब, देखत है ऊपरको;
अंतहकरणकूं तौ, नेंक[3] न पिछान है ॥
छाजनकि भोजनाकि, हलन चलन कछु;
और कोऊ क्रियाकी तौ मध्यही बखान है ॥
आपनेही अवगुण आरोपै अज्ञानी जीव;
सुंदर कहत ताते, निंदाहीकूं ठान है ॥
भाँवमें[4] तौ अंतर[5] है, राति अरु दिनकेसो;
साधुकी परिक्षा[6] कोउ, कैसे करि जान है ॥ २२ ॥
वही दग़ाबाज वही, कुष्ठी[7] जु कलंक भरचो;
वही महापापी वाके, नख़ शिख कीच है ॥
वही गुरुद्रोहि[8], गऊ ब्राह्मण हननहार;
वही आतमाकोघाती, ऐसी वाके बीच है ॥
वही अघको[9] समुद्र, वही अघको पहाड़;
सुंदर कहत वाकी, बुरी भांति मींचं[10] है ॥
वही है मलेछ वही, चांडाल[11] बुरेते बुरो;
संतनकी निंदा करै, सो तौ महानीच है ॥ २३ ॥
परि है बिजूरी ताके, ऊपरसूं अचानक;
धूरि उड़ि जाय कहूं, ठौर नहिं पाइ है ॥

---

१ प्यारा। २ प्रताप। ३ तनक। ४ मतलब। ५ फर्क। ६ इम्तिहान। ७ कोढ़ी। ८ गुरूकाशत्रु। ९ पाप। १० मौत। ११ श्वपच-डोम।

पीछे केउ युग महा, नरकमें परै जाइ;
ऊपरते यमहूकी मार, बहु खाइ है ॥
ताके पीछे भूत प्रेत, थावर जंगम योनि;
सहैगो शंकट तब, पीछे पछताइ है ॥
सुंदर कहत और, भुगतै अनंत दुख;
संतनकूं निंदे[2] ताको, सत्यानाश जाइ है ॥ २४ ॥
कूपमेंको मेंडुक सो, कूपकूं सराहत है;
राजहंससूं कहत, केतो तेरो सर है ॥
मसका कहत मेरी, सैरभर[3] कौन उड़ै;
मेरे आगे गरुडकी, केती एक जर है ॥
गूबरीलां गोलीकू, लुढ़ाई करि मानै मोद;
मधुपकूं निंदत, सुगंधि जाको घर है ॥
अपनी न जानै गति, संतनको नाम धरै;
सुंदर कहत देखौ, ऐसो मूढ़ नर है ॥ २५ ॥
कोउ साधु भजनीक, हूतो लयलीन अति;
कबहूँ प्रारब्ध कर्म, धका आइ दयो है ॥
जैसे कोउ मारगमें, चलत आखरी परै;
फेरि करि उठै तब, वहै पंथ लयो है ॥
जैसे चंद्रमाकी पुनि, कला क्षीण होइ गई;
सुंदर सकल लोक, द्वितियाको नयो है ॥
देवहुको देवातन, गयो तामें कहा भयो;
पीतरको मोल सो तौ, नाहिं कछु गयो है ॥ २६ ॥
ताहिके भगति भाव, उपजत अनायास;

---

१ अथाह । २ अपवाद । ३ बराबरी ।

जाकी मति संतनसूं, सदा अनुरागी है ॥
अति सुख पावै ताके, दुःख सब दूर होइँ;
औरही काहूकी जिन, निंदा सब त्यागी है ॥
संसारकि पाँश काटी, पाइ है परमपद;
सतसंगहीते जाकी, ऐसी मति जागी है ॥
सुंदर कहत ताको, तुरत कल्याण होइ;
संतनको गुण गहै, सोई बड़भागी हैं ॥ २७ ॥
योग यज्ञ जप तप, तीरथ व्रतादि दान;
साधन सकल नाहिं, याकी सरभर है ॥
और देवी देवता, उपासना अनेक भांति;
शंक सब दूर करि, तिनते न डर है ॥
सबहीके शीश पर, पाँव दे मुकति होइ;
सुंदर कहत सो तौ, जनमे न मर है ॥
मन वच काय करि, अंतर न राखै कछु;
संतनकी सेवा करै, सोई निसतर है ॥ २८ ॥
प्रथम सुयश लेत, शीलहु संतोष लेत;
क्षमा दया धर्म लेत, पापते डरतु है ॥
इंद्रिनकूं घेरि लेत, मनहीकूं फेरि लेत;
योगकी युगति लेत, ध्यानही धरतु है ॥
गुरुको वचन लेत, हरिजीको नाम लेत;
आतमाकूं शोधि लेत, भौजल तरतु है ॥
सुंदर कहत जग, संत कछु देत नाहिं;
संत-जन निशि-दिन, लेवोहि करतु है ॥ २९ ॥

---

१ प्रेम । २ मोक्ष । ३ भला । ४ पूजा-ध्यान । ५ पार उतरजाना।

साँचो उपदेश देत, भली भली सीख देत;
समता[1] सुबुद्धि देत, कुमति हरतु है ॥
मारग दिखाइ देत, भावहु भगति देत;
प्रेम[3]की प्रतीति देत, अभरा भरतु है ॥
ज्ञान देत ध्यान देत, आतमविचार देत;
ब्रह्मकूं बताइ देत, ब्रह्ममें चरतु है ॥
सुंदर कहत जग, संत कछु लेत नाहीं;
संत जन निशिदिन, देवोही करतु है ॥ ३० ॥

इति साधुको अंग संपूर्ण ॥ २९ ॥

अथ ज्ञानीको अंग ॥ ३० ॥

इंदव छंद ॥

जाहि हृदै महँ ज्ञान प्रकाशत, तासु सुभाव रहै नहिं छानौ ॥
नैनहिं वैनहिं सैनहिं[5] जानिय, ऊठत बैठतही अलसानौ ॥
ज्यूं कछु भक्ष[6] किये उदंगारत[7], कैसही राखि सकै न अघानौ ॥
सुंदरदास प्रसिद्ध[8] दिखावत, धान्यको खेत परारते जानौ॥१॥
ज्ञान प्रकाश भयो जिनके उर, वे घट क्यूंहि छिपे न रहैंगे ॥
भोडलमाहिं दुरै नहिं दीपक, यद्यपि वे मुख मौन गहैंगे ॥
ज्यूं घनसार[9]हि गोप्य[10] छिपावत, तौहु सुगंध सु तज्ञ[11] लहैंगे ॥
सुंदर और कहा कोउ जानत, बूठेंकि बात बटाउ[12] कहैंगे ॥ २ ॥
बोलत चालत बैठत ऊठत, पीवत खातहु सूंघत श्वासै ॥
ऊपर तौ व्यवहार करै सब, भीतर स्वप्न समान जु भासै ॥
लै करि तीर पतालहि सांधत, मारत है पुनि फेर अकाशै ॥

१ शिक्षा । २ बराबरी । ३ मुहब्बत । ४ प्रकृति । ५ इशारा । ६ खाद्य । ७ डकार । ८ मशहूर । ९ चंदन । १० गुप्त । ११ पंडित । १२ पथिक ।

सुंदर देह क्रिया सब देखत, कोउक पावत ज्ञानिको आशै॥३॥
बैठे तौ बैठे चलै तु चलै पुनि, पीछे तु पीछे रु आगे तु आगै॥
बोले तु बोले न बोले तु मौनहि, सोवे तु सोवे रु जागे तु जागै॥
खाइ तु खाइ नहीं तु नहीं जु, गहै तु गहै पुनि त्यागे तु त्यागै॥
सुंदर ज्ञानिकि ऐसी दशा यह, जानैं नहीं कछु राग विरागै॥४॥
देखत है पै कछू नहिं देखत, बोलत है नहिं बोल बखानै॥
सूंघत है नहिं सूंघत घ्राण सुनै सब है न सुनै यह कानै॥
भक्ष करै अरु नाहिं भखै कछु, भेटत है नहिं भेटत प्रानै॥
लेतहि देताहि लेत न देतहि, सुंदर ज्ञानिकि ज्ञानिहि जानै॥५॥
काज अकाज भलो न बुरो कछु, उत्तम मध्यम दृष्टि न आवै॥
कायकँ वाचक मानस कर्म सु, आप विषे न तिहूं ठहरावै॥
हूं करिहूं न कियो न करूं अब, यूं मन इंद्रिनकूं वरतावै॥
दीसत है व्यवहारविषे नित, सुंदर ज्ञानिकि कोउक पावै॥६॥
देखत ब्रह्म सुनै पुनि ब्रह्महि, बोलत है वहि ब्रह्महि वानी॥
भूमिहु नीरहु तेजहु वायुहु, व्योमहु ब्रह्म जहांलग प्रानी॥
आदिहु अंतहु मध्यहु ब्रह्महि, है सब ब्रह्म यहै मति ठानी॥
सुंदर ज्ञेयं रु ज्ञानहु ब्रह्महि, आपहु ब्रह्महि जानत ज्ञानी॥७॥
बैठत केवल ऊठत केवल, बोलत केवल बात कही है॥
जागत केवल सोवत केवल, जोवत केवल दृष्टि लही है॥
भूतहु केवल भर्व्यहु केवल, वर्त्तत केवल ब्रह्म सही है॥
है सबही अध ऊर्ध्व सु केवल, सुंदर केवल ज्ञान वही है॥८॥
केवल ज्ञान भयो जिनके उर, ते अध ऊर्ध्व सु लोक न जाहीं॥
व्यापक ब्रह्म अखंड निरंतर, वा बिन और कहूं कछु नाहीं॥

---

१ अवस्था। २ खाय। ३ शारीरिक। ४ जाननयोग्य। ५ सिर्फ। ६ भविष्यत।

ज्यूं घट नाश भयो घट व्योम सु, लीन भयो पुनि है नभमाहीं ॥
त्यूं पुनि मुक्ति जहां वपु छांड़त, सुंदर मोक्ष शिला कहु काहीं॥९॥
आदि हुतो नाहिं अंत रहै नहिं, मध्य शरीर भयो भ्रमकूपा ॥
भासत है कछु औरकु औरहि, ज्यूं रजुमें अहि सीपिमें रूपा ॥
देखि मरीचि उठ्यो विच विभ्रम, जानत नाहिं वहै रवि धूपा ॥
सुंदर ज्ञान प्रकाश भयो जब, एक अखंडित ब्रह्म अनूपा॥१०॥

मनहर छंद ॥

जाहिके विवेक ज्ञान, ताहिके कुशल[1] भयो;
जाहि ओर जाहि वाकूं, ताहि ओर सुख है ॥
जैसे कोई पावनि पैंजारकूं[3] चढ़ाइ लेत;
ताकूं तौ न कोउ कांटे, खोभरेको दुःख है ॥
भावे कोउ निंदा करै, भावै तौ प्रशंसा करै;
वे तौ देखे आरसीमें आपनोहिं मुख है ॥
देहको व्योहार सब, मिथ्या करि जानत है;
सुंदर कहत एक आतमाही रुख[4] है ॥ ११ ॥
अंतहकरण जाके, तमगुण छाइ रह्यो;
जडतो अज्ञान वाके, आलस भै त्रास[6] है ॥
रजोगुणको प्रभाव[7], अंतहकरण जाके;
त्रिविध करम वाके, कामनाकी[8] वाश है ॥
सत्त्वगुण अंतहकरण, जाके देखियत;
क्रिया करि शुद्ध वाके, भक्तिको निवाश है ॥
त्रिगुण अतीतें साक्षी, तुरिया स्वरूप जान;
सुंदर कहत वाके, ज्ञानको प्रकाश है ॥ १२ ॥

---

१ लिप्त होना। २ मंगल शम । ३ जूता। ४ मुख्य। ५ मूर्खता।
६ डर। ७ प्रताप। ५ ख्वाहिश। इच्छा। ९ विरक्त।

तमोगुण बुद्धि सो तौ, तवाके समान जैसे;
ताके मध्य सूरजकी, रंचहू न जोत है ॥
रजोगुण बुद्धि जैसे, आरसीकी औंधी ओर;
ताके मध्य सूरजकी, कछुक उदोत है ॥
सत्त्वगुण बुद्धि जैसे, आरसीकी सूधी ओर;
ताके मध्य प्रतिबिंब, सूरजको पोत है ॥
त्रिगुण अतीत जैसे, प्रतिबिंब मिटि जात;
सुंदर कहत एक, सूरजही होत है ॥ १३ ॥
सबसूं उदास होइ, काढ़ि मन भिन्न करै;
ताको नाम कहियत, परम वैराग है ॥
अंतहकरणहूकी, वासना निवृत्त होइ;
ताकूं मुनि कहत हैं, वहै बड़ो त्याग है ॥
चित्त एक ईश्वरसूं, नेकहू न न्यारो होइ;
वहै भक्ति कहियत, वहै प्रेम माग है ॥
आपु ब्रह्म जगतकूं, एक करि जानै सब;
सुंदर कहत वह, ज्ञान भ्रम भाग है ॥ १४ ॥
कोउ नृप फूलनकी, सेजपर सूतो आइ;
जब लग जाग्यो तौ लौं, अति सुख मान्यो है ॥
नींद जब आई तब, वाहीकूं स्वपन भयो;
जब परचो नरकके, कुंडमें यूं जान्यो है ॥
अति दुख पावै परि, निकस्यो न क्यूंही जाहि;
जागि जब परचो तब, स्वपन बखान्यो है ॥
यह झूठ वह झूठ, जाग्रत स्वपन दोऊ;

---

१ लेशमात्र। २ प्रकाश उदयहोना। ३ शान्त। ४ छोड़।

सुंदर कहत ज्ञानी, सब भ्रम भान्यो है ॥ १५ ॥
स्वपनेमें राजा होइ, स्वपनेमें रंक[1] होइ;
स्वपनेमें सुख दुःख, सत्यकरि जानै है ॥
स्वपनेमें बुद्धिहीन[2], मूढ़[3] न समूझै कछु;
स्वपन पंडित बहु, ग्रंथनि बखानै है ॥
स्वपनेमें कामी होइ, इंद्रिनके वश पऱ्यो;
स्वपनेमें यती[4] होइ, अहंकार आनै है ॥
स्वपनेते जाग्यो जब, समुझ परी है तब;
सुंदर कहत सब, मिथ्या करि मानै है॥ १६ ॥
विधि न निषेध कछु, भेद न अभेद पुनि;
क्रिया सो करत दीसै, यूंही नितप्रति है ॥
काहूंकूं निकट राखै, काहूकूं तौ दूर भाषै;
काहूंसूं नेरे न दूर, ऐसी जाकी मति है ॥
रागहू न द्वेष कोउ, शोक न उछाह दोउ;
ऐसी विधि रहै कहूं, रति न विरति है ॥
बाहिर व्योहार ठानै, मनमें स्वपन जानै;
सुंदर ज्ञानीकी कछु, अदभुत गति है ॥ १७ ॥
कामी है न यति है न, सूम है न सती है न;
राजा है न रंक है न, तन है न मन है ॥
सोवै है न जागै है न, पीछे है न आगे है न;
गहै है न त्यागै है न, घर है न वन है ॥
थिर है न डोलै है न, मौन है न बोलै है न;
बंध है न मोक्ष है न, स्वामी है न जन है ॥

---

१ दरिद्र । २ निर्बुद्धि । ३ मूर्ख । ४ सन्यासी ।

वैसो कोउ होवै जब, वाकी गति[1] जानै तब;
सुंदर कहत ज्ञानी, ज्ञान शुद्धघन है ॥ १८ ॥
श्रवण सुनत मुख, बोलत वचन घ्राण;
सूंघत फूलन रूप, देखत दृगन[2] है ॥
त्वक सपरस रस, रसना ग्रसत कर;
गहत अशन मुख चलत पगन है ॥
करत गमन पुनि, बैठत भँवन सेज;
सोवत रवन पुनि, बोढ़त नगन है ॥
जो जो कछु व्यवहार, जानत सकल भ्रम;
सुंदर कहत ज्ञानी, ज्ञानमें मगन है ॥ १९ ॥
कर्म न विकर्म करै, भाव न अभाव धरै;
शुभ न अशुभ परै, याते निधरक है ॥
वसती न शून्य जाके, पापहू न पुण्य ताके;
अधिक न न्यून वाके, स्वर्ग न नरक है ॥
सुखदुःख सम दोऊ, नीचहू न ऊंच कोऊ;
ऐसी विधि रहै सोऊ, मिल्यो न फरक है ॥
एकही न दोय जानै, बंध मोक्ष भ्रम मानै;
सुंदर कहत ज्ञानी, ज्ञानमें गरक है ॥ २० ॥
अज्ञानीकूं दुःखको, समूह जग जानियत;
ज्ञानीकूं जगत सब, आनँदस्वरूप है ॥
नैनहीनकूं तौ घर, बाहिर न सूझे कछु;
जहाँ जहाँ जाय तहाँ, तहाँ अंधकूप है ॥
जाके चक्षु है प्रकाश, अंधकार भयो नाश;

१ चाल । २ नेत्र । ३ घर ।

वाके जहाँ रहै तहाँ, सूरजकी धूप है ॥
सुंदर अज्ञानी ज्ञानी, अंतर[1] बहुत आहि;
वाके सदा राति वाके, दिवस[2] अनूप[3] है ॥ २१ ॥
ज्ञानी अरु अज्ञानीकी, क्रिया सब एकसीही;
अज्ञ आशवान ज्ञानी, आश न निराश है ॥
अज्ञ जोई जोई करै, अहंकार बुद्धि धरै;
ज्ञानी अहंकार बिनु, करत उदास है ॥
अज्ञ सुख-दुःख दोऊ, आपविषे मानि लेत;
ज्ञानी सुख दुःखकूं न, जानै मेरे पास है ॥
अज्ञकूं जगत यह, सकल संताप[5] करै;
ज्ञानीकूं सुंदर सब, ब्रह्मको विलास है ॥ २२ ॥
ज्ञानी लोक-संग्रहकूं, करत व्योहार विधि;
अंतहकरणमें तौ, स्वप्नकीसी दौर है ॥
देत उपदेश नाना-भांतिके वचन कहि;
सब कोऊ जानत, सकल शिरमौर है ॥
हलन चलन पुनि, देहको करत नित;
ज्ञानमें गरक[6] गति, लिये निज ठौर है ॥
सुंदर कहत जैसे; दंत गजराज मुख;
खाइवेके और रु, दिखाइवेके और है ॥ २३ ॥
इंद्रिनको ज्ञान जाके, सो तो है पशू समान;
देह अभिमान खान--पानहीसूं लीन है ॥
अंतहकरण ज्ञान, कछुक विचार जाके;
मनुष्य व्योहार शुभ-कर्मके आधीन है ॥

---

१ वीच। २ दिन । ३ जिसकी उपमा न हो । ४ अज्ञानी मूर्ख।
५ दुःख। ६ डूबा।

आतमविचार ज्ञान, जाके निशि-वासर है;
सोही साधु सकलही, बातमें प्रवीण है ॥
एक परमातमाको, ज्ञान अनुभव जाके;
सुंदर कहत वह, ज्ञानी भ्रम छीन है ॥ २४ ॥
जाहि ठौर रविको प्रकाश भयो ताहि ठौर;
अंधकार भागि गयो, गृह वनवासते ॥
न तौ कछु वनते, उलटि आवै घरमाहिं;
न तौ वन चलि जाइ, कनकै आवासते ॥
जैसे पक्षी पक्ष टूटि, जाहि ठौर पऱ्यो आइ;
ताहि ठौर गिरि रह्यो, उड़वेकी आशते ॥
सुंदर कहत मिटि, जाइ सब दौड़ दुःख;
धोखो न रहत कोऊ, ज्ञानके प्रकाशते ॥ २५ ॥
जैसे कोऊ देश जाइ, भाषा कहै औरसीही;
समुझै न कोऊ वासूं, कहै क्या कहतु है ॥
कोऊ दिन रहि करि, बोली सीखै उनहींकी;
फेरि समुझावै तब, सब को लहतु है ॥
तैसे ज्ञान कहेते, सुनत विपरीत लागै;
आप आपनोही मत, सबको गहतु है ॥
उनहीके मत करि, सुंदर कहत ज्ञान;
तवहीते ज्ञान, ठहराइके रहतु है ॥ २६ ॥
एक ज्ञानी कर्मनमें, तत्पर देखियत;
भक्तिको प्रभाव नाहिं, ज्ञानमें गरक है ॥
एक ज्ञानी भगतिको, अत्यंत प्रभाव लिये;

---

१ चतुर । २ सोनाकागृह । ३ उलटा । ४ आरूढ़ ।

ज्ञानमाहिं निश्चै करि, कर्मसूं तरक है ॥
एक ज्ञानी ज्ञानहीमें, ज्ञानको उच्चार करै;
भक्ति अरु कर्म इन, दुहूंतें फरक है ॥
कर्म भक्ति ज्ञान तीनूं, वेदमें बखानि कहै;
सुंदर बतायो गुरु, ताहीमें लरक है ॥ २७ ॥
जैसे पक्षी पगनसूं, चलत अवनि आइ;
तैसे ज्ञानी देह करि, करम करतु है ॥
जैसे पक्षी चंचू करि, चुगत आहार पुनि;
तैसे ज्ञानी उरमें, उपासना धरतु है ॥
जैसे पक्षी पक्षनसूं, उड़त गगनमाहिं;
तैसे ज्ञानी ज्ञान करि, ब्रह्ममें चरतु है ॥
सुंदर कहत ज्ञानी, तीनूं भांति देखियत;
ऐसी विधि जानै सब, संशय हरतु है ॥ २८ ॥

इंदव छंद ॥

एक क्रिया करि किर्षि[3] निपावत, आदि रु अंत ममत्त्व बँध्यो है ॥
एक क्रिया करि पार्क करै जब, भोजनकूं कछु अन्न रँध्यो है ॥
एक क्रिया मल त्यागत है लँघु-, नीत करै कहुँ नाहिं फँध्यो है ॥
त्यूं यह कर्म उपासन ज्ञानहि, सुंदर तीनप्रकार सँध्यो है॥२९॥
दोउ जने मिलि चौपर खेलत, सारि मरै पुनि ढारत पासा ॥
जीतत है सु खुशी मनमें अति, हारत है सु भरैहि उसासा ॥
एक जनो दोउ औरहि खेलत, हार न जीत करै जु तमासा ॥
त्यूंही अज्ञानिकूं द्वैत भयो भ्रम, सुंदर ज्ञानिकूं एक प्रकासा॥३०॥

---

१ पृथ्वी–धरा । २ आकाश । ३ खेती । ४ रसोई । ५ छोटा ।

सवैया (इकतीसमात्रक) ॥

जीव नरेश[1] अविद्या[2] निंद्रा[3], सुख शय्या[4] सोयो करि हेत ॥
कर्म खवास पूट भरि लाई, तातें बहु विधि भयो अचेत ॥
भक्ति प्रधान जगायो कर गहि, आलस भरि जंभाई लेत ॥
सुंदर अब निद्रा वश नाहीं, ज्ञान जागरण सदा सुचेत ॥३१॥

सवैया (बत्तीसमात्रक) ॥

ज्ञानी कर्म करै नाना विधि, अहंकार या तनको खोवै ॥
कर्मनको फल कछू न जोवै, अंतःकरण वासना धोवै ॥
ज्यूं कोऊ खेतीकूं जोतत, लेकरि बीज भूनिके वोवै ॥
सुंदर कहै सुनो दृष्टांतहि, नाँग नहाई कहा निचोवै ॥३२॥

इति ज्ञानीको अंग संपूर्ण ॥ ३० ॥

अथ निर्संशय ज्ञानीको अंग ॥ ३१ ॥

मनहर छंद ॥

भावै देह छूटि जाहु, काशीमाहिं गंगातट;
भावै देह छूटि जाहु, क्षेत्र मगहरमें ॥
भावै देह छूटि जाहु, विप्रके सदन[5] मध्य;
भावै देह छूटि जाहु, स्वपर्च[6]के घरमें ॥
भावै देह छूटै देश, आरय अनारयमें;
भावै देह छूटि जाहु, वनमें नगरमें ॥
सुंदर ज्ञानीके कछु, संशय रहत नाहिं;
स्वरग नरक सब, भागि गयो भरमें ॥ १ ॥

---

१ राजा । २ मूर्खता । ३ नींद-शयन । ४ सेज । ५ घर । ६ चांडाल

भावै देह छूटि जाहु, आजही पलकमांहिं;
भावै देह रहु चिरकाल[1], युग अंत जू ॥
भावै देह छूटि जाहु, ग्रीषम पावस[2] ऋतु;
शरद शिशिर शीत, छूटत वसंत जू ॥
भावै दक्षिणायनहु, भावै उत्तरायणहु;
भावै देह सर्प सिंह, वीजली हनंत जू ॥
सुंदर कहत एक, आतमा अखंड जानि;
याही भांति निरसंशै, भये सब संत जू ॥ २ ॥

इंदव छंद ॥

कै यह देह गिरो वन पर्वत, कै यह देह नदीहि बहो जू ॥
कै यह देह धरो धरतीमहिं, कै यह देह कृशानु[3] दहो जू ॥
कै यह देह निरादर निंदह, कै यह देह सराह कहो जू ॥
सुंदर संशय दूर भयो सब, कै यह देह चलो कि रहो जू ॥ ३ ॥
कै यह देह सदा सुख संपति, कै यह देह विपत्ति[4] परो जू ॥
कै यह देह निरोग रहो नित, कै यह देहहि रोग चरो जू ॥
कै यह देह हुतासन पैठहु, कै यह देह हिमार गरो जू ॥
सुंदर संशय दूर भयो सब, कै यह देह जिवो कि मरो जू ॥ ४ ॥

इति निर्संशय ज्ञानीको अंग संपूर्ण ॥ ३१ ॥

अथ प्रेम ज्ञानीको अंग ॥ ३२ ॥

इंदव छंद ॥

प्रीतिकि रीति कछू नहिं राखत, जाति न पाँति नहीं कुल गारो ॥
प्रेमकु नेम कहूं नहिं दीसत, लाज न कान लग्यो सब खारो ॥

---

१ बहुत कालतक । २ वर्षा । ३ अग्नि । ४ दुःख ।

लीन भयो हरिसूं अभि[2]अंतर, आठहु याम[3] रहै मतवारो ॥
सुंदर कोउक जानि सकै यह, गोकुलगांवको पैंडोहि[4] न्यारो॥१॥
ज्ञान दियो गुरु देव कृपाकरि, दूरि कियो भ्रम खोलि किवारो ॥
और क्रिया कहि कौन करै अब, चित्त लग्यो परब्रह्म पियारो ॥
पाँव विना चलबो किहि ठौरहु, पंगु[5] भयो मन मित्त हमारो ॥
सुंदर कोउक जानि सकै यह, गोकुल गांवको पैंडोहि न्यारो ॥ २ ॥
एक अखंडित ज्यूं नभ व्यापक, बाहिर भीतर है इक सारो ॥
दृष्टि न मुष्टि न रूप न रेख न, श्वेत न पीत न रक्त न कारो ॥
चक्रित होइ रहै अनुभौ बिनु, जौं लगि नाहिं न ज्ञान उजारो ॥
सुंदर कोउक जानि सकै यह, गोकुल गांवको पैंडोहि न्यारो॥३॥
द्वंद्व बिना विचरै वसुधापर, जा घट आतमज्ञान अपारो ॥
काम न क्रोध न लोभ न मोह न, राग न द्वेष न मारु न थारो ॥
योग न भोग न त्याग न संग्रह, देह दशा न ढँक्यो न उघारो ॥
सुंदर कोउक जानि सकै यह, गोकुल गांवको पैंडोहि न्यारो॥४॥
लक्ष अलक्ष अदक्ष न दक्ष न, पक्ष अपक्ष न तूल न भारो ॥
झूठ न साँच अवाच न वाच न, कंचन काँच न दीन उदारो ॥
जान अजान न मान अमान न, सान गुमान न जीत न हारो ॥
सुंदर कोउक जानि सकै यह, गोकुल गांवको पैंडोहि न्यारो ॥५॥

इति प्रेमज्ञानीको अंग संपूर्ण ॥ ३२ ॥

अथ आत्म अनुभवको अंग ॥ ३३ ॥

इंदव छंद ॥

है दिलमें दिलदार सही अँखियां, उलटी करि ताँहि चितैये ॥

१ लिप्त । २ अंतःकरण । ३ पहर । ४ राह । ५ लँगड़ा ।

आबमें[1] खाकमें[2] बादमें[3] आतश[4], जानमें सुंदर जानि जनैये ॥
नूरमें[5] नूर है तेजमें तेजहि, ज्योतिमें ज्योति मिले मिलि जैये ॥
क्या कहिये कहते न बनै कछु, जो कहिये कहतेहि लजैये ॥ १ ॥
जो कहूँ है सबमें यह एक तु, सो कहैं केसु हैं आंखि दिखैये ॥
जो कहूं रूप न रेख दिसै कछु, तौ सब झूठकि मानिहि कैये ॥
जो कहूँ सुंदर नैननि मांझ तु, नैन रु वैन गये पुनि हैये ॥
क्या कहिये कहते न बनै कछु, जो कहिये कहतेहि लजैये ॥ २॥
होत विनोद जितो अभिअंतर, सो सुख आपमें आपहि पैये ॥
बाहिरकूं उमग्यो पुनि आवत, कंठते सुंदर फेर पठैये ॥
स्वाद निवेर निवेरयो न जात सु, मानहुं गूड़ गुंगे नित खैये ॥
क्या कहिये कहते न बनै कछु, जो कहिये कहतेहि लजैये ॥ ३॥
व्योमको व्योम[6] अनंत अखंडित, आदि न अंत सु मध्य कहां है ॥
को परमान करै परिपूरण, द्वैत अद्वैत कछू न जहां है ॥
कारण कारज भेद नहीं कछु, आपमें आपही आप तहां है ॥
सुंदर दीसत सुंदरमाहिं सु, सुंदरता कहि कौन उहां है॥४ ॥

प्रश्नोत्तर ॥

एक कि दोइ? न एक न दोइ,
उही कि इही? न उही न इही है ॥
शून्य कि स्थूल? न शून्य न स्थूल,
जिही कि तिही? न जिही न तिही है ॥
मूल कि डाल? न मूल न डाल,
वही कि मही? न वही न मही है ॥
जीव कि ब्रह्म? न जीव न ब्रह्म,
तु है कि नहीं? कछु है न नहीं है ॥ ५ ॥

---

१ पानी । २ मिट्टी । ३ हवा । ४ अग्नि । ५ रोशनी । ६ आकाश ।

पूर्ववत्॥

एक कहूं तु अनेकसु दीसत, एक अनेक नहीं कछु ऐसो॥
आदि कहूं तहां अंतहु आवत, आदि न अंत न मध्य सु कैसो॥
गोप्य[1] कहूं तु अगोप्य[2] कहाँ यह, गोप्य अगोप्य न ऊभो न वैसो[3]॥
जोइ कहूं सोइ है नहिं सुंदर, है तु सही परि जैसेको तैसो॥६॥

मनहर छंद॥

एकको कहै जु कहूं, एकही प्रकाशत है;
दोऊही कहै जु कोऊ, दूसरोहू देखिये॥
अनेक कहै जु कोऊ, अनेक आभासै ताहिं;
जाके जैसो भाव तैसो, ताकूंही विशेखिये॥
वचन विलास कोऊ, कैसेही बखानि कहै;
व्योममाहिं चित्र कहौ, कैसे करि लेखिये॥
अनुभव किये एक, दोइ न अनेक कछु;
सुंदर कहत ज्यूं है, त्यूंही ताहि पेखिये॥७॥
वचनहीं वेद विधि, वचनहिं शास्त्र पुनि;
वचन समृति अरु, वचन पुरान जू॥
वचनही और ग्रंथ, वचनही व्याकरण;
वचनही काव्य छंद, नाटक बखान जू॥
वचनही संसकृत, वचनही पराकृत;
वचनही भाषा सब, जगतमें जान जू॥
वचनके परे है सो, वचनमें आवै नहीं;
सुंदर कहत वही, अनुभौ प्रमान जू॥८॥
इंद्रि नहीं जानि सकै, अल्प ज्ञान इंदिनको;

---

१ गुप्त–छिपा। २ प्रकट। ३ बैठा।

प्राणहु न जानि सकै, श्वास आवै जाइ है ॥
मनहुँ न जानि सकै, संकल्प विकल्प करै;
बुद्धिहु न जानि सकै, सुन्यो सब ताइ है ॥
चित्त अहंकार पुनि एकहु न जानि सकै;
शब्दहु न जानि सकै, अनुमान पाइ है ॥
सुंदर कहत ताहि, कोऊ नहीं जानि सकै;
दीवा करि देखिये सो, ऐसा नहिं लाइ है ॥ ९ ॥

इंदव छंद ॥

श्रोत्र[2] न जानत चक्षु[3] न जानत, जानत नाहिं जु सूंघत घ्रानै ॥
जानि सपर्स त्वचा न सकै पुनि, जानत नाहिं जु जीभ बखानै ॥
मंन न जानत बुद्धि न जानत, चित्त अहंकार क्यूं पहिचानै ॥
सुंदर शब्दहु जानि सकै नहिं, आतम आपकूं आपहि जानै॥ १० ॥
सूरके तेजते सूरज दीसत, चंद्रके तेजते चंद्र उजासै ॥
तारेके तेजते तारेहु दीसत, वीजुल तेजते बीज चकासै ॥
दीपके तेजते दीपक दीसत, हीरेके तेजते हीरोहि भासै ॥
तैसेहि सुंदर आतम जानहु, आपके ज्ञानते आप प्रकासै॥ ११ ॥
कोउ कहै यह सृष्टि स्वभावते, कोउ कहै यह कर्मते सृष्टी ॥
कोउ कहै यह काल उपावत, कोउ कहै यह ईश्वर-तिष्टी ॥
कोउ कहै यह ऐसेहि होवत, क्यूं करि मानिय बात अनिष्टी ॥
सुंदर एक किये अनुँभौ[1] बिनु; जानि सकै नहिं बाझहि दृष्टी॥ १२ ॥
कोउ तौ मोक्ष अकाश बतावत, कोउ तौ मोक्ष पतालके माहीं ॥
कोउ तौ मोक्ष कहै पृथिवीपर, कोउ कहै कहूं और कहाहीं ॥
कोउ बतावत मोक्ष शिलापर, कोउक मोक्ष मिटे परछाहीं ॥

---

१ मनकी भावना करना और लीन होना । २ कान । ३ आँखें । ४ निश्चय ।

सुंदर आतमके अनुभौ[1] बिनु, और कहूं कोइ मोक्षहि नाहीं ॥ १३ ॥
मूएते मोक्ष कहैं सब पंडित, मूएते मोक्ष कहैं पुनि जैना ॥
मूएते मोक्ष कहैं ऋषि तापस, मूएते मोक्ष कहैं शिव सैना ॥
मूएते मोक्ष मलेच्छ कहैं पुनि, धोखेहि धोखे बखानत बैना ॥
सुंदर आतमको अनुभौ सोइ, जीवत मोक्ष सदा सुख चैना ॥ १४ ॥

मनहर छंद ॥

कोऊ तौ कहत ब्रह्म, नाभिके कमल मध्य;
कोऊ तौ कहत ब्रह्म, हृदयमें प्रकाश है ॥
कोऊ तौ कहत कंठ, नाशिकाके अग्रभाग;
कोऊ तौ कहत ब्रह्म, भृकुटीमें[3] वास है ॥
कोऊ तौ कहत ब्रह्म, दशवें दुवार बीच;
कोऊ तौ कहै भ्रमर-गुफामें निवास है ॥
पिंडमें ब्रह्मांडमें, निरंतर विराजै ब्रह्म;
सुंदर अखंड जैसे, व्यापक अकाश है ॥ १५ ॥
पांव जिन गह्यो सो तौ, कहत हैं ऊखर सो;
पुच्छ जिन गह्यो तिन, लावसो सुनायो है ॥
सूंड[2] जिन गही तिन, डगलेकी बांह कही;
दंत जिन गह्यो तिन, मूसर दिखायो है ॥
कान जिन गह्यो तिन, सूपसो बनाय कह्यो;
पीठ जिन गही तिन, बिटोरा बतायो है ॥
जैसो है तैसोही ताहि, सुंदर सुअक्षी जानै;
आंधरेने हाथी देखि, झगरो मचायो है ॥ १६ ॥
न्यायशास्त्र कहत है, प्रगट ईश्वरवाद;

---

१ ज्ञान । २ तोंदी । ३ भौहैं ।

मीमांसाहि शास्त्रमाहीं, कर्मवाद कह्यो है ॥
वैशेषिक शास्त्र पुनि, कालवादी है प्रसिद्ध;
पातांजलि शास्त्रमाहिं, योगवाद लह्यो है ॥
सांख्य शास्त्रमाहिं पुनि, प्रकृति-पुरुष-वाद;
वेदांत जु शास्त्र तिन, ब्रह्मवाद गह्यो है ॥
सुंदर कहत षट-शास्त्रमाहिं भयो वाद;
जाके अनुभव[1] ज्ञान, वादमें न बह्यो है ॥ १७ ॥

'प्रज्ञानमानंदं[2] ब्रह्म, ऐसे ऋगवेद कहै;
'अहं[3] ब्रह्म अस्मि[4], इति यजुर्वेद यूं कहै॥
'तत्त्वमसि[5] इति, सामवेद यूं बखानतहै;
'अयं आत्मा ब्रह्म, कहि अथर्वण यूं लहै॥
एक एक वचनमें, तीन पद है प्रसिद्ध;
तिनको विचार करि, अर्थ तत्त्वकूं गहै ॥
चारिवेद भिन्न भिन्न, सबको सिद्धांत[6] एक;
सुंदर समुझि- करि, चुप चाप ह्वै रहै ॥ १८ ॥

इंद्रिनके भोग जब, चाहै तब आय रहै;
नाशवंत ताते तुछानंद- यूं सुनायो है ॥
देवलोक इंद्रलोक, ब्रह्मलोक शिवलोक;
वैकुंठके सुखलौ, गणितानंद गायो है ॥
अक्षय[7] अखंड एक-रस परिपूरण है;
ताहिते पूरणानंद अनुभौते पायो है ॥
याहिके अंतरभूत, आनँद जहांलौं और;
सुंदर समुद्रमाहिं, सर्व जल आयो है ॥ १९ ॥

---

१ अनुमान् । २ जो ज्ञानमें आनंदित रहे अर्थात् निर्गुण ब्रह्म । ३ मैं । ४ हूँ । ५ तुमहो । ६ आशय, विचार, मत । ७ अमर ।

एक तौ माया–विलास, जगत प्रपंच[1] यह;
चारि खानि भेद पाय, द्वैत भासि रह्यो है ॥
दूसरो विषै-विलास इंद्रिनके विषे पंच;
शब्द सपरस रूप, रस गंध रह्यो है ॥
तीसरो वाक्य-विलास, सो तौ सब वेदमाहिं;
वरणिके जहाँ लगि, वचनतें कह्यो है ॥
चौथो ब्रह्मको विलास, तिहूंको अभाव जहां;
सुंदर कहत वह, अनुभौते लह्यो है ॥ २० ॥
जीवतही देवलोक, जीवतही इंद्रलोक;
जीवतही जन तप, सत्य लोक आयो है ॥
जीवतही विधिलोक, जीवतही शिवलोक;
जीवत वैकुंठ लोक, जो अकुंठ[3] गायो है ॥
जीवतही मोक्षशिला, जीवतही व्हेस्त माहिं;
जीवतही निकट, परमपद पायो है ॥
आतमाको अनुभव, जिनकूं जीवत भयो;
सुंदर कहत तिन, संशयं[4] मिटायो है ॥ २१ ॥
क्षिति भ्रम जल भ्रम, पावक पवन भ्रम;
व्योम भ्रम तिनको, शरीर भ्रम मानिये ॥
इंद्रिय दशहु भ्रम, अंतकरण भ्रम;
तिनहीके देवता सो, भ्रमते वखानिये ॥
सत्त्व रज तम भ्रम, पुनि अहंकार भ्रम;
महत्तत्त्व प्रकृति पुरुष, भ्रम मानिये ॥
जोई कछु कहिये सो, सुंदर सकल भ्रम;

---

१ बखेड़ा, पाषंड, सृष्टि । ३ नमिलना । ३ खुला हुआ । ४ संदेह ।

अनुभव किये एक, आतमाहीं जानिये ॥ २२ ॥
भूमिहु विलीन होइ, आपहु विलीन होइ;
तेजहु विलीन होइ, वायु जो बहतु है ॥
व्योमहु विलीन होइ, त्रिगुण विलीन होइ;
शब्दहू विलीन होइ, अहं जो कहतु है ॥
महातत्त्व विलीन होइ, प्रकृति विलीन होइ;
पुरुष विलीन होइ, देह जो गहतु है ॥
सुंदर सकल लोक, कहिये सो लीन होइ;
आतमाके अनुभव, आतमा रहतु है ॥ २३ ॥
मायाकी अपेक्षा ब्रह्म, रात्रिकी अपेक्षा दिन;
जड़की अपेक्षा करि, चेतन बखानिये ॥
अज्ञान अपेक्षा ज्ञान, बंधकी अपेक्षा मोक्ष ॥
द्वैतकी अपेक्षा सो तौ, अद्वैत प्रमानिये ॥
दुःखकी अपेक्षा सुख, पापकी अपेक्षा पुण्य;
झूठकी अपेक्षा ताहिं, सत्य करि मानिये ॥
सुंदर सकल यह, वचन-विलास भ्रम;
वचन रहित अवचन, सोई जानिये ॥ २४ ॥
आतमा कहंत गुरु, शुद्ध निरबंध नित;
सत्य करि मानै सो तौ, शब्दहू प्रमान है ॥
जैसे व्योम व्यापक, अखंड परिपूरण है,
व्योम उपमाते, उपमान सो प्रमान है ॥
जाकी सत्ताँ पाइ सब, इंद्रिय चेतन होइ;
याहि अनुमाँन, अनुमानहू प्रमान है ॥

---

१ नष्टहोना । २ वनिस्वत । ३ शक्ति । ४ अंदाज़ ।

अनुभव जाने तब, सकल सँदेह मिटै;
सुंदर कहत यह, प्रत्यक्षप्रमाण है॥ २५॥
एक घर दोय घर, तीन घर चार घर;
पंच घर तजै तब, छठो घर पाइये॥
एक एक घरके, आधार[1] एक एक घर;
एक घर निराधार[2], आपही दिखाइये॥
सो तौ घर साक्षीरूप, घर घर में अनूप;
ताहू घर मध्य कोऊ, दिन ठहराइये॥
ताके परे साक्षी न, असाक्षी न सुंदर कछु;
वचन अतीत कहूं, आइ है न जाइये॥ २६॥
एक तौ श्रवण ज्ञान, पावक[3] ज्यूं देखियत;
माया जल परसत, वेगि[4] बुझि जात है॥
एक है मनन ज्ञान, विजुली ज्यूं घन मध्य;
माया जल बरषत, तामें न बुझात है॥
एक निदिध्यास ज्ञान, बडवाअनल जैसे;
प्रगट समुद्रमाहिं, माया जल खात है॥
अनुभव साक्षात ज्ञान, प्रलयकी अग्निसम;
सुंदर कहत द्वैत, प्रपंच विलात है॥ २७॥
भोजनकी बात सुनि, मनमें मुदित भयो;
मुखमें न परे जौलौं, मेलिये न ग्रास है॥
सकल सामग्री आनि, पाककूं करन लागो;
मनन करत कब, जीमहूं ये आस है॥
पाक जब भयो तब, भोजन करन बैठो;

१ सहाय। २ वेसहारेके। ३ अग्नि। ४ शीघ्र।

मुखमें मेलत जाइ, यहै निदिध्यास है ॥
भोजन पूरन करि, तृपत भयो है जब;
सुंदर साक्षातकार, अनुभव प्रकाश है ॥ २८ ॥

श्रवण करत जब, सबसूं उदास होइ;
चित्त एकाग्रह आनि, गुरुमुख सुनिये ॥
बैठिके एकांत ठौर, अंतह्करणमाहिं;
मनन करत फेर, उहै ज्ञान गुनिये ॥
ब्रह्म अपरोक्ष जानि, कहत है "अहं ब्रह्म;"
सोहं सोहं होइ सदा, निदिध्यास धुनिये ॥
सुंदर साक्षातकार, कीट[2]हीते होइ भ्रंग;
यह अनुभव यह, स्वस्वरूप भनिये ॥ २९ ॥

जबही जिज्ञासा होइ, चित्त एक ठौर आनि;
मृग ज्यूं सुनत नाद, श्रवण सो कहिये ॥
जैसे स्वाति बुंदहूकूं, चातक रटत पुनि;
ऐसेही मनन करै, कब बुंद लहिये ॥
रातिमें चकोर जैसे, चंद्रमाको धरै ध्यान;
ऐसे जानि निदिध्यास, दृढ़ करि गहिये ॥
यहै अनुभव यहै, कहिये साक्षातकार;
सुंदर पारेते गलि, पानी होइ रहिये ॥ ३० ॥

काहूकूं पूछत रंक, धन कैसे पाइयत;
कान देके सुनत, श्रवण सोई जानिये ॥
उन कह्यो धन हम, देख्यो है फलानी ठौर;
मनन करत भयो, कब घर आनिये ॥

---

१ एक जगहकर। २ कीड़ा।

फेरि जब कह्यो धन; गड्यो तेरे घरमाहिं;
खोदन लाग्यो है जब, निदिध्यास ठानिये ॥
धन निकस्यो है जब, दारिद गयो है तब;
सुंदर साक्षातकार, नृपैति बखानिये ॥ ३१ ॥
चकमक ठोकेते, चमैतकार होत कछु;
ऐसेही श्रवण ज्ञान, तबही लौं जानिये ॥
कफमाहिं लागै जब, प्रगटै पावैक ज्ञान;
सुलगत जाइ वह, मनन बखानिये ॥
वर्त्तमान भये काठ, कर्मनकूं जरावत;
यही निदिध्यास ज्ञान, ग्रंथनमें गानिये ॥
सकल प्रपंच यह, झाँरिके समाइ जात;
सुंदर कहत यह, अनुभौ प्रमानिये ॥ ३२ ॥

इति आत्मअनुभवको अंग संपूर्ण ॥ ३३ ॥

अथ आश्चर्यको अंग ॥ ३४ ॥

मनहर छंद ॥

वेदको विचार सोइ, सुनिके संतन मुख;
आपहू विचार करि, सोई धारियतु है ॥
योगकी युगति जानि, जगते उदास होइ;
शून्यमें समाधि लाइ, मन मारियतु है ॥
ऐसे ऐसे करत करत, केते दिन बीते;
सुंदर कहत अजहूं, विचारियतु है ॥

---

१ राजा । २ प्रकाश–दीप्ति–रोशनी । ३ अग्नि । ४ सब–समाप्त ।

कारोही न पीरो न तौ, तातोही न सीरो[1] कछु;
हाथ न परत ताते, हाथ झारियतु है ॥ १ ॥
मनको अगम[2] अति, वचन थकित होत;
बुद्धिहू विचार करि, बहु खंडियतु है ॥
श्रवण न सुनै ताहि, नैनहू न देखै कछु;
रसनाको[3] रस सब, रस छांड़ियतु है ॥
त्वक्[4]को सपर्श नाहीं, घ्राणको न विषै होइ;
पगनहू करि जित, तित हिंडियतु[5] है ॥
सुंदर कहत अति, सूक्षम स्वरूप कछु;
हाथ न परत ताते, हाथ मिंडियतु है ॥ २ ॥
गुफाकूं सँवारत है, आसनहू मारि करि;
प्राणहीकूं धारि, धारणा कसीटियतु है ॥
इंद्रिनकूं घेरि करि, मनहूकूं फेरि पुनि;
त्रिकुटीमें हेरि हेरि, हियो चीटियतु है ॥
सब छटिकाय पुनि, शून्यमें समाय तहाँ;
समाधि लगाय करि, आँख मीटियतु है ॥
सुंदर कहत हम, औरहू किये उपाय;
हाथ न परत ताते, हाथ छीटियतु है ॥ ३ ॥
बोलैही न मौन धरै, बैठो है न गौन करै;
जागैही न सोवै न तौ, दूर है न नीरो है ॥
आवैही न जात न तौ, थिर अकुलात पुनि;
भूखोही न खात कछु, तातोही न सीरो है ॥
लेत है न देत कछु, हेत न कुहेत पुनि;

---

१ ठंढा । २ अथाह । ३ जिह्वा । ४ त्वचा–खाल । ५ चलना ।

श्यामही न श्वेत[1] अरु, रातौ[2] है न पीरोहै॥
दूबरो न मोटो कछु, लाँबोही न छोटो तातें;
सुंदर कहत कछु, काँचही न हीरो है॥ ४॥
भूमिही न आप न तौ, तेजही न ताप न तौ;
वायुही न व्योम न तौ, पंचको पसारो है॥
हाथही न पावँ न तौ, नैन वैन भाव न तौ;
रंकही न राव न तौ, वृद्धही न वारो है॥
पिंडही न प्राण न तौ, ज्ञान न अज्ञान न तौ;
बंध निरवान न तौ, हरवो न भारो है॥
द्वैत न अद्वैत न तौ, मीत न अमीत न तौ;
सुंदर कह्यो न जाइ, मिल्योही न न्यारो है॥ ५॥

इंदव छंद॥

पाप न पुण्य न स्थूल[3] न शून्य न, बोलै न मौन न सोवै न जागै॥
एक न दोइ न पुर्ष न जोइ, कहै कहाँ कोइ न पीछे न आगै॥
वृद्ध न बाल न कर्म न काल न, हस्व विशाल न जूझें न भागै॥
बंध न मोक्ष अप्रोक्ष न प्रोक्ष न, सुंदर है न असुंदर लागै॥ ६॥
तत्त्व अतत्त्व कह्यो नहिं जात जु, शून्य अशून्य उरे न परे है॥
ज्योति अज्योति न जानि सकै कोउ, आदि न अंत जिवै न मरै है॥
रूप अरूप कछू नहिं दीसत, भेद अभेद करै न हरै है॥
शुद्ध अशुद्ध कह्यो पुनि कौन जु, सुंदर बोलै न मौन धरै है॥ ७॥
खोजत खोजत खोजि गये पुनि, खोजत हैं अरु खोजहि आने॥
गावत गावत गाइ रहे सब, गावत हैं पुनि गाइहि गाने॥
देखत देखत देखि थके सब, दीसें नहीं कछु ठौर ठिकाने॥

---

१ सफेद। २ लाल। ३ मोटा।

बूझत बूझत बूझिके सुंदर, हेरत हेरत हेर हिराने ॥ ८ ॥
पिंडमें है पर पिंड मिलै नहिं, पिंड परे पुनि त्यूंहि रहावै ॥
श्रोत्रमें है पर श्रोत्र सुनै नहिं, दृष्टिमें है परि दृष्ट न आवै ॥
बुद्धिमें है पर बुद्धि न जानत, चित्तमें है पर चित्त न पावै ॥
शब्दमें है पर शब्द थक्यो कहि, शब्दहु सुंदर दूर बतावै ॥ ९ ॥
एकहि ब्रह्म रह्यो भरपूर तु, दूसर कौन बतावनहारो ॥
जो कोउ जीव करै परमान तु, जीव कहा कछु ब्रह्मते न्यारो ॥
जो कहि जीव भयो जगदीशते, तौ रविमाहिं कहांको अँधारो ॥
सुंदर मौन गही यह जानिके, कौनहु भांति न ह्वै निरधारो॥१०॥
भूमिहु तैसेहि आपहु तैसेहि, तैसेहि तेज रु तैसेहि पौंना ॥
व्योमहु तैसेहि आहि अखंडित, तैसेहि ब्रह्म रह्यो भरि भौंना ॥
देह सँयोग वियोग भयो तब, आयो सो कौन गयो तौं हि कौना॥
जो कहिये कहते न बनै कछु, सुंदर जानि गही मुख मौना॥११॥
जो हम खोज करैं अभिअंतर, सो वह खोज उरेहि बिलावै ॥
जो हम बाहिरकूं उठि दौरत, तौ कछु बाहिर हाथ न आवै ॥
जो हम काहुकूँ पूछत हैं पुनि, सोहि अगाध अगाध बतावै ॥
ताहिते कोउ न जानि सकै तिहि, सुंदर कौनसि ठौर रहावै॥१२॥
नैन न वैन न चैन न आश न, वास न खास न प्यास न याते॥
शीत न घाम न ठौर न ठाम न, पुर्ष न वांम न मात न ताते ॥
रूप न रेख न शेर्ष अशेष न, श्वेत न पीत न श्याम न राते ॥
सुंदर मौन गही सिद्ध साधक, कौन कहै उसकी मुख बाते॥१३॥
वेद थके कहि तंत्र थके कहि, ग्रंथ थके निशि वासर गाते ॥
शेष थके शिव इंद्र थके पुनि, खोज कियो बहु भाँति विंधाते ॥

---

१ ठीक । २ वायु । ३ घर । ४ अथाह । ५ स्त्री । ६ बाकी । ७ ब्रह्मा ।

पीर थके पुनि मीर थके पुनि, धीर थके बहु बोलि गिराते॥
सुंदर मौन गही सिद्ध साधक, कौन कहै उसकी मुख बाते॥१४॥
योगि थके कहि जैन थके ऋषि, तापस थाकि रहे फल खाते॥
सन्यासि थके वनवासी थके जु उ-, दासि थके बहु फेर फिराते॥
शेखहु शालिक औरहू लाइक, थाकि रहे मनमें मुसकाते॥
सुंदर मौन गही सिद्ध साधक, कौन कहै उसकी मुख बाते॥१५॥

इति आश्चर्यको अंग संपूर्ण॥ ३४॥

इति श्री सुंदर विलास समाप्त॥

खेमराज श्रीकृष्णदास
"श्रीवेङ्कटेश्वर" छापाखाना–बंबई.

श्री.

परमात्मनेनमः ॥

ज्ञानसमुद्र ॥

अथ गुरुशिष्यलक्षण निरूपणो नाम प्रथमोल्लासः ॥ १ ॥

मंगलाचरण ॥ छप्पयछंद ॥

प्रथम वंदि[1] परब्रह्म, परम आनंद स्वरूपं ॥
द्वितिय वंदि गुरुदेव, दियो जिहिं ज्ञान अनूपं[2] ॥
तृतिय वंदि सब संत, जोरि करँ[3] तिनके आगे ॥
मन वच काय प्रणाम, करत भय भ्रम सब भागे ॥
इहि भांति मंगलाचरण करि, सुंदर ग्रंथ बखानिये ॥
तहँ विघ्न[4] कोउ उपजे नहीं, यहि निश्चय करि मानिये॥ १ ॥

दोहा छंद ॥

ब्रह्म प्रणम्य प्रणम्य गुरु, पुनि प्रणम्य सब संत ॥
करत मंगलाचरण इह, नाशत विघ्न अनंत[5] ॥ २ ॥
उहै ब्रह्म गुरु संत उह, वस्तु विराजत एक ॥
वचनबिलास विभाग[6] त्रयँ[7], वंदन भाव विवेक ॥ ३ ॥

---

१ नमस्कार । २ अद्भुत । ३ हाथ । ४ बाधा । ५ बेसुमार । ६ हिस्सा-खंड । ७ तीन ।

ग्रंथवर्णन दोहा ॥

वर्ण्यो चाहत ग्रंथको, कहां बुद्धि मम क्षुद्र[1] ॥
अति अगाध मुनि कहतहैं, सुंदर ज्ञानसमुद्र ॥ ४ ॥

चौपाई छंद ॥

ज्ञानसमुद्र ग्रंथ अब भाखों, बहुत भांति मनमें अभिलाखों[2] ॥
यथाशक्ति[3] हों वरणि सुनाऊं, जो सद्गुरु पहिं आज्ञा पाऊं ॥ ५ ॥

सोरठा छंद ॥

है यह अति गंभीर[4], उठत लहरि[5] आनंदकी ॥
मिष्ट सु याको नीर[6], सकल पदारथ[7] मध्य है ॥ ६ ॥

इंदव छंद ॥

जाति जिती सब छंदनकी बहु, सीप भई इहि सागरमाहीं ॥
है तिनमें मुकताफल[8] अर्थ लहै, उनको हितसों अवगाहीं ॥
जे नर जान कहावतहैं अति, गर्वभरे तिनकी गमि नाहीं ॥
सुंदर पैठि सकै नहिं जीवत, दै बुडकी[9] मरि जीवहिं जाहीं ॥ ७ ॥

जिज्ञासुलक्षण सवैया छंद ॥

जे गुरु भक्त विरक्त जक्तसों हैं, तिनके संतनको भाव ॥
वे जिज्ञासु उदास रहत हैं, गिनत न काहू रंक न राव ॥
वाद विवाद करत नहिं कबहूँ, वस्तु जानिबेको अति चाव ॥
सुंदर जाकी मति है ऐसी, सो पैठेंगे यह दरियाव ॥ ८ ॥

छप्पय छंद ॥

सुत कलत्र निज देह, आपको बंधनु जानत ॥
छूटो कौन उपाय, यहै उर अंतर आनत ॥

---

१ छोटी–स्वल्प । २ इच्छा । ३ बलानुसार । ४ गहरा । ५ तरंग । ६ पानी । ७ वस्तु । ८ मोती । ९ स्नानकरना ।

जन्म मरणकी शंक, रहे निशि दिन मनमाहीं॥
चौरासीके दुःख, नही कछु वरणे जाहीं ॥
इहि भांति रहत शोचत सदा, संतनको पूछत फिरै॥
है कोइ ऐसो सतगुरू, जो मेरो कारज करै ॥ ९ ॥

गुरुदेवकी दुर्लभता। चौपाया छंद ॥

गुरुदेव बिना नहिं मारग[1] सूझै, गुरुबिनु भक्ति न जाने ॥
गुरुदेव बिना नहिं संशै भाजै, गुरु बिनु लहे न ज्ञाने ॥
गुरुदेव बिना नहिं कारज होई, लोक वेद यों गावै ॥
गुरुदेव बिना नहिं सतगति कोई, गुरु गोविंद बतावै ॥ १०॥

तोटक छंद ॥

गुरुदेव बिना नहिं भागि जगै, गुरुदेव बिना नहिं प्रीति लगै ॥
गुरुदेव बिना नहिं शुद्ध हृदं, गुरुदेव बिना नहिं मोक्ष[2]पदं ॥ ११ ॥

मनहर छंद ॥

गुरुके प्रसाद बुद्धि, उत्तम दशाको गहै;
गुरुके प्रसाद भव[3], दुःख बिसराइये ॥
गुरुके प्रसाद प्रेम, प्रीतिहु अधिक बढै,
गुरुके प्रसाद राम, नाम गुण गाइये ॥
गुरुके प्रसाद सब, योगकी जुगति जाने,
गुरुके प्रसाद शून्य,में समाधि लाइये ॥
सुंदर कहत गुरुदेव जो कृपालु होइ
गुरुके प्रसाद तत्त्वज्ञान पुनि पाइये ॥ १२ ॥

दोहा छंद ॥

गुरुके शरणहिं आइये, तबहीं उपजै ज्ञान॥

---

१ रास्ता । २ मुक्ति । ३ संसार ।

तिमिर कहौ कैसे रहे, प्रगट होइ जब भान॥ १३ ॥

गुरुलक्षण ॥ रोला छंद ॥

चित्त ब्रह्म लय लीन, नित्त शीतलसो हिर्दय ॥
क्रोधरहित सब साधि,साधु पद नाहिंन निर्दय ॥
अहंकार नहिं लेश, महंत सबन सुख दिज्जय ॥
शिष्य परिक्ष्य विचारि, जगत महिं सो गुरु किज्जय॥ १४॥

छप्पय छंद ॥

सदा प्रसन्नस्वभाव, प्रगट सर्वोपर राजय ॥
तृप्ति ज्ञान विज्ञान, अचल कूटस्थ विराजय ॥
सुखनिधान सर्वज्ञ, मान अपमान न जाने॥
सारासार विवेक, सकल मिथ्या भ्रम माने॥
भिद्यंते हृदय ग्रंथिकों, छिद्यंते सब संशया ॥
कहि सुंदर सो सतगुरु सही,चिदानंद घन चिन्मया॥ १५॥

पमंगल छंद ॥

शब्द ब्रह्म परिब्रह्म भली विध जानिये,
पांचतत्त्व गुण तीन मृषा करि मानिये ॥
बुद्धिवंत सब संत कहैं गुरु सोइ रे,
और ठौर शिष जाइ, भ्रमे जिनि कोइरे ॥ १६ ॥

नंदि छंद ॥

ब्रह्मभूत अवस्था जामहिं होई,सुंदर सोई सतगुरु जाने कोई ॥१७॥

सोरठा छंद ॥

ऐसे गुरुपै आइ, प्रश्न करै कर जोरिकै ॥

---

१ अंधकार । २ अंतःकरण । ३ जरासा । ४ महात्मा । ५ विदीर्ण-करना ।, ६ काटना । ७ ईश्वर–पञ्चतत्त्व ।

शिष्य मुक्ति ह्वै जाइ, संशै कोई ना रहै ॥ १८ ॥

गुरुदेवकी प्राप्ति ॥ चौपाई छंद ॥

खोजत खोजत सतगुरु पायो, भूरिभाग्य[1] जाग्यो शिष्य आयो ॥
देखत दृष्टि[2] भयो आनंदा, यह तो कृपा करी गोविंदा॥१९॥

दोहा छंद ॥

गुरुको दरशन पायके, शिष पायो संतोषु ॥
कारज मेरो अब भयो, मनमें मान्यो मोषु ॥ २० ॥

शिष्यकृत प्रार्थनाष्टक ॥ सोरठा छंद ॥

शीशनाइ कर जोरि, शिष्य सु प्रारथना करी ॥
हे प्रभु लीजै छोरि, अभयदान मोहिं दीजिये ॥ २१ ॥

अर्धभुजंगी छंद ॥

अहो देव स्वामी, अहं अंध कामी ॥
कृपा मोहिं कीजै, अभैदान दीजै ॥ २२ ॥
बड़े भाग मेरे, लहे अंघ्रि[3] तेरे ॥
तुम्हें देखि जीजे, अभैदान दीजै ॥ २३ ॥
प्रभू हौं अनाथा[4], गहो क्यौं न हाथा ॥
दया क्यों न कीजै, अभैदान दीजै ॥ २४ ॥
दुखी दीन प्रानी, कहो ब्रह्म वानी ॥
हृदो प्रेम भीजै, अभैदान दीजै ॥ २५ ॥
जिते जैन देखै, सबै वेष पेखे ॥
तुम्है चित्त धीजै, अभैदान दीजै॥२६ ॥
फिरचो देश देशा, किये दूरि केशा ॥
नहीं यों पतीजै, अभैदान दीजै ॥ २७ ॥

---

१ बड़ीभाग्य । २ नज़र । ३ चरण । ४ यतीम । ५ पकरो ।

गयो आयु सारो, भयो शोच भारो ॥
वृथा देह छीजै, अभैदान दीजै ॥ २८ ॥
करो मौज ऐसी, रहै बुद्धि वैसी ॥
सुधा¹ नित्य पीजै, अभैदान दीजै ॥ २९ ॥

गुरुदेवकी प्रसन्नता ॥ सोरठा छंद ॥

मुदित² भये गुरुदेव, देखि दीनता शिष्यकी;
सबै बताऊं भेव, जोई जो तू पूछि है ॥ ३० ॥

शिष्यकी प्रसन्नता ॥ पद्धरी छंद ॥

कर जोरि उभै³ शिष करि प्रणाम, तब प्रश्न कीन मन धरि विराम ॥
हों कौंनु कौंनु यह जगत आहि, पुनि जन्म-मरण प्रभु कहहु काहि ३१

श्रीगुरुरुवाच ॥ बोधक छंद ॥

है चिदानंदघन ब्रह्म तु सोई, देह सँयोगते जिवत भ्रम होई ॥
जगत है सकल यह अनछतो जानो, जनम अरु मरण यह स्वप्न करि-
मानौ ॥ ३२ ॥

शिष्य उवाच ॥ गीतक छंद ॥

जो चिदानंद स्वरूपस्वामी, ताहि भ्रमु कहो क्यों भयो;
तिहि देहके संयोग ह्वैके, जिवत मानी क्यों लह्यो ॥
यह अनछतो संसार कैसे, जो प्रतक्ष प्रमानिये,
जनममरण प्रवाह⁴ जोसो, स्वप्नकरि क्यों जानिये॥ ३३ ॥

श्रीगुरुरुवाच ॥ दोहा छंद ॥

भ्रमहीको भ्रम ऊपजे, चिदानंद रस एक ॥
मृगजल प्रत्यक्ष देखिये, तैसे जगत विवेकैं⁵॥ ३४॥

---

१ अमृत । २ प्रसन्न । ३ दोनो । ४ धारा । ५ ज्ञान ।

चौपाई छंद ॥

निद्रामें सूतो है जौलों, जनम मरणको अंत न तौलों ॥
जागि परे तब स्वपन बखाना, तब मिटि जाइ सकल अज्ञाना ॥ ३५ ॥

शिष्य उवाच ॥ सोरठा छंद ॥

स्वामी यह संदेह, जागै सोवै कौन सो ॥
यह जो जड़ मन देह, भ्रमहीको भ्रम क्यों भयो॥ ३६ ॥

श्रीगुरुरुवाच ॥ कुंडलिया छंद ॥

शिष्य कहांलों पूछि है, मैं तो उत्तर दीन ॥
जबलगि चित्त न आइ है, तबलगि हृदय मलीन[3] ॥
तबलगि हृदय मलीन, यथारर्थे कैसे जाने ॥
भ्रमे त्रिगुणमें बुद्धि, आपु नाहीं पहिचाने ॥
कहिबो सुनबो करत, ज्ञान नहिं उपजे जहाँलों ॥
मैं तो उत्तरदीन, शिष्य पूछैगो कहाँलों ॥ ३७ ॥

इति श्रीसुंदरदासविरचिते ज्ञानसमुद्रे गुरुशिष्यलक्षणनिरूपणो नाम प्रथमोल्लासः ॥ १ ॥

---

१ आखिर । २ मूर्खता । ३ मैला । ४ जैसाहै तैसा ।

अथ उत्तम मध्यम कनिष्ट भक्तियोग निरूपणार्थं नाम द्वितीयोल्लासः ॥ २ ॥

शिष्यउवाच ॥ दोहा छंद ॥

स्वामी हृदय मलीन मम, शुद्ध कवन विधि होइ ॥
सोई कहो विचारिके, संशै[1] रहे न कोइ ॥ १ ॥

श्रीगुरुरुवाच ॥ चौपाई छंद ॥

सुनहु शिष्य यह तीनि उपाई, भक्तियोग हठयोग कराई ॥
पुनि सांख्य सुयोगहि तोहिं बतावै, तब तू शुद्ध स्वरूपहि पावै ॥ २ ॥

शिष्यउवाच ॥ पद्धरी छंद ॥

अब भक्ति कहो गुरु कै प्रकार, हठयोग अंग पाऊं विचार ॥
पुनि सांख्य सुयोग बताउ नाथ, भवसागर बूड़त गहहु[3] हाथ ॥ ३ ॥

श्रीगुरुरुवाच ॥ सवैया छंद ॥

शिषि प्रथमहिं नवधाभक्ति कहतहों, नवप्रकार है ताको भेद ॥
दशवीं प्रेमलक्षणा कहिये, सो पावै जो है निर्वेद ॥
पराभक्ति है ताके आगे, सेवक सेव्य न होइ विछेद ॥
उत्तम मध्य कनिष्ठ तीनिविधि, सुंदर मिटि है इनते खेदें ॥४॥

शिष्यउवाच ॥ छप्पय छंद ॥

अब नवधा भक्ति बखानि कहो गुरु भिन्नकरि,
प्रेमलक्षणा कौन सुनावहु शीश हाथ धरि ॥

---

१ द्विविधा । २ तरह । ३ पकरो । ४ छोटा । ५ दुःख । ६ अलग-अलग ।

परा भक्तिको भेद कहो गुरु कौन प्रकारा ।
को उत्तम को मध्य कौन कनिष्ठ निरधारा ॥
यह दयासिंधु मोसों कहो तुम समान नहिं कोइ है ।
जब कृपा कटाक्षहि देखिहो तब मेम कारज होइ है ॥५ ॥

श्रीगुरुरुवाच ॥ चौपाई छंद ॥

सुनि शिषि नवधाभक्ति विधान, श्रवण कीरतन सुमिरण जान ॥
पादसेवनहु अर्चन वंदन, दास्यभाव सख्यत्व समरपन ॥ ६ ॥

सोरठा छंद ॥

यह नव अंगनि जानि, सहित अनुक्रम कीजियो ।
सबहिनको सुखदानि, भक्ति कनिष्ठा यह कही ॥ ७ ॥

शिष्यउवाच मालती छंद ॥

श्रवण प्रभु कौनको कहिये। कीरतन कौन विधि लहिये ॥
अरु सुमिरण कौन कहि दीजै । चरण सेवा सो क्यों कीजै ॥ ८ ॥
अरचना कौन विधि होई । वंधना कहो गुरु सोई ॥
दास्य सख्यत्त्व पहिचानो । निवेदन आत्मा जानो ॥ ९ ॥

सोरठा छंद ॥

एक एक को भेव, मोंहि अनुक्रम सों कहो ॥
तुम कृपालु गुरुदेव, पूछत विलग न मानिये ॥ १० ॥

श्रीगुरुरुवाच ॥ चंपक छंद ॥

शिष्य तोहिं कहों सुनु वानी । सब संतनि साखि बखानी ॥
द्वै रूप ब्रह्मके जानो । निर्गुण सगुण पहिचानों ॥ ११ ॥
निर्गुण निजरूप नियारा । पुनि सगुण संत अवतारा ॥
निर्गुणकी भक्ति सु मनसों । संतनकी मन अरु तनसों ॥१२॥

---

१ हमारा । २ रीत । ३ गाना । ४ रीतवार । ५ पूजन ।

श्रवण भक्ति वर्णन ॥

एकाग्रेंहि चित्त जु राखै । हरिगुण सुनि रसेना चाखै ॥
पुनि सुनै संतनके वैना । यह श्रवणभक्ति सुखचैना ॥ १३ ॥

कीर्त्तन भक्ति वर्णन ॥

हरिगुण रसना गिन गावै । अति ही कर प्रेम बढ़ावै ॥
यह भक्ति जु कीर्त्तन कहिये । पुनि गुरु प्रसादते लहिये ॥१४॥

स्मरण भक्ति वर्णन ॥

अब सुमिरण दोयप्रकारा । इक रसना नाम उच्चारा ॥
इक हृदय नाम ठहरावै । यह सुमिरणभक्ति कहावै ॥ १५ ॥

पादसेवन भक्ति वर्णन ॥

निज चरणकमल महि लोटै । मनसा करि पाइँ पलोटै ॥
यह भक्ति चरणकी सेवा । समुझावत हैं गुरु देवा ॥ १६ ॥

अर्चन भक्ति वर्णन ॥ चामर छंद ॥

अब अर्चनाको भेद सुनु, शिषि देउँ तोहिं बताइ ॥
आरोपिके तहँ भाव अपनो, सेइये मन लाइ ॥
रचि भावको मंदिर अनूपम, अकल मूरति माहिं ॥
पुनि भाव सिंहासन बिराजै, भाव बिनु कछु नाहिं ॥ १७ ॥
निज भावकी तहँ करे पूजा, बेठि सनमुख दास ॥
तहँ भावहीको कलश भरि धरि, नित्य स्वामी पास ॥
त्यों भावहीको उबटनो करि, भाव नीर नह्वाइ
करि भावहीके बसन बहुविधि, अंग अंग बनाइ ॥ १८ ॥
तहँ भाव केशर भाव चंदन, भाव करि घसि लेहु ॥
पुनि भावही करि चरचि स्वामी, तिलक मस्तक देहु ॥

१ एकान्त । २ जीभ । ३ वचन, बात । ४ कान श्रुति । ५ कृपा । ६ विचित्र ।

लै भावहीके पुष्प उत्तम, गुहै माल अनूप ॥
पहिराइ प्रभुको निरखि नखशिख, भावसे दे धूप ॥ १९ ॥
तहँ भावही लै धरे भोजन, भाव लावें भोग ॥
पुनि भावही करिके समर्पै, सकल प्रभुको योग ॥
तहँ भावहीको जोइ दीपक, भाव घृत करि सीच ॥
तहँ भावहीकी करै थारी; धरै ताके बीच ॥२० ॥
तहँ भावकी घंटा रु झालरि, शंख ताल मृदंग;
तहँ भावहीके शब्द नाना, रहे अति सों रंग ॥
तहँ भावहीकी आरती करि, करहि बहुत प्रणाम;
तहँ स्तुती बहुविधि उच्चरै, धुनि सहित लै लै नाम ॥ २१ ॥

अथ स्तुत्यष्टक ॥ मोतीदाम छंद ॥

अहो हरि देव न जानत सेव, अहो हरि राइ परो तेरे पाइ ॥
सुनो यह गाथ गहो मम हाथ, अनाथ अनाथ अनाथ अनाथ ॥ २२ ॥
अहो प्रभु नित्य अहो प्रभु सत्य, अहो अविनाशि अहो अविगत्य ॥
अहो प्रभु भिन्न दिसे जु प्रकृत्य, निहत्य निहत्य निहत्य निहत्य ॥२३॥
अहोप्रभु पावन नाम तुम्हार, भजे तिनके सब जाहिं विकार ॥
करी तुम संतनकी जु सहाइ, अहो हरि हो हरि हो हरि राइ ॥२४॥
अहो प्रभु हो सर्वज्ञ सयान, दियो तुम गर्भहिते पय पान ॥
सो त्यों अब क्यों न करो प्रतिपाल, अहो हरि हो हरि हो हरि लाल २५॥
भजै प्रभु ब्रह्म पुरंद्र महेश, भजै सनकादिक नारद शेश ॥
भजै पुनि और अनेकहि साध, अगाध अगाध अगाध अगाध ॥२६॥
अहो सुखधाम कहै गुणि नाम, अहो सुखदैन कहैं मुनि वैन ॥
अहो सुखरूप कहै मुनि भूप, अरूप अरूप अरूप अरूप ॥२७॥

---

१ देखना । २ प्रशंसा । ३ मेरा । ४ अमर । ५ पवित्र । ६ मलीनता ।
७ सब जाननेवाले । ८ चतुर । ९ दुग्ध– दूध । १० निराकार ।

अहो युग आदि अहो युग अंत, अहो युग मध्य कहैं सब संत ॥
अहो युग जीवन हो युग जंत, अनंत अनंत अनंत अनंत ॥२८॥
अहो प्रभु बोलि सके कहो कौनु, गृही सिद्ध साधकही मुख मौन ॥
गिरा[1] मन बुद्धि न होइ विचार, अपार[2] अपार अपार अपार ॥२९॥

दोहा छंद ॥

बहुत प्रसंशा[3] करि कहू, हों प्रभु अति अज्ञान ।
पूजा विधि जानो नहीं, शरण राखु भगवान ॥ ३० ॥

वंदना भक्तिवर्णन ॥ लीला छंद ॥

बंदन दोइ प्रकार कहे शिष संभलियं ।
दंड समान करै तिनसों कर दंड दियं ॥
ज्यों मन त्यों तन मध्य प्रभुके पायँ परै ।
या विधि दोय प्रकार सु वंदन भक्ति करै ॥ ३१ ॥

दासत्व भक्तिवर्णन हंसाल छंद ॥

नित्य भवसो रहे हस्त[4] जोरे कहे;
कहा प्रभु मोहिं अज्ञा सु होई ॥
पलक पतिव्रता पति वचनखंडे नहीं;
भक्ति दासत्व[5] शिष जानि सोई ॥ ३२ ॥

सख्यत्व भक्तिवर्णन ॥ दुमिला छंद ॥

सुनु शिष्य शिषापन[6] तोहिँ कहैं, हरि आतमके नित संग रहै ॥
पल छांड़त नाहिं समीप सदा, जिनहीं तिनकूं यह जीव बहै ॥
अब तूं फिरिके हरिसो हित राख-, हि होहि सखा दृढ़[7] भाव गहै ॥
जिमि सुंदर मित्रनि मित्र जपे यह; भक्ति सखापन वेद कहै ॥ ३३ ॥

---

१ वाणी– वचन । २ असीम । ३ बड़ाई– तारीफ । ४ हाथ । ५ सेवकाई । ६ शिक्षा । ७ मजबूत ।

आत्मनिवेदन भक्तिवर्णन ॥ दोहा छंद ॥

प्रथम समर्पण मन करै, द्वितिय समर्पण देह ॥
तृतिय समर्पण धन करै, चतुर समर्पण गेह ॥ ३४ ॥

मोतीदाम छंद ॥

गेहं दारा धनं, दास दासी जनं;
बाजि हाथी गनं, सर्व देवो भनं ॥
और जे में तनं, है प्रभू ते तनं;
शिष्य वाणी सुनं, आतमा अर्पनं ॥ ३५ ॥

दोहा छंद ॥

नवधा भक्तिसु यह कही, भिन्न भिन्न समुझाइ ॥
याको नाम कनिष्ठ है, शिष्य सुनहु चितलाइ ॥ ३६ ॥

प्रेमलक्षणावर्णन ॥

शिष्यउवाच ॥ रासा छंद ॥

हे प्रभु मोसों कही तुम नौधाभक्ति श्रह।
फेरि कहो समुझाइ सुजान कनिष्ठ यह ॥
मध्यहिं भक्ति सुनाय कृपा करि क्यों न अब ।
जानत हो गुरुदेव जु औसर होइ कब॥३७॥

श्रीगुरुरुवाच ॥ सोरठा छंद

शिष्य सुनाऊँ तोहिं, प्रेम लक्षणा भक्तिको ॥
सावधान अब होहि, जो तेरे शिर भाग्य है ॥ ३८ ॥

इंदव छंद ॥

प्रेम लग्यो परमेश्वरसों तब, भूलि गयो सिगरो घरु बारा ॥

---

१ अर्पण-देना । २ चौथा । ३ घर । ४ स्त्री । ५ घोड़ा । ६ देना ।

ज्यों उनमत्त फिरै जितही तित, नेक रही न शरीर सँभारा ॥
श्वास उसास उठे सब रोम, चलै दृग नीर अखंडितं धारा ॥
सुंदर कौन करै नवधा विधि, छाकि परचौ रस पी मतवारा ॥ ३९ ॥

नाराच छंद ॥

न लाज तीन लोककी न वेदको कह्यो करे।
न शंक भूत प्रेतकी न देव यक्षते डरे ॥
सुने न कान औरकी द्रसै न और इच्छना;
कहै न मूख और वात, भक्ति प्रेमलच्छना ॥ ४० ॥

रंगिका छंद ॥

निशि दिन हरिसों चित्ताशक्ती, सदा लग्यो सो रहिये ॥
सुंदर कोइ न जानि सके यह, भक्ति सु प्रेमलक्षणा कहिये॥४१॥

वीजुमाला छंद ॥

प्रेम अधीनों छाक्यो डोलै। क्योंको क्योंहीं वाणी बोलै ॥
जैसे गोपी भूलीं देहा। तैसो चाहे जासों नेहा ॥ ४२ ॥

॥ छप्पय छंद ॥

कबहुँ हँसी उठि नृत्य, करै रोवन फिर लागे।
कबहुँक गदँगदकंठ, शब्द निकसे नहिं आगे ॥
कबहुँक हृदय उमंग, बहुत ऊंचे स्वर गावे।
कबहुँक ह्वै मुख मौन; गँगन ऐसे रहि जावे ॥
चित्त वित्त हरिसों लग्यो, सावधान कैसे रहै।
यह प्रेमलक्षणाभक्ति है, शिष्य सुनहु सुंदर कहै ॥ ४३ ॥

मनहर छंद

नीर बिनु मीनँ दुखी, क्षीर बिनु शिशु जैसे;

---

१ बावला। उलटी साँस। ३ आँख। ४ अटूट। ५ मुक्तकंठ। ६ आकाश। ७ मछली। ८ लडका पुत्र।

पीर[1]की ओषधि[2] विनु कैसे रह्यो जात है ॥
चातक ज्यों स्वाति बूंद, चंदको चकोर जैसे;
चंदनकी चाहि करि सर्प अकुलात[3] है ॥
निर्धन[4] ज्यों धन चाहे, कामिनी[5]को कंत[6] चाहे;
ऐसी जाके चाह नाहिं, कछु न सुहात है ॥
प्रेमको प्रवाह[7] ऐसे, प्रेम तहाँ नेम कैसे;
सुंदर कहत यह प्रेमहीकी बात है ॥ ४४ ॥

चौपैया छंद ॥

यह प्रेम भक्ति जाके घट होइ, ताहि कछू न सुहावै ॥
पुनि भूख तृषा[8] व्यापे नहिं ताके, निशि दिन नींद न आवै ॥
मुख ऊपर श्वासा पीरीसी, नैन नीर झर लायो ॥
यह प्रगट[9] चिह्न दीसत है जाको, प्रेम न दुरै दुरायो ॥ ४५ ॥

दोहा छंद ॥

प्रेम भक्ति सो यह कही, जानत बिरला कोइ ॥
हिये कलुषता[10] क्यों रहै, जा घट ऐसी होइ ॥ ४६ ॥

पराभक्ति वर्णन ॥ शिष्यउवाच ॥

चौपाई छंद ॥

हे प्रभु प्रेम भक्ति यह गाई, सो तो तुम मध्यमा सुनाई ॥
उत्तम भक्ति परा प्रभु कैसी, करहु अनुग्रह[11] कहिये जैसी॥४७॥

श्रीगुरुरुवाच ॥ दोहा छंद ॥

शिष्य तेरि सरधा बड़ी, सुनिबेकी अति प्यास;
परा भक्ति तोसों कहों, जाते होइ प्रकास ॥ ४८ ॥

---

१ पीड़ा । २ दवा । ३ घबड़ाना । ४ दरिद्र । ५ स्त्री । ६ स्वामी । ७ धारा। ८ प्यास । ९ जाहिर । १० अंधता, मलीनता आप। ११ कृपा ।

गीतकछंद ॥

विच्छेपै[1] कबहुँ न होइ हरिसों, निकट वृत्य निवृत्यहीं ॥
तहँ सदा सनमुख रहे आगे, हाथ जोरे भृत्यैहीं[2] ॥
पल एक कबहुँ न होइ अंतर, टकटकी लागी रहैं ॥
यह पराभक्ति प्रकाश परिचैय[3], शिष्य सुन सतगुरु कहैं॥४९॥

इंदव छंद ॥

सेवक सेव्य मिल्यो रसु पीवत, भिन्न नहीं अरु भिन्न सदाहीं ॥
ज्यों जल पिंड धरचो जल बीचसु, पिंड रु नीरं[4] जुदे कछु नाहीं ॥
ज्यों दृगमें पुतरी दृग एक, नहीं कछु भिन्न रु भिन्न दिखाहीं॥
सुंदर सेवकभाव सदा यह, भक्ति परा परमातम माहीं॥५०॥

छप्पय छंद ॥

श्रवण बिना धुनि सुने, नयन बिनु रूप निहारै ।
रसनां[5] बिनु उच्चरे, प्रसंशा[6] बहु विस्तारै ॥
नृत्य चरण बिनु करे, हस्त बिनु ताल बजावै ।
अंग बिना मिलि संग, बहुत आनंद बढ़ावै ॥
बिनु शीश नवे जहँ सेव्यको, सेवकभाव लिये रहै; ।
मिलि परमातमसों आतमा, पराभक्ति सुंदर कहै ॥ ५१ ॥

चंदना छंद ॥

सेव्यको जायके दास ऐसे मिलै । एकसो होय पै एक ह्वै ना मिलै॥
आपनो भाव दासत्व छांड़े नहीं । सो पराभक्ति है भाग्य पावै कहीं५२

हरिसंषाणा छंद ॥

मिले एक संगा । नहीं भिन्न अंगा ॥

---

१ विछोहा–जुदाई । २ नौकर–दास । ३ पहिचान । ४ पानी । ५ जिह्वा । ६ यश ।

करै यों विलासा। धरै भाव दासा ॥ ५३ ॥

चौपाई छंद ॥

ज्यों मृगतृष्णा धूप मंझारी। एक मेक अरु दीसे[1] न्यारी ॥
त्योंही सेवक स्वामी एका। सुख विलास यह भिन्न विवेका॥५४॥

तोटक छंद ॥

हरिमें हरिदास विलास करैं। हरिसों कबहूं न बिछोह परैं ॥
हरि अक्षर त्यों हरिदास सदा। रस पीवनकूं यह भाव जुदा॥५५॥

मनहर छंद ॥

तेजोमय स्वामी तहूं, सेवकही तेजोमय;
तेजोमय चरणनीको, तेजो शिर नावही ॥
तेजोमय सब अंग, तेजोमे मुखारविंद[2];
तेजोमें निरखि नैन, तेजोमय भावही ॥
तेजोमय ब्रह्मकी, प्रसंशा करै तेजोमय;
तेजहीकी रसना, गुणानुवाद गावही ॥
तेजोमय सुंदरहू, भाव पुनि तेजोमय[3];
तेजोमय भक्तिहूको, तेजोमय पावही ॥ ५६ ॥

दोहा छंद ॥

त्रिविध भक्ति लक्षण कहैं, उत्तम मध्य कनिष्ठ;
शिष्य सुनहु सिद्धांतैं यह, उत्तम भक्ति गरिष्ट॥

इति श्रीसुंदरदासविरचिते ज्ञानसमुद्रे उत्तम
मध्यम कनिष्ठ भक्तियोग निरूपणं नाम
द्वितीयोल्लासः ॥ २ ॥

---

१ दिखाई दे। २ मुखकमल ३। मत।

अथ अष्टांगयोग निरूपणार्थं नाम तृतीयोल्लासः ॥ ३ ॥

शिष्य उवाच ॥ चौपाई छंद ॥

हे प्रभु नवधा कही कनिष्ठा । प्रेमलक्षणा मध्य सुपष्ठा ॥
पराभक्ति उत्तमा बखानी । सो तीनो मै नीके जानी ॥ १ ॥
अब प्रभु योग सिद्धांत सुनाओ । तिनके अंग मोहिं समुझाओ ॥
तुम सर्वज्ञ[1] जगतगुरु स्वामी । करहु कृपा अब अंतरयामी ॥ २ ॥

श्रीगुरुरुवाच ॥ दोहा छंद ॥

तैं शिष पूच्छचो चाहि करि, योग सिद्धांत प्रसंग;
तोहिं सुनाऊं हेत करि, अष्ट योगके अंग ॥ ३ ॥
तिनके अंतरभूत है, मुद्रावंध समस्त[2] ॥
नाड़ी चक्र प्रभाव सब, आवै तेरे हस्त ॥ ४ ॥

छप्पय छंद ॥

प्रथम अंग यम कहों, दूसरो नेम बताऊं ।
तिसरो आसन भेद, सुनो सब तोहिं सुनाऊं ॥
चतुरथ प्राणायाम, पंचम प्रत्याहारं ।
षष्टम सुनि धारणा, ध्यान सत्तम विस्तारं ॥
पुनि अष्टम अंग समाधि है, भिन्न भिन्न समुझावहूँ;
अब सावधान है शिष्य सुनु, सो सब तोहिं बतावहूँ ॥ ५ ॥

दोहा छंद ॥

दश प्रकारके यम कहों, दश प्रकारके नेम ॥

---

१ सर्व वातोंके जानने हारे । २ सम्पूर्ण ।

उभय[1] अंग पहिले संधे, तब पाछे है प्रेम[2] ॥ ६ ॥
प्रथमहिं यम दृढ़[3] कीजिये, तब ऊपर विस्तार[4] ॥
माहिलायत जु डिगै नहीं, यों यम लेहु विचार ॥ ७ ॥

अथ यमको निर्णय ॥ छप्पय छंद ॥

प्रथम अहिंसा सत्य, जानि अस्तेयकु त्यागै।
ब्रह्मचर्य दृढ़ गहै, धृति क्षमसो अनुरागै ॥
दया बड़ो गुण माग, आर्यव रुदे पुनि आनै;
मिताहार नित करे, सोइ नीकी विधि जानै ॥
यह दश प्रकारके यम कहे, हठप्रदीपिका ग्रंथमें;
जो पहिले इनको गहै, सो चलत योगके पंथमें ॥८॥

प्रथम अहिंसाको लक्षण ॥ दोहा छंद ॥

मन करि दोष न कीजिये, वचन न लावै कर्म ॥
घात न कीजे देहसों, यहै अहिंसा धर्म ॥ ९ ॥

द्वितीय सत्यको लक्षण ॥ सोरठा छंद ॥

सत्यसु दोय प्रकार, एक सत्य जो बोलिये ॥
मिथ्या[6] सब संसार, दूजो सत्य सु ब्रह्म है ॥ १० ॥

तृतीय अस्तेयको लक्षण ॥ चौपाई छंद ॥

सुनिये शिष अब हीं अस्तेयं, चोरी द्वै प्रकारकी हेयं ॥
तनकी चोरी सबहि बखानै, मनकी चोरी मनहीं जानै ॥११॥

चतुर्थ ब्रह्मचर्यको लक्षण॥ पवंगल छंद ॥

ब्रह्मचर्य इहि भांति भली विधि जानिये।
काम जु अष्ट प्रकार सही करि मानिये ॥
वाच काँछ दृढ़ वीर्य यतीही होयरे।

---

१ दोनो। २ प्रीति। ३ मज़बूत। ४ फैलाव। ५ जीवको न मारना। ६ झूठा।

और बात अब नाहिं जितेंद्रिय कोयरे ॥ १२ ॥

पंचम अष्टप्रकार मैथुनको लक्षण ॥

दोहा छंद ॥

नारी सुमिरण श्रवण सुनि, दृष्टि रु भाषण होइ;
नद्य वृतांत रु हास्य रति, बहुरि सपर्शहि कोइ॥ १३ ॥

सोरठा छंद ॥

शिष्य सुनहु यह भेद, मैथुन[1] अष्ट प्रकार तजि ॥
कह्यो मुनीश्वर वेद, ब्रह्मचर्य तब जानिये ॥ १४ ॥

षष्ठम क्षमाको लक्षण ॥ मालती छंद ॥

क्षमा अब सुन शिष्य मोसों । सहनता[2] सब कहों तोसों ॥
दुःख दुष्ट दे ही ज्यो भारी । दुःसह मुख वचन पुनि गारी॥१५
कबहुँ नाहिं क्षोभको पावे । उदधि ज्यों अग्नि बुझावे ॥
बहोरी तन त्राश दै कोई । क्षमा करि सहे शिष्य सोई ॥१६

सप्तम धृतिको लक्षण ॥ इंदव छंद ॥

धीरज धारि रहै अभिअंतर, जो दुख देहहिं आय परै जू ॥
ऊठत बैठत बोलत चालत, धीरजही धरि पाँव धरै जू ॥
जागत सोवत जीवत पीवत, धीरजसों धरि योग करै जू॥
देव दईतहि भूतहि प्रेतहि, कालहुते कबहूँ न डरै जू ॥१७॥

अष्टम दयाको लक्षण ॥ तोटक छंद ॥

सब जीवनके हितकी जु कहे, मन वाचक काय[3] दयालु रहें ॥
सुखदायकहू सब भाव लिये, शिष्य जानि दया निरवैर हिये१८

नवम आर्यवको लक्षण ॥ हरिपद छंद ॥

कोमल हृदय रहै निशि वासर, कोमल बोले वानी ॥

---

१ स्त्रीसंभोग । २ सहन शील– सुशील । ३ शरीर ।

कोमल दृष्टि निहारै सबको, कोमलता सुखदानी ॥
कोमल भूमि करै नीकी विधि, बीज वृद्धिं ह्वै आवै ॥
त्यों यह आर्यव लक्षण सुनु, शिष्य योग सिद्धको पावै ॥१९॥

दशम मिताहारको लक्षण ॥ पद्धरी छंद ॥

जो सात्विकं अन्न सु करे भक्षि ।
अति तिक्तं न मधुं रस निरखि अंक्षि ॥
तर्जि भाग चतुर्थक गहैं सार ।
सुनु शिष्य कह्यो यह मिताहार ॥ २० ॥

शौचको लक्षण ॥ चर्पट छंद ॥

वाहिर भीतर मज्जंन करिये, मृतिकौं जल करि वपुमैंल हरिये ॥
रागादिक त्यागै हृद शुद्धं, शौच उभै शिष जानु प्रबुद्धं ॥ २१ ॥

दोहा छंद ॥

दश प्रकार यह यम कहे, प्रथम योगको अंग ॥
दश प्रकार अब नियम सुनु, भिन्न भिन्न परसंग ॥ २२ ॥

दशविधि नियम वर्णन ॥ छप्पय छंद ॥

तप संतोषहि गहै,बुद्धि आस्तिक जो आनै ॥
दान समुझि कर देय, मानसी पूजा ठानै ॥
श्रवण सिधांतै सुनै, लाज मति दृढ़ करि राखै ॥
जाप करै मुख मौन, तहाँ लगि वचन न भाखै ॥
पुनि होम करै इहि विधि, तहाँ जैसी विधि सत गुरु कहै ॥
दश प्रकारको नियम यह, भाग्य बिना कैसे लहै ॥ २३ ॥

प्रथम तपको लक्षण ॥ पाइक्त छंद ॥

शब्द स्पर्श रूपहि तजनं, त्यों रस गंध नाहि भजनं ॥

१ मुलायम । २ सुकुमारता । ३ उन्नति-तरक्की । ४ सत्यवक्ता । ५ कड़वा । ६ मीठा । ७ आंखैं । ८ छाँडना । ९ मूल । १० स्नान । ११ मिट्टी । १२ शरीरकी मैल । १३ कथा ।

इंद्रिय स्वाद[1] ऐसे हरणं[2], सो तप जानै नित्य समरणं[3] ॥२४॥

द्वितीय संतोषको लक्षण ॥ हंसाल छंद ॥

देहको प्रारब्ध[4] आइ आगे रहै, कल्पना छांड़ि निश्चित होई॥
पुनि यथा लाभसों वेद मुनि कहत हैं ॥
परम संतोष शिष जानि सोई ॥ २५ ॥

तृतीय आस्तिक्यको लक्षण ॥
सवैया छंद ॥

शास्त्र रु वेद पुराण कहत हैं, शब्द ब्रह्मको निश्चय धार ॥
पुनि गुरु संत सुनावत सोई, बारबार शिष ताहि विचार ॥
होइ कि नाहिं शोच मत आनाहिं, अप्रतीत[6] हृदयेते टारि ॥
करि प्रतीत बिश्वास आनि उर, यह आस्तिक्य बुद्धि निरधारि२६॥

चतुर्थ दानको लक्षण ॥ कुंडलिया छंद ॥

दान कहतहैं उभय विधि, सुनु शिष करिहि प्रवेश ॥
एक दान कर दीजिये, एक दान उपदेश ॥
एक दान उपदेश सु तो परमारथ होई ॥
दुसरो जल अरु अन्न बसनं[7] करि पौषै कोई ॥
पात्र कुपात्र विशेष भली भूमि उपजे धानं ॥
सुंदर देखि विचारि उभय[8] विधि कहिये दानं ॥ २७ ॥

पंचम पूजाको लक्षण ॥ त्रिभंगी छंद ॥

तो स्वामी संगा । देव अभंगो[9] । निर्मलं[10] अंगा । सेवेजू ॥
करि भाव अनूपं । पाती पुष्पं । गंधं धूपं । खेवेजू ॥
नहिं कोई आशा । काटे पाशा । इहि विधि दासा । निष्कामं[11]॥
शिष ऐसे जानै । निश्चय आनै। पूजा ठानै । दिन यामं[12]॥२८॥

---

१ मजा- । २ छोड़ना । ३ स्मरण । ४ भाग्य । ५ फर्ज़करना ।
६ अविश्वास । ७ वस्त्र । ८ दोनो- दो । ९ अखंड । १० स्वच्छ ।
११ निष्प्रयोजन । १२ प्रहर या पहर ।

षष्ठम श्रवण सिद्धांतको लक्षण ॥ कुंडलिया छंद ॥

बाणी बहुत प्रकार हैं, ताको नाहीं अंत ।
जोई अपने कामकी, सोइ सुनै सिद्धांत ॥
सोइ सुनै सिद्धांत, संत जन गावत होई ।
चित्त आनिके ठौर, सुनै जो नित प्रति सोई ॥
यथा हंस पयं पिये, रहै ज्योंको त्यों पानी ।
ऐसे लहै विचारि शिष्य, बहुविध है बानी ॥ २९ ॥

सप्तम न्हीको लक्षण ॥ चामर छंद ॥

लज्जा करै गुरु संतकी जब, तब सँरै सब काज।
तन मन न डुलवै आपनो, करै लोकहूते भाज ॥
लज्जा करै कुलकुटंबकी, लांछन लगावै नाहिं ।
यह लाजते सब काज होई, लाज गहि मनमाहिं ॥ ३० ॥

अष्टम मतिको लक्षण ॥ सवैया छंद ॥

नाना सुख संसार जानि तजि, तिनहिं देखि लोलुप ना होई ॥
स्वर्गादिककी करै न इच्छा, इहांमूत्र त्यागे सुख दोई ॥
पूजा मान बड़ाई आदर, निंदा करै आन जो कोई ॥
या प्रकार मति निश्चल जाकी, सुंदर दृढ़ मति कहिये सोई ॥ ३१ ॥

नवम जापको लक्षण ॥ पवंगल छंद ॥

जाप नित्य व्रत धारि करै मुख मौनसों ।
एक दोय घटिका जु गहै मन पौनसों ॥
जो अधिका कछु होय बड़ा अति भाग है ।
शिष्य तोहिं कहि दीन भलो यह माग है ॥ ३२ ॥

---

१ दूध । २ बहुत प्रकार । ३ वचन, बात । ४ सिद्धिहोना, अंजाम ।

दशम होमको लक्षण ॥ चामर छंद ॥

अब होम दोय प्रकार सुनु, शिष्य कहों तोहिं बखानि ॥
इक अग्निमें संकल्प होमै, सो तौ प्रवृत्ति जानि ॥
जो निवृत्ति जिज्ञास, होई ताहि ओर न षोम ॥
सो ब्रह्म अग्नि प्रज्वालनीके, करै इंद्रियहोम ॥ ३३ ॥

दोहा छंद ॥

दश प्रकार संयम कहे, दश प्रकार यह नेम ॥
योग ग्रंथमें लिखतुहै, मो समुझाये क्षेम॥ ३४॥

सोरठा छंद ॥

शिष्य सुनाये तोहिं, उभय अंग यह योगके ।
सावधान अब होहि, अबहिं षडंग बखानि हों ॥ ३५ ॥

चौपाई छंद ॥

प्रथम कहों शिष आसन भेदा, जाते रोग मिटे बहु खेदा ॥
ऋषि मुनि योगी ब्रह्म अराधे, तिन सब पहिले आसन साधे ३६ ॥

तोटक छंद ॥

शिव जानतहैं सब योग कला, नित संग शिवा पुनि है अचला ॥
दृढ़ आसनते नहिं विंद खसें, दृग देखत दंपति लोक हसें ३७॥

कुंडलिया छंद ॥

चौरासी लक्ष जीवकी, जाति कहतहैं वेद ।
तितनेहीं आसन सबै, जानतहैं शिव भेद ॥
जानतहैं शिव भेद, और जानत नहिं कोई ।
आपु दया तिन करी, सुगम करि दीने सोई ॥
लक्ष लक्षमें एक, एक काढ़ें यम पासी;

---

१ लीनहोना । २ अलगहोना । ३ जलाना । ४ कुशल । ५ पार्वती ।
६ स्त्री, पुरुष ।

सुगम सबहिको किये, प्रगट आसन चौरासी ॥ ३८ ॥

दोहा छंद ॥

चतुँरासी आसननिमें, सारभूत द्वै जानि ।
सिद्धासन पद्मासनै, नीके कहों बखानि ॥ ३९ ॥

सिद्धासन लक्षण ॥ मनहर छंद ॥

एड़ी बाम पाँवकी लगावै सिवनिकै बीच,
वाही योनिठौर ताहि नीके करि जानिये ॥
तैसेहिं जुगति करि विधिसों भले प्रकार,
मेढहूकै उपर दक्षिण पाँव आनिये ॥
सरल शरीर दृढ इंद्रिय संयम करि,
अचल उरँध दृष्टि भ्रूके मध्य ठानिये ॥
मोक्षके कपाटको उघारत अवश्यमेवै,
सुंदर कहत सिद्ध आसन बखानिये ॥ ४० ॥

पद्मासन लक्षण ॥ छप्पाय छंद ॥

दक्षिण उरु उपरेहि प्रथम वामहिं पग आनै;
वामहिं उरु उपरे तबहिं दक्षिण पग ठानै ॥
दोउ कर पुनि फेरि पृष्ठ पीछे करि आवे, ।
दृढ़कै गहै अंगुष्ठ चिबुकै वक्षस्थल लावे ॥
इहि भांति दृष्टि उनमेष करि, अग्र नासिका राखि है ॥
सब व्याधि हरण योगीनकी, पद्मासन यह भाखि है॥४१ ॥

पद्धरी छंद ॥

शिष्य और जु आसन हरै रोग । इन दोय आसन साधै योग ॥
ताते तुं ए अब उभय साधि । जबलगि पहुँचै निर्भय समाधि४२॥

---

१ सहज । २ विदित–जाहिर । ३ चौरासी । ४ भग । ५ सीधा ६ निश्चल । ७ ऊपर । ८ किवाँड़ । ९ जरूर वा ज़रूर । १० पीठ । ११ । ठुड्डी । १२ छाती ।

प्राणायाम लक्षण ॥ बिजूमाला छंद ॥

आगे कीजे प्राणायामं । नाड़ी चक्रं पावै ठामं ॥
पूरै राखै रेचक कोई । हो निःपापं योगी सोई ॥ ४३ ॥

दोहा छंद ॥

नाड़ीकही अनेक विधि, हैं दश मुख्यविचार ॥
इड़ा पिंगला सुषुमना, सबमें ए त्रय सार ॥ ४४ ॥

तीननाड़ी वर्णन ॥ छप्पय छंद ॥

बाम इड़ा स्वर जानि, चंद्र स्वर कहिये वाको ॥
दक्षिण स्वर पिंगला, सूर्यमय जानौं ताको ॥
मध्य सुषुमना बहै, ताहि जानत नहिं कोई ॥
है यह अग्नि स्वरूप, काज याहीते होई ॥
जब इड़ा पिंगला गति थकै, प्राणायाम प्रभावते ॥
तब चलै सुषुमना उलटिकै, सुख पावै घटचावते ॥ ४५ ॥

दशवायु वर्णन ॥ दोहा छंद ॥

दशप्रकारके पवन हैं, भाषों ताके नाम ।
कहे बिना नहिं जानिये, कौन ठौर विश्राम ॥ ४६ ॥

चौपाई छंद ॥

प्राणापान समानाहिं जानौं, व्यानोदान पंच मन मानौ ॥
नाग कूर्म रु कृकलसु कहिये, देवदत्त सुधनंजय लहिये ४७ ॥

कुंडलिया छंद ॥

प्राण हृदयमें बसत है, गुद मंडलै अपान ।
नाभि समानाहिं जानिये, कंठहि बसै उदान ॥
कंठहि बसै उदान, व्यान व्यापक घट सारे ।

---

१ अनघ, पापरहित । २ भाँति । ३ प्रधान । ४ आराम ॥

नाग करै उद्गार, कूर्म सुपलक उघारे ॥
कृकलसों उपजे क्षुधो, देवदत्तहि जंभानं।
मरे धनंजय होइ, पंच पूरब सो प्रानं ॥ ४८ ॥

दोहा छंद ॥

चक्र अनुक्रम कहतहों, सुनु शिष ताके नाम।
पीछे तोहिं बतायहों, विधिसों प्राणायाम ॥ ४९ ॥

चक्र अनुक्रम ॥ पद्धरी छंद ॥

शिष प्रथम चक्र आधार जानि, तहँ अक्षर चारि चतुर्दलानि ॥
पुनि व श ष स वर्ण विचारि लेहु, है सब शरीर आधार येहु ॥ ५० ॥
पुनि स्वाधिष्ठान सुद्वितीय चक्र, तहँ षट दल षट अक्षर अवक्र ॥
गनि ब भ म य र ल ये वर्ण मध्य, सो ब्रह्मचक्र कहिये प्रसिद्ध ॥ ५१ ॥
मणिपूरक चक्र दश दल प्रभाव, पुनि अक्षर दशते उक्त नांव ॥
तहँ ड ढ ण त थ द ध न प फ प्रमानि, इन वरण सहित तृतिये बखानि
पुनि अनहत चक्र है हृदै माहिं, दल अक्षर द्वादश अधिक नाहिं ॥
क ख ग घ ङ च छ ज झ ञ ट ठ समेत, शिष्य चक्र चतुर्थय समझि हेत ॥
सुनि पंचम चक्र विशुद्धै आहि, दल अक्षर षोडशै लगै ताहि ॥
तहँ आदि अकार अःकार अंत, शुभ षोड़श स्वर ताके गनंत ॥ ५४ ॥
अब आज्ञाचक्रसु भुव मंझार, लखि द्वै दल द्वै अक्षर विचार ॥
तहँ हंसं वरण अक्षर अनूप, यह षष्ठमचक्र कह्यो स्वरूप ॥ ५५ ॥
जब इन षटचक्रन वेधि जाइ, तब उहै सुषमना सुख समाइ ॥
याहीते प्राणायाम सार, सुनु शिष्य कहों ताको विचार ॥ ५६ ॥

---

१ डकार। २ भूख। ३ लगातार। ४ अतिपवित्र। ५ सोलह।
६ आत्मा ॥

प्राणायामकी क्रिया ॥ दोहा छंद ॥

इड़ा नाड़ि पूरक करै, कुंभक राखै माहिं।
रेचक करिये पिंगला, सब पातक[1] कटि जाहिं ॥ ५७ ॥

सोरठा छंद ॥

बीज मंत्र संयुक्त[2], षोड़श पूरक पूरिये,
चौसठ कुंभक युक्त, द्वात्रिंशत[3] करि रैचना॥५८ ॥

चौपाई छंद ॥

बहुँरि[4] विपर्यय ऐसे धारै। पुरी पिंगला इड़ा निकारै ॥
कुंभक राखि प्राणको जीतै । चतुर्वार अभ्यास व्यतीते ॥५९॥

चामर छंद॥

यह ऋषिन युक्ति सुनाइ है, यहि भांति प्राणायाम ॥
सतगुरु कृपाते पाइये, मन होइ अति विश्राम ॥
अब सब मतांतर कहत हों, सुनु शिष्य आनि प्रभाव॥
गोरख उक्ति बखानि हों, तिहि सुनत उपजै चाव ॥६०॥

अथ गोरख उक्ति ॥ चर्पट छंद ॥

सोहं[6] सोहं सोहं हंसो, सोहं सोहं सोहं अंसो ॥
श्वासोश्वासं सोहं जापं, सोहं सोहं आपे आपं ॥ ६१ ॥
द्वादश मात्रा पूरक भरणं, द्वादश मात्रा कुंभक करणं ॥
द्वादश मात्रा रेचक जानं, पूर्वा पूर्व विपर्यय ठानं ॥ ६२ ॥
अधमें मात्रा द्वादश युक्तं, मध्यम मात्रा द्विगुणा युक्तं ॥
उत्तम मात्रा त्रिगुणी कहिये, प्राणायामसु निर्णय लहिये॥६३॥

सोरठा छंद ॥

कुंभक अष्टसु विद्ध, मुद्रा दशहि प्रकारकी ॥
बंध तीन तिन मध्य, उत्तम साधन योगके॥६४॥

---

१ पाप । २ साथ । ३ तीनसौ दो । ४ फिर । ५ मुहावरा । ६ मैहू ।

कुंभकप्रकार वर्णन ॥ छप्पय छंद ॥

सूर्य भेद न प्रथम, द्वितिय ऊजाई कहिये ॥
शीतकार पुनि तृतिय,शीतली चतुरथ ग्रहिये ॥
पंचम है भद्रिका, भ्रामरी षष्ठम जानहु ॥
मूर्छ नाम सप्तमं, अष्टमं केवल मानहु ॥
यह कुंभक अष्ट प्रकारके, होइ पवन अवरोधनं॥
तब मुद्रावंध लगाइये, प्रथम करै घट शोधनं ॥६५॥

मुद्रा नाम ॥ गीतक छंद ॥

सुनि महामुद्रा महावंधक, महावोधक खेचरी ॥
उड्डियानवंध सुमूलवंधक, वंध जालंधर करी ॥
विपरीत करनी पुनि वज्रोली, शक्ति चालन कीजिये ॥
इमि होय योगी अमर काया, शशिकला नित पीजिये ॥ ६६ ॥

प्रत्याहार नाम ॥ कुंडलिया छंद ॥

श्रवण शब्दको गहतु है, नैन गहतु है रूप ।
गंध गहतु है नासिका, रसना रसकी चूप ॥
रसना रसकी चूप, त्वचा सपरसही चाहै ।
इन पंचनको जीति, आतमा नित आरा है ॥
कूर्म अंगही गहे, प्रभा रवि कर्षण द्रवनं ।
इमि करि प्रत्याहार, विषय शब्दादिक श्रवनं ॥ ६७ ॥

अथ पंचतत्त्वकी धारणा ॥

पृथ्वी तत्त्वकी धारणा ॥ चौपाई छंद ॥

यह चारौं कौन लकारहिरौं युक्तं, जानहु पृथ्वीरूपं ॥

---

१ गला साफ करना । २ उलटा । ३ इस प्रकार ।

पुनि पीतवर्ण ह्रादि मंडल कहिये, विधि अंकित सु अनूपं ॥
तहँ घटिका पंचप्राण करि, लीनं चित्त स्तंभन होई ॥
सुनु शिष्य अवनि जय करै, नित्यही भूमि धारणा सोई ॥६८॥

जलतत्त्वकी धारणा ॥

अक्षर वकार सहित संयुक्तं, चंद्र खंड निरधारं ॥
पुनि हृषीकेश अंकित अति शोभित, कंठ पारदाकारं ॥
तहँ घटिका पंचप्राण करि लीनं, चित्त धारि करि रहिये ॥
विष कालकूट व्यापे नहिं कबहूँ, वारि धरणा कहिये ॥ ६९ ॥

तेजतत्त्वकी धारणा ॥

यह अग्नि त्रिकोणरेफ संयुक्तं, पद्मराग आभासं ॥
पुनि इंद्रगोप द्युति मध्य तालुका, कहियतु रुद्र निवासं ॥
तहँ घटिका पंचप्राण करि लीनं, ग्रंथहि उक्त बखानं ॥
सुनु शिष्य अग्नि भयहंता कहिये, तेज धारणा जानं ॥ ७० ॥

वायुतत्त्वकी धारणा ॥

भ्रुव मध्य जकार सहित षट कोनं, ऐसी लच्छ विचारं ॥
पुनि मेघवर्ण ईश्वर करि अंकित, वारंवार निहारं ॥
तहँ घटिका पंचप्राण करि लीनं, खेचरि सिद्धहि पावै ॥
सुनु शिष्य धारणा वायुतत्त्वकी, जो नीके करि आवै ॥ ७१ ॥

आकाशतत्त्वकी धारणा ॥

यह ब्रह्मरंध्र आकाश तत्त्व है, शुभ्र वर्तुलाकारं ॥
तहँ निश्चय जानि सदाशिव तिष्ठति, अक्षर सहित हकारं ॥
तहँ घटिका पंचप्राण करि लीनं, परममुक्तिकी दाता ॥
सुनु शिष्य धारणा व्योमतत्त्वकी, योग ग्रंथ विख्याता ॥ ७२ ॥

---

१ तुलना । २ रुकावट । ३ धरती । ४ हलाहल ।

यह एक थंभनी एक दावनी, एक सुदहनी कहिये ॥
पुनि एक शोषनी एक भ्रामनी, सतगुरु विना न लहिये ॥
यह पंचतत्त्वकी पंचधारणा, तिनके भेद सुनैये ॥
अब आगे ध्यान कहों बहुविधि करि, योग ग्रंथमें पैये ॥ ७३ ॥

ध्यान वर्णन ॥ दोहा छंद ॥

प्रथमहिं ध्यान पदस्थ है, द्वितिय पिंड आधीत ॥
तृतिय ध्यान रूपस्थ है, चतुरथ रूपातीत ॥ ७४ ॥

पदस्थ ध्यान वर्णन ॥ इंदव छंद॥

जे पद चित्र रचै अतिगूढ़, सुजानि महापरमारथ जामै ॥
ते अवलोकि[1] विचार करै पुनि, चित्त धरै निहचै करि तामै ॥
केकरि कुंभक मंत्र जपे उर, अक्षरते पुनि जानि अनामै[2] ॥
सुंदर ध्यान पदस्थ यहै मन, निश्चल होय सरै[3] सब कामै ७५॥

पिंडस्थ ध्यान ॥ चौपाई छंद ॥

सुनहु शिष्य कहूं ध्यान पिंडस्थं, । पिंडको शोधन करिये स्वस्थं ॥
षटचक्रनको धरिये ध्यानं, पुनि सतगुरुको ध्यान प्रमानं ७६॥

रूपस्थ ध्यानं ॥ नाराच छंद ॥

निहारिके त्रिकूट मध्य, विस्फुलिंग देखिहै ॥
पुनि प्रकाश दीप ज्योति, दीपमाल पेखिहै ॥
नक्षत्र माल बीजुरी, प्रभा प्रत्यक्ष होइ है ॥
अनंत कोटि चंद्र सूर, ध्यान मध्य जोइ है ॥ ७७ ॥
मरीचिका समान शुभ्र, और लक्ष जानिये ॥
झलामलं समस्त[4] विश्व, तेजमै बखानिये ॥
समुद्र मध्य डूबिके, उघारि नयन दीजिये ॥

---

१ देखि । २ जिसका नाम न हो—नीरोग परमेश्वर । ३ बनजावैं । ४ सम्पूर्ण ।

दशों दिशा झलामलं, प्रतक्ष ध्यान कीजिये ॥ ७८ ॥

रूपातीतध्यान ॥ पद्धरी छंद ॥

यह रूपातीत जु शून्य ध्यान । कछु रूप न रेख न है निदान¹ ॥
तहँ अष्ट प्रहर लों चित्त लीन । पुनि सावधान ह्वै अति प्रवीन² ॥
ज्यों पंछीकी गति गगनमाहिं । कहुँ जात जात दिठ परै नाहिं ॥
पुनि आप दिखाई देत सोय । वा योगीकी गति यहै होय॥८०॥
यह शून्य ध्यान सम और नाहिं। उत्कृष्टं⁴ ध्यान सब ध्यान माहिं ॥
है शून्याकार जु ब्रह्म आप । दशहू दिश पूरण अति अमाप॥८१॥
यों करे ध्याम सो योगि होइ । तबलगि समाधि सु अखंड होइ ॥
पुनि यहै योगनिद्रा कहाय । सुनु शिष्य देउँ तोकों बताय ॥८२॥

समाधि वर्णन ॥ गीतक छंद॥

सुनु शिष्य अबाहिं समाधि लक्षण, मुक्ति योगी वर्त्तते ॥
तहँ सिद्ध साधक एक है, करि क्रिया कर्म निवर्त्तते ॥
निरुपाधि नित्य उपाधि रहित जु, यही निश्चय मानिये ॥
कछु भिन्नभाव रहै न कोई, सो समाधि बखानिये ॥ ८३ ॥
नहिं शीत उष्ण तृषा क्षुधा, मूर्च्छा न भ्रम आलस रहै ॥
नहिं जागरण नहिं स्वप्न सुषुपति, तत्त्वपद योगी लहै ॥
ज्यों नीरमहँ मिलि जाय लवण सु, एकमेकहिं जानिये ॥
कछु भिन्न भाव रहै न कोई, सो समाधि बखानिये ॥ ८४ ॥
नहिं हर्ष शोक न दुःख सुख, नहिं मान अरु अपमान यों ॥
पुनि मनोइंद्रिय वृत्ति नष्ट रु, ज्ञान नहिं अज्ञान यों ॥
नहिं जाति कुल नहिं वर्ण आश्रम, जीव ब्रह्म न जानिये ॥
कछु भिन्न भाव रहै न कोई, सो समाधि बखानिये ॥ ८५ ॥

---

१ चिकित्सा—अतिशय करके । २ चतुर । ४ उत्तम ।

नहिं शब्द परश रु रूप रस नहिं, गंध जानिय रंचहू ॥
नाहिं काल कर्म सुभाव है, नाहिं उदय अस्त प्रपंचहू ॥
जिमि क्षीर छिरमें आज्य घृतमें, जलहिमें जल जानिये ॥
कछु भिन्नभाव रहै न कोई, सो समाधि बखानिये ॥ ८६ ॥
नाहिं देव दैत पिशाच राक्षस, भूत प्रेत न संचरै ॥
नहिं पवन पानी अग्निको डरु, सर्प सिंहसो ना डरै ॥
नाहिं यंत्र मंत्र न शस्त्र लागहि, यह अवस्था मानिये ॥
कछु भिन्नभाव रहै न कोई, सो समाधि बखानिये ॥ ८७ ॥

दोहा छंद ॥

सुन्यो योग सिद्धांत ते, अष्ट अंग संयुक्त ॥
यों साधत ब्रह्महि मिलै, सोऊ कहिये मुक्त ॥ ८८ ॥

इति श्रीसुंदरदासविरचिते ज्ञानसमुद्रे अष्टांगयोग निरूपणं नाम तृतीयोल्लासः ॥ ३ ॥

अथ सांख्यनिरूपणार्थं नाम चतुर्थोल्लासः ॥ ४ ॥

शिष्यउवाच ॥ चौपाई छंद ॥

हे प्रभु बहुत कृपा तुम कीन्ही । ऐसी बुद्धि दयौ करि दीन्ही ॥
मोकों योगसिद्धांत सुनायो । जो पूछ्यों सो उत्तर पायो ॥ १ ॥
अब प्रभु सांख्य सु मोहिं सुनावहु। मेरे सब संदेहै मिटावहु ॥
यह गुरुदेव कृपा करि कहिये । तुम बिन अवर कहो कित लहियेर॥

---

१ किंचित । २ प्रकृति–आदत । ३ कृपा । ४ द्विविधा । ५ लेवें ।

श्रीगुरुरुवाच ॥ सोरठा छंद ॥

शिष्य कहों समुझाय, जो तैं पूछ्यो प्रीति करि ॥
सांख्य सु देउँ बताय, तो सुनिवेके योग है ॥ ३ ॥

सांख्यवर्णन ॥ दुमिला छंद ॥

सुनु शिष्य यहै मत सांख्यहिको जु, अनातम आतम भिन्न करै ॥
अन आतम है जड़रूप लिये, नित आतम चेतन भाव धरै ॥
अन आतम सूक्षम थूल सदा, पुनि आतम सूक्षम थूल परै ॥
तिनको निर्णय[1] अब तोहिं कहूँ, जिन, जानत संशय शोक हरै ॥४॥

कुंडलिया छंद ॥

प्रकृति पुरुषमय जगत[2] है, ब्रह्म कीट[3] पर्यंत[4] ।
चतुर्खानि लों जीव सब, शिव शक्ती वरतंत ॥
शिवशक्ती वरतंत, अंत दुहुँवनिको नाहीं ।
एक आहि चिद्रूप[5], एक जड़ दीसत छाहीं ॥
चैतन सदा अलिप्त[6] रहै, जड़ नित्य कुलूषं ।
शिष्य समुझि यह भेद भिन्न करि जानहु पुरुषं ॥ ५ ॥

शिष्यउवाच ॥ हंसाल छंद ॥

हे प्रभू कह्यो तुम पुरुष चैतन्यमय, बहुरि ऐसे कह्यो भिन्न जानो ॥
समुझिके प्रकृति जड़रूप करिके कही, जगत कैसे भयो सो बखानो॥६॥

श्रीगुरुरुवाच ॥ छप्पय छंद ॥

पुरुष प्रकृति संयोग, जगत उपजतहै ऐसे ।
रवि दर्पण[7] दृष्टांत अग्नि उपजतहै जैसे ॥
सोइ होय चैतन्य यथा चुंबकके संगा;
यथा पवन संयोग, उदधिमें उठैं तरंगा ॥

---

१ निचोड़ । २ संसार । ३ कीड़ा । ४ तक । ५ चिदाकालरूप । ६ अलग अलाहिदा । ७ दर्पण ।

पुनि यथा सूर[1] संयोगते, चक्षु[2] रूपको गहतु है ।
यों जड़ चैतन संयोगते, सृष्टि उपजाति कहतु है ॥ ७ ॥

शिष्यउवाच ॥ सवैया छंद ॥

हे प्रभु पुरुष प्रकृतिते प्रथमहिं, कौन तत्त्व उपज्यो समुझाई ॥
विधि करि तत्त्व अनुक्रमसों सब, ज्यों उपजे त्यों देहु बताई ॥
सूक्षम[3] थूल[4] भयो कैसे करि, कारण कारज मोहिं सुनाई ॥
तुम गुरुदेव सकल विधि जानत, अनआतम आतमा दिखाई ॥८॥

श्रीगुरुरुवाच ॥ दोहा छंद ॥

पुरुष प्रकृति संयोगते, प्रथम भयो महतत्त्व ॥
अहंकार ताते प्रगट, विविध रजोतम सत्त्व ॥ ९ ॥

चामर छंद ॥

तिहि तामसा हंकारते, दश तत्त्व उपजे आइ ॥
सो पंचविषय रु पंचभूतनि, कहों शिष समुझाइ ॥
जो शब्द स्पर्श रु रूप रस अरु, गंध विषय सुजानि॥
पुनि व्योम मारुत[5] तेज जल क्षिति[6], महा भूत बखानि१० ॥

चौपाई छंद ॥

यह दश तमगुणते तुम जानहु । दिव्य शक्ति याकी पहिचानहु ॥
अब इनके लक्षण समझाऊं । भिन्न भिन्न करि अर्थ बताऊं॥११॥

छप्पय छंद ॥

शब्द सु गुण आकाश एक गुण कहिये जामहिं ।
शब्द स्पर्श जु वाय उभय गुण लहिये तामहिं ॥
शब्द स्पर्श रु रूप तीनगुण पावक माहीं;
शब्द स्पर्श रस रूप चतुर्गुण अपमें आहीं ॥

---

१ श्री सूर्य्यनारायण । २ नेत्र–नयन–आँखे । ३ पतला–बारीक । ४ मोटा । ५ वायु–हवा । ६ पृथ्वी ।

पुनि शब्द स्पर्श रु रूप रस, पंचगुण अवनि[1] है ॥
शिष यह अनुक्रम ले जानि तू, सांख्य सुमति[2] ऐसे कहै ॥ १२॥

पंचतत्त्व स्वभाव ॥ चौपाया छंद ॥

यह कठिन[3] स्वभाव अवनिको कहिये, द्रावक उदकहिं[4] जानै ॥
पुनि उष्णों[5] स्वभाव[6] अग्निमाहि वरते, चलन पवन पहिचानै ॥
आकाश स्वभाव सुथिर काहियतु है, पुनि अवकाश दिखावै ॥
यह पंचतत्त्वके पंचस्वभाव है, सतगुरु बिना न पावै ॥ १३ ॥

राजसाहंकार ॥ चौपाया छंद ॥

अब राजसाहंकारते उपजी, दश इंद्रिय सु बताऊं ॥
अरु पंचवायु तिनके समीपही[7], यह न्यौरौ समुझाऊं ॥
अरु भिन्न[8] भिन्न है क्रिया सु तिनकी, भिन्न भिन्न है नामू ॥
सुनु शिष्य कहों नीके करि तोकों, ज्यों पावै विश्रामू ॥ १४ ॥

छप्पय छंद ॥

श्रवण त्वचा दृग घ्राण रु रस पुनि तिनके संगा ।
ज्ञान सु इंद्रिय पंच भई अप अपने रंगा ॥
वाणि पाणि अरु पाद उपस्थ रु गुदहू कहिये ।
कर्म सु इंद्रिय पंच भली विधि जाने रहिये ॥
पुनि प्राणापान समानहू, व्यानोदान सु वायु है ।
दश पंच रसोगुणते भये, सु क्रिया शक्तिको पाय है॥१५॥

सात्विकाहंकार ॥ गीतक छंद ॥

अब सात्विकाहंकारते मन, चित्त बुद्धि अहं भये ॥
पुनि इंद्रियनके अधिष्ठाता, देवता बहुविधि ठये ॥
दिगपाल मारुत अर्क अश्वनि, वरुण ज्ञान सु इंद्रियं ॥

---

१ पृथ्वी । २ सुंदर बुद्धिवाले । ३ दृढ़ । ४ पानी । ५ गर्म । ६ आदत । ७ निकट । ८ जुदा-जुदा ।

पुनि अग्नि इंद्र उपेंद्र मित्र सु, प्रजापति कर्मेंद्रियं ॥ १६ ॥

दोहा छंद ॥

शशि[1] विधि[2] अरु क्षेत्रज्ञ पुनि, रुद्र सहित पहिचानि ॥
भये चतुर्दश[3] देवता, ज्ञान शक्ति यह जानि ॥ १७ ॥
त्रिविध शक्ति है त्रिगुणमय, तम रज सत्त्व सु एह ॥
इनकरि पिंड स्थूल है, इनकरि सूक्षम देह ॥ १८ ॥
कारण देह सु तीसरो, सबको कारण मूल, ॥
वाहीते दोऊ भये, सूक्षम देह स्थूल ॥ १९ ॥

देह स्थूल वर्णन ॥ चौपाई छंद ॥

व्योम[4] वायु[5] पावक[6] जल धरनी, स्थूल देह इनहींकी बरनी ॥
एक तत्त्वमहँ पंच बताऊं, पंच पंच पचीस सुनाऊं ॥२० ॥
अँस्थि[7] अवनि त्वक उदकहि जानौ, मांस अग्नि नीके पहिचानौ ॥
नाड़ी वायु रोम आकाशं, पंचअंश पृथ्वी जु प्रकाशं॥२१॥
मेदसु अवनि मूत्र जल कहिये, रक्त अग्नि यह जाने रहिये ॥
शुक्र[8] सुवाय श्लेषम व्योमं, पंचअंश ए उदक समोमं ॥२२॥
क्षुत पृथ्वी तृट जलको अंशा, आलस अग्नि न आनहु संशा ॥
संगमं[9] वायु निंद नभ जानं, पंचअंश यह अग्नि प्रमानं॥२३॥
रोधक अवनि भ्रमन जलमाहीं, ऊरध गवन अग्नि महि आहीं ॥
अति निर्गवन[10] वायु पहिचानहु; उच्च स्थिति आकाशहि जानहु २४
भय पृथ्वी मोहादिक नीरं, क्रोध अग्नि पुनि काम समीरं ॥
लोभाकाश कहा समुझाये, पंचअंश यह नभके पाये ॥२५॥

अन्यभेद ॥ दोहा छंद ॥

गुदा कर्म इंद्रियन महि, नासा इंद्रिय ज्ञान;

---

१ चन्द्रमा । २ विधि । ३ चौदा । ४ आकाश-गगन । ५ हवा ।
६ अग्नि-कृशानु । ६ हाड । ८ वीर्य । ९ संधि । १० अचल ।

ए दोऊ भूते प्रकट, शिष्यलेहु पहिचान ॥ २६ ॥
चरण कर्म इंद्रियन महि, लोचन इंद्रिय ज्ञान ॥
ए दोऊ बसुते प्रकट, शिष्य लेहु पहिचान ॥ २७ ॥
उपस्थ कर्म इंद्रियन महँ, रसना इंद्रिय ज्ञान ॥
ए दोऊ जलते प्रकट, शिष्य लेहु पहिचान ॥ २८ ॥
पाणि[1] कर्म इंद्रियन माहि, त्वक इंद्रिय है ज्ञान ॥
ए दोऊ पवन[2]हिं प्रकट, शिष्य लेहु पहिचान ॥ २९ ॥
वचन कर्मइंद्रियनमें, श्रोत्र सु इंद्रिय ज्ञान॥
ए दोऊ नभ[3]ते प्रकट, शिष्य लेहु पहिचान ॥ ३० ॥

ज्ञानेंद्रिय त्रिपुटी ॥ दोहा छंद ॥

श्रोत्र सु अध्यातम प्रकट, श्रोतव्यं अधिभूत ॥
दिशा तत्र है देवता, यह त्रिपुटी यहि सूत ॥ ३१ ॥
त्वक अध्यातम जानि यह, सपरस है अधिभूत ॥
वायु तत्र है देवता, यह त्रिपुटी यहि सूत ॥ ३२ ॥
चक्षु अध्यातम जानि यह, द्रष्टव्यं अधिभूत ॥
सूर्य तत्र है देवता, यह त्रिपुटी यहि सूत ॥ ३३ ॥
घ्राण सु अध्यातम प्रकट, घ्राणव्यं अधिभूत ॥
अश्वनि तत्र है देवता, यह त्रिपुटी यहि सूत ॥ ३४ ॥
रसना अध्यातम प्रकट, रसग्रहणं अधिभूत ॥
बरुण तत्र है देवता, यह त्रिपुटी यहि सूत ॥ ३५ ॥

कर्मेंद्रिय त्रिपुटी ॥ दोहा छंद ॥

वचन सु अध्यातम प्रकट, वक्तव्यं अधिभूत ॥
अग्नि तत्र है देवता, यह त्रिपुटी यह सूत ॥ ३६ ॥

---

१ हाथ । २ वायु । ३ आकाश ।

पाणि सु अध्यातम प्रकट, दातव्यं[1] अधिभूत ॥
इंद्र तत्र है देवता, यह त्रिपुटी यह सूत ॥ ३७ ॥
चरण सु अध्यातम प्रकट, मंतव्यं[2] अधिभूत ॥
विष्णु तत्र है देवता, यह त्रिपुटी यह सूत ॥ ३८ ॥
उपस्थ सु आतम प्रकट, आनंदं अधिभूत ॥
प्रजापती तहँ देवता, यह त्रिपुटी यह सूत ॥ ३९ ॥
गुदा[3] सु अध्यातम प्रकट, मल त्यागं अधिभूत ॥
मित्र तत्र है देवता, यह त्रिपुटी यह सूत ॥ ४० ॥

अहंकार त्रिपुटी ॥ दोहा छंद ॥

मन अध्यातम जानिये, संकल्पं अधिभूत ॥
चंद्र तत्र है देवता, यह त्रिपुटी यह सूत ॥ ४१ ॥
बुद्धि सु अध्यातम प्रकट, बोद्धव्यं अधिभूत ॥
ब्रह्मा तत्र है देवता, यह त्रिपुटी यह सूत ॥ ४२ ॥
चित्त सु अध्यातम प्रकट चितवनि है अधिभूत ॥
वासुदेव है देवता, यह त्रिपुटी यह सूत ॥ ४३ ॥
अहंकार अध्यात्म है, अहंकृत्य अधिभूत ॥
रुद्र तत्र है देवता, यह त्रिपुटी यह सूत ॥ ४४ ॥

लिंग शरीर ॥ चौपाई छंद ॥

नवतत्त्वनिको लिंग पंचधा, शब्द स्पर्श रूप रस गंधा ॥
मन अरु बुद्धि चित्त अहंकारा, यह नवतत्त्व भेद निर्धारा॥ ४५ ॥

दोहा छंद ॥

पंद्रहतत्त्व स्थूल वपु, नवतत्त्वनिको लिंग ॥
इन चौवीसहु तत्त्वको, बहुविधिं कहो प्रसंग ॥ ४६ ॥

---

१ देनेयोग्य । २ मानना विचार । ३ कटि पश्चाद्भाग ।

चौपाया छंद ॥

शिष ए चौवीसतत्त्व जड़ जानहु, ताको क्षेत्र जु कहिये ॥
पुनि चेतन एक और पच्चीसहि, सांख्यहि मतसों लहिये ॥
सो है क्षेत्रज्ञ सबको प्रेरक[1]; पुनि साक्षी यह जानौ ॥
यह प्रकृति[2] पुरुष[3]को कियो निरणै, सतगुरु कहै सु मानौ ॥ ४७ ॥

जाग्रत अवस्था वर्णन ॥ चंपक छंद ॥

यह देह स्थूल विराटं । है पंचतत्त्वको घाटं ॥
नभ वायु तेज जल धरणी । पाछे बहु विधि करि वरनी ॥ ४८ ॥
जे शब्द स्पर्शहि रूपा । रस गंध मिलै तिन जूपा ॥
यह तन्मात्रीका[4] सहेता । जो पंचविषयको हेता ॥ ४९ ॥
अरु पांचो इंद्रिय ज्ञाना । श्रवणादि मिली विधि नाना ॥
पुनि कर्म सु इंद्रिय पंचा । वचनादि मिलि जु प्रपंचों ॥ ५० ॥
मन बुद्धि चित्त अहंकारा । यह अंतःकर्ण विचारा ॥
पुनि देव चतुर्दश जानौ । दश वायु मिली तिन मानौ ॥ ५१ ॥
है सत्त्व रज तम गुणमाहीं । ये भिन्न भिन्न बरताहीं ॥
पुनि कालहु कर्म स्वभावा । तब जीव स्वरूप दिखावा ॥ ५२ ॥
अरु काल उपाइ खपावै । यह कर्मसु आनि मिलावै ॥
तहँ सूत्रसु सुख दुख मानै । सो पाप पुण्यको ठानै ॥ ५३ ॥
है जीव सचेतन करता । जड़ सकल पदारथ धरता ॥
मिलि सबहिनको संघाता । यह जाग्रदवस्था ज्ञाता ॥ ५४ ॥
सो आहि विश्व अभिमानी । तहँ ब्रह्मादेव प्रमानी ॥
है राजस गुण अधिकारा । पुनि भोग स्थूल सब सारा[5] ॥ ५५ ॥
यह कहिये नयन स्थानं । वाणी वैखरिया[6] जानं ॥

---

१ प्रेरणा करानेवाले । २ माया । ३ ईश्वर । ४ इंद्रियोंका विषय । ५ संसार । ६ निद्रावस्थाकी वाणी ।

यह जाग्रतवस्था निर्णय। सुनु शिष्य स्वप्न अब वर्णय ॥ ५६॥

स्वप्नावस्था वर्णन ॥ चौपाया छंद ॥

दशवायु प्राण नागादिक कहिये, पंच सु इंद्रिय ज्ञानं ॥
पुनि पंच कर्मेन्द्रिय आही, तिनकी स्थिती बखानं ॥
अरु पंच विषय शब्दादिक[1] जानौ, अंतःकर्ण चतुष्टं[2] ॥
पुनि देव चतुर्दश है तिनमाहीं, सब इंद्रिय संतुष्टं ॥५७॥
यह कालहु कर्म स्वभाव सकल, मिलि लिंग शरीर कहावै ॥
शिष नाम हिरण्यगर्भ है ताको, तेजोमय तनु पावै ॥ ५८॥
अब स्वप्नअवस्था याको कहिये, सो तैजस अभिमानी॥
तहँ सतगुण विष्णू देव जानहु, भोग वासना ठानी ॥ ५९ ॥
सो कंठस्थान मध्यमा वाचा, जीवातमा समेता ॥
यह स्वप्नअवस्थाको है निरणय, समुझि देख यह हेता॥ ६० ॥

सषुप्त्यावस्था वर्णन ॥ छप्पय छंद ॥

सुषुपति कारण देह, तत्त्व सबही तहँ लीनं ।
लिंग शरीर न रहै, घोरनिद्रा वश कीनं ॥
प्राज्ञ पुनी अभिमान, अव्याकृत तमं[3] गुण रूपा ।
पुनि ईश्वर तहँ देव, भोग आनंदस्वरूपा ॥
पुनि पश्यंती वाणी गुपत, हृदय स्थानक जानिये ।
यह कहत अवस्था सुषुपति, शिष्य सत्य करि मानिये॥६१॥

तुरीयावस्था वर्णन ॥ चर्पट छंद ॥

तुरियावस्था चैतन तत्त्वं, स्वस्वरूप अभिमानीयत्त्वं ॥
परमानंद भोग इमि कहिये, सोहं देव तहाँ सो लहिये ॥६२॥
सर्वोपाधि[4] विवर्जित मुक्तं, त्रिगुणातीतं[5] साक्षी युक्तं ॥

---

१ शब्दरस–रूप–गंध–स्पर्श । २ चारो । ३ तमोगुण । ४ विकार-रहित । ५ तीनोगुणसे परे ।

मूर्द्धनि[1] स्थिती परा पुनि वाणी तुरियावस्था[2] निश्चय जानी ॥ ६३ ॥

इंदव छंद ॥

जाग्रत रूप लियो सब तत्त्वनि, इंद्रिय द्वार करै व्यवहारो ॥
स्वप्न शरीर भ्रमै[3] नवतत्त्वको, मानत है सुख दुःख अपारो ॥
लीन सबै गुण होय सुखोपति, जान्यो नहीं कछु घोर[4] अँध्यारो ॥
तिनको साक्षि[5] रहै तुरियातित, सुंदर सोई स्वरूप हमारो ॥ ६४ ॥

सोरठा छंद ॥

शिष्य तु ऐसे जानि, हे असंग साक्षी सदा ।
आपुहि चैतन मानि, अवर पदारथ जड़ सबै ॥ ६५ ॥

दोहा छंद ॥

यह शिष मैं तोसों कह्यों; सांख्यहुको सिद्धांत ।
जो तेरी शंका रह्यो, सो अब पूछ वृतांत ॥ ६६ ॥

इति श्रीसुंदरदासविरचिते ज्ञानसमुद्रे सांख्यनिरूपणं
नाम चतुर्थोल्लासः ॥ ४ ॥

अथ गुरुशिष्यसंवादे अद्वैतनिरूपणार्थं नाम पंचमोल्लासः ॥ ५ ॥

शिष्य उवाच ॥ चौपाई छंद ॥

हे स्वामी तुम ब्रह्म अनूपा । मैं करि जाने देह स्वरूपा ॥
यह मोते जु भयो अपराधा । क्षमा करौ मम मेटो बाधा ॥ १ ॥
मैं तो भयों कृतारथ तबहीं । तुमसे सतगुरु भेटे जबहीं ॥

---

१ माथपर । २ चौथीवस्था । ३ घूमै । ४ कठिन–विकराल । ५ साखी ।

वचन सुनाय कपाट¹ उघारे² । मेरे संशय सकल निवारे ॥ २ ॥
किंचित मात्र रही आशंका। सो यह तुमते जैहै पंका ॥
जे तुम तीन सिद्धांत बखाने । ते सब मैं नीके करि जाने ॥ ३ ॥
अब प्रभु तुरियातीत बतावहु। ता पाछे अद्वैत सुनावहु ॥
तुम बिनु अवर कहै नहिं कोई। तुमहीते तुमहीसों होई ॥ ४ ॥

श्रीगुरुरुवाच दोहा छंद ॥

साधु साधु शिष धन्य तू, भलो प्रश्न तैं कीन ॥
याको उत्तर अब कहों, द्वैत मिटै भ्रम लीन ॥ ३ ॥

चौपाई छंद ॥

श्रवण मनँन³ कीनो तैं नीको। निदिध्यास राख्यो तैं टीको ॥
अब साक्षात्कार तू होई। तब संदेह⁴ रहै नहिं कोई ॥ ३ ॥

दोहा छंद ॥

तुरिया साधन ब्रह्मको, अहंब्रह्म सो होय ॥
तुरियातीत अनुभव यहै, मैं तूँ रहै न कोय ॥ ७ ॥

इंदव छंद ॥

जाग्रत तो नहिं मेरेविषे पुनि, स्वप्न सु तो नहिं मेरेविषे है ॥
नाहिं सुषोपति मेरेविषे पुनि, विश्वहू तैजस प्राज्ञ पखे है ॥
मेरेविषे तुरिया नहिं दीसति, याहिते मेरो स्वरूप अखै है ॥
दूरिते दूरि परेते परे अति, सुंदर कोई न मोहिं लखै है ॥८॥

शिष्य उवाच ॥ दोहा छंद ॥

हे प्रभु दूरि परे कह्यो, उरे कह्यो अब ओर ॥
यह तो भ्रमँ भारी भयो, गुरु सु बतावहु ठोरँ⁵ ॥ ९ ॥

---

१ केवाड़। २ दूरकरे। ३ मनमें विचारना। ४ सन्देह। ५ स्थान-जगह।

श्रीगुरुरुवाच ॥ दोहा छंद ॥

उरे परे कछु वै नहीं, वस्तु रही भरपूर ॥
चतुरभाव तोसों कहों, तब भ्रम जैहै दूर ॥ १० ॥

शिष्य उवाच ॥ चौपाई छंद ॥

हे प्रभु चतुर्भाव समुझावहु । भिन्न भिन्न करि अर्थ बतावहु ॥
द्वैत मिटै सबही भ्रम छीजे । निः संदेह मोहिं अब कीजे ॥११॥

श्रीगुरुरुवाच ॥ चौपाया छंद ॥

शिष प्रागभाव सो प्रथमाहिं कहिये, नीकी विधि समुझाऊं ॥
पुनि अन्यो अन्याभाव दूसरो, सोऊ तोहिं सुनाऊं ॥
अरु सुनहु प्रध्वंसाभाव तीसरो, ताको कहों विचारा ॥
जब चतुर्भाव अत्यंतहि जाने, तब छूटै भ्रम लारा ॥ १२ ॥

चतुर अभाव वर्णन ॥ सवाया छंद ॥

मृतिकामाहिं अभाव घटनिको, प्रागभाव यह जाने रहिये ॥
ता मृतिकाके भाजन[३] बहुविध, अन्योअन्याभाव सु गहिये ॥
मृतिका मध्य लीनता सबकी, यह प्रध्वंसाभाव सु लहिये ॥
ना कछु भयो न अब कछु है, यह अत्यंताभाव जु कहिये ॥१३॥

प्रागभाव ॥ मनहर छंद ॥

पहिले जब कछु नाहिं होतो परपंच यह,
एकही अखंड ब्रह्म विश्वको अभाव है ॥
जैसे काठ पाहनको लंघ अति देखियत,
तिनमें तो नहिं कछु पूतरी बनाव है ॥
कंचनकी राशीते ज्यों कंचन विशेषियत,
ताके मध्य नहीं कछु भूषण प्रभाव है ॥

---

१ पूर्ण । २ अलग । ३ पात्र-कुम्भ । ४ जगत्-संसार । ५ पर्वत-पहाड़ ।

जैसे नभ[1] माहिं कछु बादर न देखियत,
सुंदर कहत शिष्य यही प्रागभाव है ॥ १४ ॥

अन्योन्याभाव ॥ सवाया छंद ॥

एक भूमिके भाजन बहु विधि, कूंडा करवा हँडिया माट ॥
चपनी ढकनी सरवा गगरी, कलशे[2] कहाली नाना घाट ॥
तीहि नाम रूप गुण न्यारे न्यारे[3], पुनि व्यवहार भिन्नही ठाटे[4] ॥
सुंदर कहत शिष्य सुनु ऐसे, अन्योअन्याभाव विराट[5] ॥ १५ ॥

मनहर छंद ॥

एक भूमि[6]को विकार कँचन[7] कहावत है,
ताहूके विविध भांति भूषण अनंतु है ॥
मुद्रिका[8] कंकण कंठमाला शीशफूल पुनि,
कुंडल बलयँ[9] क्षुद्रघंटिका[11] गनंतु है ॥
नाम गुण रूप व्यवहार सब भिन्न भिन्न,
अंगअंग आपनीही ठोरले ठनंतु है ॥
ऐसे भाँति शिष्य सुनु सुंदर कहत तोहिं,
विदुषहिं अन्योअन्याभाव यों भनंतु है ॥ १६ ॥

चौपाया छंद ॥

एक भूमिको ताम्र विकारा, ताके पात्र कहावहिं ॥
पुनि चरवी चरवा तष्टी तवला, ऊरी लोटा गावहिं ॥
तिहि नाम रूप गुण भिन्न भिन्नही, दीसत विविधप्रकारा ॥
यह अन्योअन्याभाव सुनु शिष, बहुत भाँति विस्तारा ॥ १७ ॥

कुंडलिया छंद ॥

लोहा प्रत्यछ देखिये, सोऊ भूमि विकार ।

---

१ आकाश । २ घट, घड़ा, गगरी । ३ अलग अलग । ४ साज । ५ वृहत् बडा । ६ पृथ्वी । ७ सोना । ८ अँगूठी । ९ बाला । १० कड़ा-हाथका । ११ कर्धनी ।

विविध भाँति ताके भये, जगतमाहिं हथियार ॥
जगतमाहिं हथियार गुरज[१] समसेर[२] कटारी ।
बरछी बुगदा भाली कतरनी छरी सवाँरी ॥
नाम रूप गुण भिन्न जहाँ जैसो तहँ सोहा ।
अन्योअन्याभाव शिष्य सुनु एकहि लोहा ॥

छप्पय छंद ॥

इक भूमि विकार कपास भयो नाना विधि दरसै ।
खासा मलमल सहन सितारी उपजै सरसै ॥
सीरी साफ बाफता अधोतर भैरव कहिये ।
परकारा अरु गजा गनत कहु अंत न लहिये ॥
सुनु शिष्य कहाँलों वरणिये, अंत नहीं निशिदिन कहै ।
यह अन्यो अन्याभावते, कारण कारज सुनि लहै ॥ १९ ॥

गीतक छंद ॥

पुनि एक भूमि विकार तरु[३], विस्तार बहुविधि देखिये ॥
जर मूर शाखा[४] पत्र[५] पुष्प[६] रु, फल अनेकनि पेखिये ॥
तिहि नाम रूप गुण भिन्न भिन्नहि, बहुत भाँति बखानिये ॥
यह भाव अन्योअन्य कहिये, शिष्य सत करि मानिये ॥ २० ॥

छप्पय छंद ॥

जल विकार अब सुनहु फेन बुदबुदा[७] तरंगा[८] ।
ओला पाला जानि सुतौ जलहीको अंगा ॥
अग्नि विकार मसाल, चिरागहु दीपक जोवै ।
वायु विकार सुजानि बीघुरा आँधी[९] होवै ॥
आकाश विकार सु अभ्र है सो नानाविधि देखिये,

---

१ गदा । २ तलवार । ३ वृक्ष । ४ डाली । ५ पाती । ६ फूल । ७ बुलबुला । ८ लहर । ९ तूफान ।

अन्योअन्याभाव शिष्य सुनु पंचतत्त्व यह पेखिये ॥२१॥

दोहा छंद ॥

एकब्रह्म कारण जगत, कारज है बहु भाँति ॥
चतुर्खानि विस्तार यह, लखचौरासी जाति ॥ २२ ॥

प्रध्वंसाभाव ॥ चौपाया छंद ॥

यह भूमि विकार भूमिमें लीनं, जल विकार जलमाहीं ॥
तेज विकार तेज मिलि, जैहै वायू वायु मिलाहीं ॥
आकाश विकार मिले आकाशहि, कारण रहै निदानं ॥
यह प्रध्वंसाभाव सुनु शिष, जो है सो ठहरानं ॥ २३ ॥

दोहा छंद ॥

जो जाते कारज भयो, सो ताहीमें छीन ॥
ऐसेही यह जगत सब, होइ ब्रह्ममें लीन ॥ २४ ॥

अत्यंताभाव वर्णन ॥ मनहर छंद ॥

इच्छाही न प्रकृति न, महत्तत्त्व अहंकार;
त्रिगुण न व्योम आदि, सबदादि कोय है ॥
श्रवणादि वचनादि, देवता न मन आदि;
सूक्षम न थूल पुनि, एकही न दोय है ॥
स्वेदज न अंडज जरायुज न उद्भिज;
न पशुहि न पंखिहि, न पुरुष न जोय है ॥
सुंदर कहत ब्रह्म, ज्योंको त्योंहि देखियत;
न तौ कछुभयो अब, है न कछू होय है ॥ २५ ॥

छप्पय छंद ॥

कहत शशाके शृंग झाँकि किनहूं नहिं देखे।

---

१ माया, स्वभाव, आदत, खसलत । २ घमंड-मद । ३ खगोश खरहा ।

बहुरि कुंसुम[1] आकाश, सु तो काहू नहिं पेखे[2] ॥
त्योंहीं बंझापूत, पीधुरे[3] झुलत न कहिये ।
मृगजल माहीं नीरं[4] कहूं, ढूंढत नहिं लहिये ॥
रज्जु[5]माहिं नहिं सर्प कालत्रय सुक्ति रजतसी लगत है ।
शिष यह अत्यंता भाव सुनु, ऐसेही सब जगत है ॥

पद्धरी छंद ॥

शिष यही अत्यंताभाव होइ । नहिं उत्पत्ति प्रलय न स्थिती कोइ ॥
नहिं आदि अंत नहिं मध्यभाव । नहिं सृष्टा सृष्टिनको उपाव ॥२७॥
नहिं कारण कारज है उपाधि । नहिं ईश्वर जीव परै समाधि ॥
नहिं तत्त्व अतत्त्व विभाग भिन्न । नहिं जोति अजोति कछू न चिह्न॥२८॥
नहिं काल न कर्म सुभाव आहि । नहिं विद्या अविद्या लगी ताहि ॥
नहिं राग वैराग न बंध मुक्त । नहिं रूप अरूप अयुक्त युक्त॥२९॥
नहिं आहिं प्रमाताको प्रमान । नहिं है प्रमेय नहिं प्रमा जान ॥
नहिं लय विछेप नहिं निकट दूर । नहिं दिवस न रजनी चंद सूर॥३०॥
नहिं शुक्ल न कृष्ण न रक्त पीत । नहि ह्रस्व[6] न दीर्घ[7] न घाम शीत ॥
नहिं अर्थ न धर्म न काम मोक्ष । नहिं पाप पुण्य अपरोक्ष प्रोक्ष ॥३१॥
नहिं स्वर्गादिक नहिं नर्कवास । नहिं त्रासक कोइ न होय त्रास ॥
नहिं वेद न शास्त्र न शब्दजाल । नहिं वर्ण अवर्ण न स्मृतिकि चाल ३२
नहिं संध्या सूत्र न करन्यास । नहिं होम न यज्ञ न व्रत उपास ॥
नहिं इष्ट उपासन हार कोइ । नहिं निर्गुण सगुण भेद दोइ॥ ३३ ॥
नहिं सेव्य न सेवक सेवकी न । नहिं हेतु प्रीति नहिं प्रेम लीन ॥
नहिं नवधा दशधा पराभक्ति । नहिं सालोक्यादिक चारि मुक्ति ॥३४॥
नहिं कर्त्ता कर्म क्रिया न कोइ । नहिं द्रष्टा दर्शन दृश्य होइ ॥

---

१ फूल । २ देखै । ३ हिंडोल । ४ पानी । ५ जेवरी । ६ छोटा । ७ बड़ा ।

नहिं साधक साधन साध्य सार। नाहिं सिद्ध असिद्ध न निर्विकार[1]॥३५॥
नहिं व्यक्त[2] अव्यक्त[3] अशुद्ध शुद्ध। नाहिं रक्त[4] विरक्त[5] अबुद्ध बुद्ध॥
नहिं शून्य अशून्य अथीर थीर। नहिं तर्क वितर्क अधीर धीर॥३६॥
नाहिं चिंत्य अचिंत्य अडोल डोल। नहिं माप अमाप अतोल तोल॥
नहिं कृश[6] स्थूल[7] नहिं युवा बाल। नहिं जरा मृत्यु न अकाल काल॥३७॥
नहिं जाग्रत स्वप्न सुषोपतिश्च। नाहिं तुरिया साक्षी त्रय मतिश्च॥
नहिं ज्ञेय ज्ञाता नहिं ज्ञान गम्य। नहिं ध्येय ध्याता नहिं ध्यान रम्य ३८

दोहा छंद॥

जो कछु सुनिये देखिये, बुद्धि विचारै जाहि॥
सो सब वाक्य विलास है, भ्रम करि जानै आहि॥ ३९॥
यहै अत्यंताभाव है, यहै जु तुरियातीत॥
यह अनुभव साक्षात है, यह निश्चै अद्वीत॥ ४०॥
नाहिं नाहिं करि करि कह्यो, है है कह्यो बखानि॥
नाहीं है के मध्य है, सो अनुभवकरि जानि॥ ४१॥
यहही है पर यह नहीं, नाहीं है है नाहिं॥
यहै यहै जानितुं यह, अनुभव है या माहिं॥ ४२॥
अब कछु कहिबेको नहीं, कहैं कहाँलों वैन॥
अनुभवही करि जानिये, यह गुंगेकी सैन॥ ४३॥
जो तेरे संदेह कछु, रह्यो रंच जू होहि॥
तो शिष अजहूं प्रश्न करु, फिरि समुझाऊं तोहि॥ ४४॥

शिष्य उवाच॥ चौपाई छंद॥

हे स्वामी संशय सब भाग्यो। वचन तुम्हारे सोवत जाग्यो॥
अब तो सर्व स्वप्न करि जान्यो। निश्चय मम संदेह बिलान्यो४५॥

---

१ विकार रहित। २ व्यापक। ३ अव्यापक। ४ लवलीन। ५ विहीन। ६ दुबला। ७ मोटा।

चर्पट छंद ॥

कोहं[1] केत्वं[2] कचं[3] संसारं । कच परमारथ कच व्यवहारं ॥
कच मे जन्मं कच मे मरणं । कच मे देहं कच मे करणं॥४६॥
कच मे अद्वय कच मे द्वीतं । कच मे निर्भय कच मे भीतं[4] ॥
कच माया कच ब्रह्म विचारं । कच मे प्रवृति निवृत्ति विकारं॥४७॥
कच मे ज्ञानं कच विज्ञानं । कच निर्विष कच मे विष जानं ॥
कच मे तृष्णा वैतृष्णयत्वं । कच मे तत्त्वं कच निःतत्त्वं॥४८॥
कच मे शिष्या कच मे दीक्षा । कच मे आस्तिक नास्तिक पक्षा॥
कच मे कालं कच मे देशा । कच मे गुरु शिष कच उपदेशा४९॥
कच मे ग्रहणं कच मे त्यागं । कच मे विरती कच वैरागं ॥
कच मे चपलं कच मे खेदं । कच मे द्वंद्वं कच निर्द्वंदं ॥५०॥
कच मे वाह्याभ्यंतरभासं । कच अध ऊर्ध्वं मध्य प्रकासं ॥
कच मे नाड़ी साधन योगं । कच मे लक्ष विलक्ष वियोगं ५१॥
कच नानात्वं कच एकत्वं । कच में शून्याशून्य समत्वं ॥
जो अवशेषं सो मम रूपं । बहुना किं उक्तं च अनूपं ॥ ५२ ॥

दोहा छंद ॥

यह मैं श्रीगुरुदेवको, अनुभव कह्यों सुनाय ॥
जो प्रभुको परिश्रम कियो, सोफल प्रकट्यो आय ॥५३॥

श्रीगुरुरुवाच ॥ चौपाई छंद ॥

हे शिष जो इच्छा करु सोई । तोहिं न कितहू बाधा होई ॥
तू निर्धूम भयो निर्दोषा । तू अब पायो जीवन मोषा॥५४॥
जो मैं कह्यों सु हिदैं आन्यो । ताहि कर्मते ब्रह्महि जान्यो ॥
आप ब्रह्म जग भेद मिटायो । ज्यों है ज्योंही निश्चय आयो ५५॥

---

१ कोमैंहूं । २ कोतुमहो । ३ यह संसार क्याहै । ४ डर ।

देखे सुने रु पर्सत बोलै । सूंघत क्रिया कबहुँ करि डोलै ॥
खान पान वस्त्रादिक जोई । यह प्रारब्ध देहको तोई ॥ ५६ ॥

दोहा छंद ॥

निरालंब निर्वासना, इच्छाचारी येह ॥
संस्कार पवनसों फिरै, शुष्क पर्ण ज्यों देह ॥ ५७ ॥
जीवनमुक्त संदेहसो, लिप्त न कबहूँ होइ ॥
ताको सोई जानि ले, तुम समान जे कोइ ॥ ५८ ॥
जो यह ज्ञानसमुद्रमें, बुड़की मारै आय ॥
सोई मुक्ताफल लहै, दुख दरिद्र सब जाय ॥ ५९ ॥
सुंदर ज्ञानसमुद्रको, महिमा कहिये कौन ॥
अमृतरस सों है भरचो, तुम जनि जानो लौन ॥ ६० ॥
सुंदर ज्ञानसमुद्र महँ, बहुत रत्न अनमोल ॥
मृतक होयसो पैठि है, पैठि न सकही लोल ॥ ६१ ॥
सुंदर ज्ञानसमुद्रको, पारावार न अंत ॥
विषयी भाजै झिझकिकै, पैठे कोई संत ॥ ६२ ॥
सुंदर ज्ञानसमुद्रके, जो चलि आवै तीर ॥
देखतही सुख ऊपजे, निर्मल जल गंभीर ॥ ६३ ॥
यह तो ज्ञानसमुद्र है, यह गुरु शिष्य सँवाद ॥
सुंदर जोइ कहै सुनै, ताके मिटहिंविषाद ॥ ६४ ॥
संवत सत्रहसौ गये, वर्ष दशोत्तर और ॥
भादों शुदि एकादशी, गुरुवासर शिरमौर ॥ ६५ ॥
ता दिन संपूरण भयो, ज्ञानसमुद्र सु ग्रंथ ॥
सुंदर अवगाहन करै, लहै मुक्तिको पंथ ॥ ६६ ॥

इति श्रीसुंदरदासविरचिते ज्ञानसमुद्रे गुरुशिष्यसंवादे अद्वैत-
निरूपणं नाम पंचमोल्लासः ॥ ५ ॥

समाप्तोयं ज्ञानसमुद्रः ॥

श्री सुंदरदासकृत ॥

ज्ञानविलास ॥

प्रारभ्यते ॥

गुरुदेव अंग ॥ दोहा ॥

सुंदर सतगुरु वंदिये, सोई वंदन योग ॥
औषध शब्द पिवाइ करि, दूर कियो सब रोग ॥ १ ॥
सुंदर सतगुरु पलकमें, दूर करत अज्ञान ॥
मन वच क्रमजिज्ञासु है, शब्द सुने जो कान ॥ २ ॥
वेद माहँ बहु भेद हैं, जाने बिरला कोइ ॥
सुंदर सो सतगुरु बिना, निरवारो नहिं होइ ॥ ३ ॥
परमातम सो आतमा, जुदे रहे बहुकाल ॥
सुंदर मेला कर दियो, सतगुरु मिले दलाल ॥४॥
सतगुरु शुद्ध स्वरूप है, शिष्य देखि गुरुदेह ॥
सुंदर कारज क्यों सरे, कैसे बढ़े सनेह ॥ ५ ॥

स्मरण अंग ॥ दोहा ॥

सुंदर सतगुरु यों कह्यो, सकल शिरोमणि नाम ॥
ताको निशिदिन सुमिरिये, सुखसागर सुखधाम ॥ १ ॥
रंक हाथ हीरा चढ़्यो, ताको मोल अमोल ॥
घर घर जो लै बेंचते, सुंदर याही मोल ॥ २ ॥
राम नाम जाके हिये, ताहि नवैं सब कोइ ॥
ज्यों राजाकी शंकते, सुंदर अति डर होइ ॥ ३ ॥

साधु अंग ॥ दोहा ॥

संत समागम कीजिये, तजिये और उपाइ ॥
सुंदर बहुतहिं उद्धरै, सतसंगतमें आइ ॥ १ ॥
सुरता जो हरि मिलनकी, तो करिये सतसंग ॥
बिना परिश्रम पाइये, अविगत देव अभंग ॥ २ ॥
संत मुक्तिके पौरियाँ, तिनसों करिये प्यार ॥
कूंची उनके हाथ है, सुंदर खोलहिं द्वार ॥ ३ ॥
सुंदर साधु दयालु है, कहै ज्ञान समुझाय ॥
पात्र बिना नहिं ठौर है, शब्द निकरि बहिजाय ॥ ४ ॥
संतनके यह वणिज है, निशिदिन ज्ञान विचार ॥
ग्राहक आवे लेनको, ताहीके दातार ॥ ५ ॥

देहात्मा विछोह अंग ॥ दोहा ॥

देह सुरंगी तब लगे, जबलगि प्राण समीप ॥
जीव ज्योति जाती रही, सुंदर बदरँग दीप ॥ १ ॥
सुंदर देह परी रही, निकसि गये जब प्रान ॥
सब कोऊ यों कहत हैं, अब ले जाहु मशानें ॥ २ ॥
सुंदर लोकें कुटुंब सब, रहते सदा हुजूर ॥
प्राण गए लागे कहन, काढ़ो घरते दूर ॥ ३ ॥
चेतनते चेतन भई, अतिगति शोभित देह ॥
सुंदर चेतन निकसते, भई खेहकी खेह ॥ ४ ॥

उपदेश चिंतवन अंग ॥ दोहा ॥

सुंदर मानुष देहकी, महिमा वरणैं साध ॥
जामें पैये परमगुरु, अविगत देव अगाध ॥ १ ॥

---

१ मिलाप–मिलना । २ मुक्तहोना–छूटना । ३ मिहनत । ४ द्वारपाल दरवान । ५ मरघट । ६ संसार ।

सुंदर मानुष देहकी, महिमा कहिये काहि ॥
जाको बंछें[1] देवता, तूं क्यों खोवे ताहि ॥ २ ॥
सुंदर साँची कहत हों, मति आने कछु रोष ॥
जो तैं खोयो रतन यह, तो तोहीको दोष ॥ ३ ॥
बेर बेर नहिं पाइये, सुंदर मानुष देह ॥
राम भजन सेवा सुकृत[2], यह सौदा करि लेह ॥ ४ ॥
सुंदर मानुष देह यह, तामें दोइ प्रकार ॥
याते बूडे जगतमहँ, याते उतरे पार ॥ ५ ॥

कालचिंतवन अंग ॥ दोहा ॥

काल ग्रसंतहै[3] बावरे, चेतत क्यों न अजान ॥
सुंदर काया कोटमें[4], क्यों न हुओ सुलतान ॥ १ ॥
सुंदर काल महाबली, मारे मोटे मीर ॥
तू हैं कौनकि गिनतिमें, चेतत काहे न वीर ॥ २ ॥
मेरे मंदिर माल धन, मेरो सकल कुटुंब ॥
सुंदर ज्योंको त्यों रह्यो, सत्तलोक आडंब ॥ ३ ॥

सोरठा ॥

शिव जु डरचो कैलाश, विष्णु डरचो वैकुंठमें ॥
सुंदर मानी त्राश, इंद्र डरचो अमरावती[5] ॥ ४ ॥

दोहा ॥

काल दियो जब वंधही, देवलोक सब देव ॥
सुंदर डरचो कुबेर पुनि, देखि सबनको छेव[6] ॥ ५ ॥
एक रहे कर्त्ता पुरुष, महा कालको काल ॥
सुंदर वह विनशै नहीं, जाको यह सब ख्याल ॥ ६ ॥

---

१ इच्छा । २ पुण्य–सुकर्म । ३ पकड़त । ४ क़िला । ५ देवपुरी । ६ अन्त नाश ।

तृष्णाको अंग ॥ दोहा ॥

पलपल छीजे देह यह, घटत घटत घटि जाइ ॥
सुंदर तृष्णा ना घटै, दिन दिन नौतन[1] भाइ ॥ १ ॥
नित नित डोले ताकती, स्वर्ग मृत्यु पाताल ॥
सुंदर तीनों लोकते, भरयो न एको गाल ॥ २ ॥
सुंदर तृष्णा करत है, सबको बाँधि गुलाम ॥
हुकम करे त्योंहीं चले, गिनत शीत नाहिं घाम ॥ ३ ॥
सुंदर तृष्णाके लिये, पराधीन ह्वै जाइ ॥
दुःसह वचनानिको सहे, जो परहाथ विकाइ ॥ ४ ॥

देहमलीनको अंग ॥ दोहा ॥

सुंदर देह मैलीन[2] अति, बुरी वस्तुको भौन ॥
हाड़ मांसको कोथैरा[3], भली कहे तिहि कौन ॥ १ ॥
सुंदर पंजर हाड़को, चाम लपेटयो ताहि ॥
तामें बैठयो फूलिके, मो समान को आहि ॥ २ ॥
सुंदर न्हावे बहुतही, बहुत करै आचार ॥
देहमाहिं देखे नहीं, भरयो नरक भंडार ॥ ३ ॥

आधीन उराहनेको अंग ॥ दोहा ॥

देह रच्यो प्रभु भजनको, सुंदर नख शिख साज ॥
एक हमारी बात सुनि, पेट दियो किहि काज ॥ १ ॥
श्रवण दिये यश सुननको, नैन देखने संत ॥
सुंदर शोभित नासिका, मुख शोभनको दंत ॥ २ ॥
और ठौर मन काढ़िके, करी है तुम्हरी भेट ॥
सुंदर क्योंकरि छूटिये, पाप लगायो पेट ॥ ३ ॥

---

१ नवीन । २ मैली–द्वेष–ईर्षा–कपट मल मूत्रका भवन । ३ थेली ।

कूप भरे वापी भरे, पूरि भरे जलताल ॥
सुंदर पेट न क्यों भरे, कौन बनायो ख्याल ॥ ४ ॥
सुंदर प्रभुजी पेटकी, चिंता दिन अरु रात ॥
साँझ खाइ करि सोइये, बहुरि लगे परभात ॥ ५ ॥

विश्वासको अंग ॥ दोहा ॥

सुंदर तेरे पेटकी, तोको चिंता कौन ॥
विश्व भरन भगवंत है, पकरि बैठ तू मौन ॥ १ ॥
सुंदर चिंता मत्ति करे, पाँउ पसारे सोइ ॥
पेट कियो है जिन प्रभू, ताको चिंता होइ ॥ २ ॥
जलचर थलचर व्योमचर, सबको देत अहार ॥
सुंदर चिंता जनि करे, निशिदिन बारंबार ॥ ३ ॥
सुंदर प्रभुजी देतहैं, पाहनमें पहुँचाइ ॥
तू अब क्यों भूखो रहै, काहेको बिललाइ ॥ ४ ॥

दुष्टको अंग ॥ दोहा ॥

घर खोवत है आपुनो, औरनहू को जाइ ॥
सुंदर दुष्ट स्वभाव यह, दोऊ देत बहाइ ॥ १ ॥
दुर्जन संग न कीजिये, सहिये दुःख अनेक ॥
सुंदर सब संसारमें, दुष्ट समान न एक ॥ २ ॥
गर्जै मारे तो नाहिं दुख, सिंह करै तनु भंग ॥
सुंदर ऐसो दुख नहीं, जैसो दुर्जन संग ॥ ३ ॥
सुंदर दुर्जन सारिखा, दुखदायक नहिं और ॥
स्वर्ग मृत्यु पाताल हम, देखे सबै ढँढोर ॥ ४ ॥
सुंदर दुर्जनको वचन, दुःसह सह्यो न जाइ ॥

---

१ बावली । २ व्याकुल । ३ कुंजर-हाथी । ४ नाश । ५ ढूंढि । ६ सहने योग्य नहीं ।

सहैं सु बिरले संत जन, जिनके राम सहाइ ॥ ५ ॥

मनको अंग ॥ दोहा ॥

मनको राखत हटक[2] करि, सटकि चहूं दिशि जाइ ॥
सुंदर लटकुर लालची, गटकि विषयफल खाइ ॥ १ ॥
पलहीमें मरि जात मन, पलमें जीवत सोइ ॥
सुंदर परिगो मुरछिके, बहुरि सजीवन होइ ॥ २ ॥
साधत साधत दिन गये, करहि औरकी और ॥
सुंदर एक विचार बिनु, मन नहिं पावै ठौर ॥ ३ ॥
सुंदर यह मन रंक है, कबहुँ होइ मन राव ॥
कबहूँ टेढ़ो ह्वै चलै, कबहूँ सूधे पाव ॥ ४ ॥
पाप पुण्य मैंने किये, स्वर्ग नरक हों जाउँ ॥
सुंदर सब कछु मानिले, याहीते मन नाउँ ॥ ५ ॥
मनको साधन एक है, निशिदिन ब्रह्मविचार ॥
सुंदर ब्रह्म विचारते, ब्रह्म होत नहिं वार ॥ ६ ॥
देहरूप मन ह्वै गयो, कियो देह अभिमान ॥
सुंदर समुझे आपको, आपु होय भगवान ॥ ७ ॥

शूरातनको अंग ॥ दोहा ॥

सुंदर सोई शूरमा, लोट पोट ह्वै जाइ ॥
ओट कछू राखे नहीं, चोट मूंह पर खाइ ॥ १ ॥
सुंदर शील सनाह करि, तोष दियो शिर टोप ॥
ज्ञान खड्ग पुनि हाथ करि, कियो जु मनपर कोप ॥ २ ॥
मारे सब संग्राम करि, पिशुन हुते घट माहिं ॥
सुंदर कोई शूरमा, साधु बराबर नाहिं ॥ ३ ॥

---

१ कोई एक। २ रोक। ३ चला। ४ लड़ाई। ५ चोर।

सुंदर निशदिन साधुके, मन मारन की मूठ ॥
मनके आगे भाजिके, कबहुँ न देवैं पूंठ ॥ ४ ॥

वचन विवेक को अंग ॥ दोहा ॥

सुंदर तबहीं बोलिये, समुझि हियेमें[2] पैठि ॥
कहिये बात विवेक[3] की, नहिं तर चुप ह्वै बैठि॥ १ ॥
सुंदर मौन गहे रहै, जानि सकै नाहिं कोइ॥
बिन बोले गरुवा रहे, बोले हरुआ होइ ॥ २ ॥
सुंदर वेही बोलिये, जा बोलेमें ढंग ॥
नातर पशु बोलत सदा, कौन स्वाद रस रंग ॥ ३ ॥
सुंदर वचन कुवचनमें, रात दिवस[4] को फेर ॥
सुवचन सदा प्रकाशमय, कुवचन सदा अँधेर ॥ ४ ॥
जा वाणीमें पाइये, भक्ति ज्ञान वैराग ॥
सुंदर ताको आदरै, और सकलको त्याग ॥ ५ ॥

निजभाव को अंग ॥ दोहा ॥

सुंदर अपनो भावहै, जो कछु दीसै[5] आन ॥
बुद्धि योग विभ्रम भयो, दोउ ज्ञान अज्ञान ॥ १ ॥
अपनी छाया देखिके, कूकर जाने आन ॥
सुंदर अतिहीं जोर करि भूंकि, मरत है श्वान ॥ २ ॥
सिंह कूपमें आयके, देखै अपनी छाहँ ॥
सुंदर जान्यो दूसरो, बूड़ि मरचो तामहिँ ॥ ३ ॥
फटिक शिलासों आयके, कुंजर तोरे दंत ॥
आगे देखे और गज, सुंदर आगि अनंत ॥ ४ ॥
सुंदर याको ऊपजे, काम कोध अरु मोह॥

---

१ भाग । २ हृदय । ३ ज्ञान । ४ दिन । ५ दीखै ।

याहीको है मित्रता, याहीको है द्रोह ॥ ५ ॥

स्वरूप विस्मरणको अंग ॥ दोहा ॥

सुंदर भूल्यो आपुको, खोइ आपनी ठौर ॥
देहमाहिं मिलि देहसों, भयो औरको और ॥ १ ॥
ज्यों मणि काहू कंठमें, ढूँढत पावैं नाहिं ॥
पूँछत डोलत औरको, सुंदर आपहि माहिं ॥ २ ॥
सुंदर चेतन आप यह, चालत जड़की चाल ॥
ज्यों लकड़ीके अश्व¹ चढ़ि, कूदत डोलत बाल॥ ३ ॥
भूतनि माहीं मिल रह्यो, ताते होतहि भूत ॥
सुंदर भूल्यो आपुको, उरझानो मन सूत ॥ ४ ॥

सांख्यको अंग ॥ दोहा ॥

सुंदर सांख्य विचारि करि, समुझे अपनो रूप ॥
नहिं तो जड़के संगते, बूड़त है भ्रमकूप ॥ १ ॥
मायाके गुण जड़ सबै, आतम चैतन जानि ॥
सुंदर सांख्य विचारिकरि, भिन्न भिन्न पहिचानि॥ २ ॥
पंचतत्त्वकी देह जड़, सबगुण मिलि चौवीस ॥
सुंदर चैतन आतमा, ताहि मिले पच्चीस ॥ ३ ॥
देहरूपही ह्वै रह्यो, देह आपको मानि ॥
ताहीते यह जीव है, सुंदर कहत बखानि ॥ ४ ॥
देह भिन्न हो भिन्न हो, जब यह करे विवेक ॥
सुंदर जीव न पाइये, होइ एकको एक ॥ ५ ॥
क्षीण सुपुष्ट शरीर है, शीतं² उष्ण तिहिं लार ॥
सुंदर जन्म जरा लगै, ए षट देह विकार ॥ ६ ॥

---

१ घोड़ा । २ जाड़ा । ३ गर्भ ।

क्षुधा तृषा गुण प्राणके, शोक मोह मन होइ ॥
सुंदर साखी आतमा, जाने बिरला कोइ ॥ ७ ॥
जाकी सत्ता पाइ करि, सब गुण ह्वै चैतन्य ॥
सुंदर सोई आतमा, तुम जनि जानो अन्य ॥ ८ ॥

विचार को अंग ॥ दोहा ॥

सुंदर साधन सब किये, उपज्यो हिये विचार ॥
श्रवण मनन निदध्यास पुनि, याही साधन सार ॥ १ ॥
सुंदर यह साधन विना, दूजो नहीं उपाइ ॥
निशिदिन ब्रह्म विचारते, जीव ब्रह्म ह्वै जाइ ॥ २ ॥
दधि मथि घृतको काढ़िके, देत तक्रमे डारि ॥
सुंदर बहुरि मिले नहीं, ऐसे लेहु विचारि ॥ ३ ॥
सुंदर ब्रह्मविचार है, सब साधनको मूल ॥
याहीमें आये सकल, डार पात फल फूल ॥ ४ ॥
सूतो जीव नरेश यह, सुख शय्या पर आइ ॥
बढ़ी अविद्या नींदमें, सुंदर अति सुख पाइ ॥ ५ ॥
आयो कर्म खवास चलि, नृपति जगावन हेत ॥
सुंदर दानी फूट परि, अतिगति भयो अचेत ॥ ६ ॥
देखे भक्ति प्रधान जब, राजा जाग्यो नाहिं ॥
सुंदर शंका करि नहीं, पकरि झझेरी बाहिं ॥ ७ ॥
तब उठिकरि बैठो भयो, बहुरि जँभाई खात ॥
सुंदर कियो विचार जब, तब जाग्यो साक्षात ॥ ८ ॥

आत्मानुभव को अंग ॥ दोहा ॥

मुखते कह्यो न जात है, अनुभवको आनंद ॥

---

१ भूख । २ प्यास । ३ बाजे । ४ शक्ति । ५ सावधान । ६ दूसरा । ७ छांछ । ८ मूर्खता । ९ राजा । १० बेहोश ।

सुंदर समुझे आपको, जहाँ न कोई द्वंद[1] ॥ १ ॥
सुंदर जैसे शर्करा[2], गुंगे खाई होइ ॥
मुखते कहि आवै नहीं, काँख पड़ावैसोइ ॥ २ ॥
रवि[3] शशि[4] तारा दीप गण, हीरा होइ अनूप[5] ॥
सुंदर इनके तेजते, दीसै इनको रूप ॥ ३ ॥
त्यों आतमके तेजते, आतम करै प्रकासु ॥
सुंदर इंद्रिय जड़ सबै, कोइ न जानै तासु ॥ ४ ॥
सुंदर साधन सब करैं, कहैं मुक्तिमें जाहिं ॥
आतमके अनुभवं बिना, और मुक्ति कहुँ नाहिं ॥ ५ ॥
दूरि करैं सब वासना[8], आशा रहै न कोइ ॥
वाही सुंदर मुक्तिहै, जीवतही सुख होइ ॥ ६ ॥
श्रवण[9] ज्ञान है तब लगे, शब्द सुनै चित लाइ॥
सुंदर मायाजल परे, पावक[10] ज्यों बुझि जाइ ॥ ७ ॥
मनन ज्ञान नहिं जातहै, ज्यों बिजुरी उद्योत[11] ॥
मायाजल बरषत रहै, सुंदर चमका होत ॥ ८ ॥
निदध्यास है ज्ञान पुनि, बड़वाअनल[12] समान ॥
मायाजल भक्षण करै, सुंदर यह हैरान ॥ ९ ॥
आतम अनुभव ज्ञान है, प्रलय[13] कालकी अंच ॥
भस्म करै सब जारिकै, सुंदर द्वैत प्रपंच ॥ १० ॥
नित्य कहत गुरु आतमा, सो है शब्द प्रमान ॥
जैसे व्यापक व्योम[14] है, सुंदर यह उपमान ॥ ११ ॥
जाकी सत्ता इंद्रियनी, यह कहिये अनुमान ॥
सुंदर अनुभव आतमा, यह प्रतक्ष परमान ॥ १२ ॥

---

१ लड़ाई। २ शक्कर। ३ सूरज। ४ चंद्रमा। ५ चिराग। ६ अद्भुत। ७ ज्ञान। ८ कामना। ९ कान। १० अग्नि। ११ प्रकाश। १२ अग्नि। १३ नाश। १४ आकाश।

सुंदर तत्त्व जुदे जुदे, राख्यो नाम शरीर ॥
ज्यों कदलीके[1] खंभलों, कौन वस्तु[2] है बीर ॥ १३ ॥
है सो सुंदर है सदा, नहिं सो सुंदर नाहिं ॥
नाहिं सो परकट[3] देखिये, है सो लहिये नाहिं ॥ १४ ॥

ज्ञानी को अंग ॥ दोहा ॥

सुंदर ज्ञानी जगतमें, विचरै सदा अलिप्त[4] ॥
ए गुण जाने देहके, भूखे रहैं कि तृप्त ॥ १ ॥
निंदा स्तुति है देहकी, कर्म शुभाशुभ देह ॥
सुंदर ज्ञानी ज्ञानमय, कछुहु न जाने एह ॥ २ ॥
अज्ञ[5] क्रिया सब करत है, अहं बुद्धिको आनि ॥
सुंदर ज्ञानी करत है, अहंकार बिनु जानि ॥ ३ ॥
सुंदर अज्ञ रु तज्ञके, अंतर है बहु भाँति ॥
वाके दिवस अनूप है, वाहि अँधेरी राति ॥ ४ ॥
सुंदर ज्ञान प्रकाशते, धोखा रहै न कोइ ॥
भावै घर भीतर रहै, भावै वनमें होइ ॥ ५ ॥

इति श्रीसुंदरदासकृतौ ज्ञानविलासः समाप्तः ॥

अथ श्रीसुंदराष्टकानि प्रारभ्यते ॥

अथ गुरुमहिमाऽष्टक ॥ १ ॥

दोहा ॥

परमेश्वर अरु परमगुरु, दोनूं एक समान ॥
सुंदर कहत विशेष यह, गुरुते पावै ज्ञान ॥ १ ॥

---

१ केला । २ चीज़ । ३ प्रत्यक्ष । ४ किसीमें लीन नहीं । ५ मूर्ख ।

दादू सतगुरुके चरण, वंदत सुंदरदास ॥
तिनकी महिमा कहत हूं, जिनते ज्ञानप्रकाश ॥ २ ॥

भुजंगप्रयात छंद ॥

प्रकाश स्वरूपं हृदै ब्रह्म ज्ञानं। सदाचार येही निराकार[1] ध्यानं ॥
निरीहं[2] निजानंद जानौ जुगादू। नमो देव दादू नमो देव दादू॥ ३॥
अछेदं अभेदं अनंतं अपारं। अगाँधं[3] अवाधं निराधार सारं ॥
अजीतं[4] अभीतं गहे है समादू। नमो देव दादू नमो देव दादू॥ ४॥
हते काम क्रोधं तजे कालजालं। भगे लोभ मोहं गये सर्व सालं ॥
नहीं द्वंद्व कोऊ डरै है यमादू। नमो देव दादू नमो देव दादू॥ ५॥
गुणातीत देहादि इंद्री जहालं। किये सर्व संहार वैरी तहालं ॥
महा शूरवीरं नहीं को विषादू। नमो देव दादू नमो देव दादू॥ ६॥
मनो काय वाचं तजे हैं विकारं। उदै भान होतं गयो अंधकारं ॥
अयोनी अनायास पाये अनादू। नमो देव दादू नमो देव दादू॥ ७॥
क्षमावंत भारी दयावंत ऐसे। प्रमाणीक आगे भये संत जैसे ॥
गह्यो सत्य सोई लह्यो पंथ आदू। नमो देव दादू नमो देव दादू ॥ ८॥
किये आप आपे बड़े तत्त्व ज्ञाता। बड़ी मौज पाई नहीं पक्षपाता ॥
बड़ी बुद्धि जाकी तज्यो है विवादू। नमो देव दादू नमो देव दादू॥ ९ ॥
पढ़ै याहि नित्यं भुजंगप्रयातं। लहै ज्ञान सोई मिलै ब्रह्म तातं ॥
मनोकामना सिद्ध पावै प्रसादू। नमो देव दादू नमो देव दादू॥ १०॥

दोहा ॥

परमेश्वरमें गुरु बसै, परमेश्वर गुरु माहिं ॥
सुंदर दोऊ परस्पर, भिन्न भाव कछु नाहिं॥ ११ ॥
परमेश्वर व्यापक सकल, घट धारे गुरु देव ॥
सब घटकूं उपदेश दे, सुंदर पावै भेवँ[6] ॥ १२ ॥

इति गुरुमहिमाऽष्टक संपूर्ण ॥ १ ॥

---

१ आकार रहित । २ चेष्टा रहित । ३ अथाह । ४ किसीके जीतवे योग्यनहीं । ५ निडर । ६ भेद ।

अथ गुरुदयाऽष्टक ॥ २ ॥
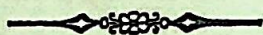
दोहा ॥

अलखं निरंजन वंदिके, गुरु दादूके पाँय ॥
दोऊ कर तब जोर कर, संतनकूं शिरनाय ॥ १ ॥
सुंदर मोहिं दया करी, सतगुरु पकरो हाथ ॥
मातै था अति मोहमें, राता विषया साथ ॥ २ ॥

त्रिभंगी छंद ॥

तौ मैं मत माता विषया राता, बहिया जाता इन बाता ॥
तब गोते खाता डुबता जाता, होती घाता पछताता ॥
उन सब सुखदाता काढयो नाता, आप विधातों गहिलेला ॥
दादूका चेला चेतन भेला, सुंदर मारग बूझेला ॥ ३ ॥
तौ सतगुरु आया पंथ बताया, ज्ञान गहाया मन भाया ॥
सब कृत्रिमें माया यूं समुझाया, अलख लखाया सच पाया ॥
हूं फिरता धाया उन्मुनि लाया, त्रिभुवन राया दत देला ॥
दादूका चेला चेतन भेला, सुंदर मारग बूझेला ॥ ४ ॥
तौ माया छटके कालहि झटके, लेकरि पटके सब गटके ॥
ए चेटकं नटके. जानहिं तँटके, नेक न अटके तब सटके ॥
जी डोलत भटके सतगुरु हँटके, बंधन घटके काटेला ॥
दादूका चेला चेतन भेला, सुंदर मारग बूझेला ॥ ५ ॥
तौ पाई जरिया शिरपर धरिया, विषै उखरिया तन तरिया ॥
जी अब नाहिं डरिया चंचल थिरिया, गुरु उच्चरिया सो करिया ॥

---

१ अदृश्य । २ मस्त । ३ अनुराग । ४ ब्रह्मा । ५ बनावट । ६ जादू।
७ टोटक । ८ रुकना । ९ भागनो । १० निवारण । ११ चपल ।

तब उमग्यो दरिया अमृत झरिया, घट भरिया छूटै रेला ॥
दादूका चेला चेतन भेला, सुंदर मारग बूझेला ॥ ६ ॥
तौ देख्या सीनै माझ नगीना, मारग झीनै पग हीना ॥
अब होइ न दीना दिन दिन छीना, जलमें मीना यूं लीना ॥
जी सो परवीना रसमें भीना, अंतर कीना मन मेला ॥
दादूका चेला चेतन भेला, सुंदर मारग बूझेला ॥ ७ ॥
तौ बैठा छाजं अंतर गाजं, रणमें राजं नहिं भाजं ॥
सो कीया काजं जोड्या साजं, तोड़ी लाजं यह पाजं ॥
उन सब शिरताजं तबहि निवाजं, आनँद आजं आकेला ॥
दादूका चेला चेतन भेला, सुंदर मारग बूझेला ॥ ८ ॥

इति गुरुदयाऽष्टक संपूर्ण ॥ २ ॥

अथ गुरुकृपाऽष्टक ॥ ३ ॥

दोहा ॥

दादू सतगुरुके चरण, अधिक अरुण अरविंद।
दुःखहरण तारण तरण, मुक्त करण सुखकंद ॥
नमस्कार सुंदर करत, निशि दिन वारंवार।
सदा रहौ मम शीश पर, सतगुरु चरण तुम्हार ॥

त्रिभंगी छंद ॥

तौ चरण तुम्हारा प्राण हमारा। तारण हारा भव पोतं ॥
जो गहै विचारा लगै न वारा। विन श्रम पारा सो होतं ॥

---

१ नदी। २ छाती। ३ पतला, बारीक।

सब मिटै अँधारा होइ उजारा, निर्मल सारा सुखराशी ॥
दादू गुरु आया शब्द सुनाया, ब्रह्म बताया अविनाशी[1] ॥ ३ ॥

दोहा ॥

तन मन इंद्रिय वशकरण, ऐसा सतगुरु शूर[2] ॥
शंक न आनै जगत की, हरिसूं सदा हुजूर ॥ ४ ॥

त्रिभंगी छंद ॥

तौ सदा हजूरं अरिदल[3] चूरं, भागै दूरं भकभूरं ॥
तब वाजै तूरं आतम मूरं, जिल मिल नूरं भरपूरं ॥
पुनि यहि अंकूरं नाहीं ऊरं, प्रेम हलूरं बरखासी ॥
दादू गुरु आया शब्द सुनाया, ब्रह्म बताया अविनाशी ॥ ५ ॥

दोहा ॥

द्वंद्वरहित निर्मल सदा, सुख दुख एक समान ॥
भेदाभेद न देखिये, सतगुरु चतुर सयान ॥ ६ ॥

त्रिभंगी छंद ॥

तौ चतुर सयानं भेद न आनं, अविचल थानं जिन जानं ॥
अरु सब भ्रम भानं नाहीं छानं, पद निर्वाणं मन मानं ॥
जो रहै निदानं सो पहिचानं, पूरण ज्ञानं मम आसी ॥
दादू गुरु आया शब्द सुनाया, ब्रह्म बताया अविनाशी ॥ ७ ॥

दोहा ॥

समदृष्टी शीतल सदा, अद्भुत जाकी चाल ॥
ऐसा सतगुरु कीजिये, पलमें करै निहाल ॥ ८ ॥

---

१ जिसका नाश कभी नहो। २ बली। ३ शत्रुकीसैन्य।

त्रिभंगी छंद ॥

तौ करै निहालं अद्भुत चालं, भया निरालं तजि जालं ॥
सो पिवै पियालं अधिक रसालं, ऐसा हालं यह ख्यालं ॥
पुनि वृद्ध न बालं कर्म न कालं, भागै सालं चतुराशी ॥
दादू गुरु आया शब्द सुनाया, ब्रह्म बताया अविनाशी ॥ ९ ॥

दोहा ॥

मनसा वाचा कर्मणा, सबहीसूं निर्दोष[1] ॥
क्षमा दया जिनके हृदय लिये सत्य संतोष[2]॥१०॥

त्रिभंगी छंद ॥

तौ सत संतोषं है निर्दोषं, कितहु न रोषं सब पोषं[3] ॥
पुनि अंतःकोषं निर्मल चोषं[4] नाहीं दोषं गुण सोषं ॥
तिह सम सर जोषं कोइ न होषं जीवन मोषं दरशाशी ॥
दादू गुरु आया शब्द सुनाया ब्रह्म बताया अविनाशी ॥ ११ ॥

दोहा ॥

भानु[5] उदय ज्यूं होत है, रजनी[6] तमको[7] नाश ॥
सुखदायी शीतल सदा, जिनके हृदय प्रकाश ॥ १२ ॥

त्रिभंगी छंद ॥

तौ हृदय प्रकाशं रटते श्वाशं, भया उजासं तम नाशं ॥
पुनि धरणि अकाशं मध्य निवासं कीया वासं अनयासं ॥
सो है निज दासं प्रभुके पासं करत विलासं गुणगासी ॥
दादू गुरु आया शब्द सुनाया ब्रह्म बताया अविनाशी ॥१३॥

दोहा ॥

सतगुरु प्रगटे जगतमें, मानहु पूरणचंद ॥

---

१ सहन शील । २ संतुष्टता । ३ भरण । ४ उत्तम । ५ सूर्य्य ।
६ रात्रि । ७ अंधकार ।

घटमाहीं घटसो पृथक्[1], लिंपत[2] न कोऊ द्वंद्व ॥ १४ ॥

त्रिभंगी छंद ॥

तौ लिपत न द्वंद्वं पूरण चंदं, नित्यानंदं निष्पंदं ॥
सो गुरु गोविंदं एक पसंदं, गावत छंदं सुखकंदं ॥
जे है मतिमंदं बाधे फंदं, वे सब रंदं मुरझासी ॥
दादू गुरु आया शब्द सुनाया ब्रह्म बताया अविनाशी ॥ १५ ॥

दोहा ॥

सतगुरु सुधा[3] समुद्र है, सुधामयी है नैन ॥
नखशिख सुधा स्वरूप है, सुधा सु वर्षै वैन ॥ १६ ॥

त्रिभंगी छंद ॥

तौ जिनकी वानी संतन मानी अमृतखानी सुखदानी ॥
जी नीकरि प्रानी हिरदय आनी बुद्धि थिरानी उन जानी॥
ए अकथं[4] कहानी प्रगट प्रमानी नाहिं न छानी गंगासी ॥
दादू गुरु आया शब्द सुनाया ब्रह्म बताया अविनाशी ॥ १७ ॥

छप्पय छंद ॥

सतगुरु ब्रह्म स्वरूप, रूप धारै जगमाहीं ।
जिनके शब्द अनूप, सुनत संशय सब जाहीं॥
उरमें ज्ञानप्रकाश, होत कछु लगै न बारा ।
अंधकार मिटि जाइ, कोटि सूरज उजियारा ॥
दादू दयालु दुहुँ दिशि प्रगट, झगरि झगरि द्वै पख थकी ॥
कहि सुंदर पंथ प्रसिद्ध यह, सांप्रदाय परब्रह्म की ॥ १८ ॥

इति गुरुकृपाऽष्टक संपूर्ण ॥ ३ ॥

---

१ अलग । २ लीन । ३ अमृत । ४ कहनेमें नहीं आवे ।

अथ भर्मविध्वंशाऽष्टक ॥ ४ ॥

दोहा ॥

सुंदर देख्या शोधिके, सब काहूका ज्ञान ॥
कोई मन माने नहीं, विना निरंजन ध्यान ॥
षटदर्शन हम खोजिया, योगी जंगम शेष ॥
संन्यासी अरु सेवड़ा, पंडित भक्ता भेष ॥ २ ॥

त्रिभंगी छंद ॥

तौ भक्त न भावै दूर बतावै, तीरथ जावै फिर आवै ॥
जो कृत्रिम गावै पूजा लावै, झूठ दृढ़ावै बहँकावै ॥
अरु माला लावै तिलक बनावै, क्यूं पावै गुरु बिन गैलौं ॥
दादूका चेला भर्म पछेला, सुंदर न्यारौं है खेला ॥३॥
तौ योगि गहेलौं देख सहेला, नाहिं लहेलौं वे महेला ॥
वे मांस भखेलौं मद्य पिवेला, भूत जपेलौं पूजेलौं ॥
जो गोरख कहेला सो न करेला, विनहि चहेला बोधेला ॥
दादूका चेला भर्म पछेला, सुंदर न्यारा है खेला ॥४॥
तौ तपी सन्यासी राख लगासी, जटा बढ़ासी भटकासी ॥
जब यौवन जासी धौलीं आसी, तब कर दासी बैठासी ॥
सब अकल गमासी लोक हसासी, माया पासी उरझेला ॥
दादूका चेला भर्म पछेला, सुंदर न्यारा है खेला ॥५॥
तौ जंगम अंगा पड़के लंगा, फिरै कुढंगा सब मंगा ॥
वे डसै अनंगों बड़े भुजंगा, दीप पतंगौं सरवंगा ॥
पुनि नाहीं चंगा देखै रंगा, उनको संगा छाड़ेला ॥
दादूका चेला भर्म पछेला, सुंदर न्यारा है खेला ॥६॥

---

१ खोज । २ बनावट । ३ रास्ता । ४ अलग । ५ पकड़ना । ६ पाना । ७ खाना । ८ शराब । ९ जप । १० पूजताहै । ११ सफेद । १२ कामदेव । १३ फतींगा ।

तौ अर्हंत धर्मी भारी भर्मी, केश उपर्मी बेशर्मी ॥
जी भोजन नर्मी खावै खुर्मी, मन्मथ कर्मी अत उर्मी ॥
अरु दृष्टि सु चर्मी अंतर गर्मी, नाहिं नर्मी गंठेला ॥
दादूका चेला भर्म पछेला, सुंदर न्यारा ह्वै खेला ॥७॥
तौ शेख मुलाना पढ़ै कुराना, पश्चिम जाना उन ठाना ॥
जी भाँग भुलाना बग्ग निछाना, भये दिवानाँ शैताना ॥
अरु जीव दुखाना दर्द न आना, कह्या न माना बरझेला ॥
दादूका चेला भर्म पछेला, सुंदर न्यारा ह्वै खेला ॥८॥
तौ पंडित आए वेद बुलाए, षट् कर्माये त्रपनाये ॥
जी संध्या गाए पढ़ि उरझाए, राना राए ठगि आए ॥
अरु बड़े कहाए गर्व न जाए, राम न पाए थापेला ॥
दादूका चेला भर्म पछेला, सुंदर न्यारा ह्वै खेला ॥९॥
तौ ये मत हेरे सबहिन केरे, गहि गहि घेरे बहुतेरे ॥
तब सतगुरु टेरे कानन मेरे, जाते फेरे आघेरे ॥
औ शूर सवेरे उदय कियेरे, सबै अँधेरे नासेला ॥
दादूका चेला भर्म पछेला, सुंदर न्यारा ह्वै खेला ॥१०॥

छप्पय छंद ॥

सतगुरु मिले सुजानं, श्रवण जिन शब्द सुनाया ॥
शिरपर दीया हाथ, भर्म सब दूर उड़ाया ॥
उपजा आतमज्ञान, ध्यान अभिंअंतर लागा ॥
किया ब्रह्मसूं नेह, जगतसूं तोरचा तागा ॥
तौ राम दत्त जब पाइया, छूटे वाद विवादते ॥
अब सुंदरदास सुखी भया, गुरु दादू परसादते ॥ ११ ॥

॥ इति भ्रमविध्वंसाऽष्टक ६ ४ ॥

---

१ निर्लज्जता । २ कामदेव । ३ लहरी- तरंग । ४ बावला । ५ पीड़ा । ६ छः ७ अभिमान । ८ चतुर । ९ अंतःकरण । १० कृपा ।

अथ गुरुज्ञानोपदेशाऽष्टक ॥ ५ ॥

दोहा ॥

दादू सतगुरु शीशपर, उरमें जिनको नाम ॥
सुंदर आए शरण तकि, तिन पायो निज धाम ॥ १ ॥
बहे जात संसारमें, सतगुरु पकडे केश ॥
सुंदर काढ़े डूबते, दे अद्भुत उपदेश ॥ २ ॥

हरिगीत छंद ॥

उपदेश श्रवण सुनाइ अद्भुत, हृदय ज्ञान प्रकाशियो ॥
चिरकालको अज्ञान पूरण, सकल भ्रम तम नाशियो ॥
आनंददायक पुनि सहायक, करत जन निःकाम है ॥
दादू दयालु प्रसिद्ध सतगुरु, ताहि मोर प्रणाम है ॥ ३ ॥

दोहा ॥

सुंदर सतगुरु हाथमें, करड़ी लई कमान ॥
माऱ्या खैंचिक शीश कर, वचन लगाये बान ॥ ४ ॥

हरिगीत छंद ॥

जिन वचन बाण लगाय उरमें, मृतक फेरि जिवाइया ॥
मुखद्वार होइ उचार करि निज, सार अमृत पाइया ॥
अत्यंत करि आनंदमें हम, रहत आठौ याम है ॥
दादू दयालु प्रसिद्ध सतगुरु, ताहि मोर प्रणाम है ॥ ५ ॥

दोहा ॥

सुंदर सतगुरु जगतमें, परउपकारी होइ ॥
नीच ऊंच सब उद्धरै, शरण जु आवै कोइ ॥ ६ ॥

हरिगीत छंद ॥

जो आइ शरणहि होइ प्रापत, ताप तिन तनको हरै ॥
पुनि फेर बदले घाट उनको जीवते ब्रह्महि करै ॥
कछु ऊंच नीच न दृष्टि जिनके सकलको विश्राम है ॥
दादू दयालु प्रसिद्ध सतगुरु ताहि मोर प्रणाम है ॥ ७ ॥

दोहा ॥

सुंदर सतगुरु सहजमें, किये सु पहिली पार ॥
और उपाय न तरिसकै, भवसागर संसार ॥ ८ ॥

हरिगीत छंद ॥

संसारसागर महा दुस्तर, ताहि कहु अब क्यूं तरै ॥
जो कोटि साधन करै कोऊ, वृथाही पचि पचि मरै ॥
जिन बिन परिश्रम पार कीये, प्रकट सुखके धाम है ॥
दादू दयालु प्रसिद्ध सतगुरु, ताहि मोर प्रणाम है ॥ ९ ॥

दोहा ॥

सुंदर सतगुरु यूं कहै, याही निश्चय आन ॥
जो कछु सुनिये देखिये, सर्व स्वप्न करि जान ॥ १० ॥

हरिगीत छंद ॥

यह स्वप्न तुल्य दिखाइ दीयो, स्वर्ग नरक उभय कहे ॥
सुख दुःख हर्ष विषाद पुनि, मानापमानहि सब गहै ॥
जिन जाति कुल अरु वरण आश्रम, कहत मिथ्या नाम है ॥
दादू दयालु प्रसिद्ध सतगुरु, ताहि मोर प्रणाम है ॥ ११ ॥

दोहा ॥

सुंदर सतगुरु यूं कहै, सत्य कछू नहिं रंच ॥
मिथ्या माया विस्तरी, जो कछु सकलप्रपंच ॥ १२ ॥

हरिगीत छंद ॥

उपज्यो प्रपंच अनादिको यह, महामाया विस्तरी ॥
नानात्व ह्वै करि जगत भास्यो, बुद्धि सबहिनकी हरी ॥
जिन भ्रम मिटाइ दिखाइ दीनो, सर्वव्यापक राम है ॥
दादू दयालु प्रसिद्ध सतगुरु, ताहि मोर प्रणाम है ॥ १३ ॥

दोहा ॥

सुंदर सतगुरु यूं कहै, भ्रमते भासै और ॥
सीपिमांहि रूपो दृशै, सर्प रज्जुकी ठौर ॥ १४ ॥

हरिगीत छंद ॥

रज्जूमहँ ज्यूं सर्प भासै, सीपिमें रूपो यथा ॥
मृगतृषा जल मति देखही सो, विश्व मिथ्या है तथा ॥
जिन लह्यो ब्रह्म अखंड पद, अद्वैत सबही ठाम है ॥
दादू दयालु प्रसिद्ध सतगुरु, ताहि मोर प्रणाम है ॥ १५ ॥

दोहा ॥

सुंदर सतगुरु यूं कहै, मुक्ति सहजही होइ ॥
या अष्टकते भ्रम मिटै, नित्य पढ़ै जो कोइ ॥ १६ ॥

हरिगीत छंद ॥

जोपढ़ै नित्यहि ज्ञानअष्टक, मुक्त होइ सु सहजही ॥
संशय न कोऊ रहै ताको, दास सुंदर यूं कही ॥
जिन ह्वै कृपालु अनेक तारे, सकल विधि उद्दाम है ॥
दादू दयालु प्रसिद्ध सतगुरु, ताहि मोर प्रणाम है ॥ १७ ॥

दोहा ॥

सुंदर अष्टक श्रेष्ठ यह, तुम जनि जानै आन ॥
अष्टक याहि कहै सुनै, ताकूं उपजै ज्ञान ॥ १८ ॥

इति गुरुज्ञानोपदेशाष्टक संपूर्ण ॥ ५ ॥

॥ अथ पीरमुर्शिदाऽष्टक ॥ ६ ॥

दोहा ॥

सुंदर खोजत खोजते, पाया मुर्शिद पीर ॥
क़दम जाइ उसके गहे, देखा अति गंभीर ॥ १ ॥

शंकर (चावर) छंद ॥

अवली कदम उस्तादके मैं, गहे दोऊ दस्त ॥
उन मिहिर मुझपर करी ऐसी, ह्वै गया मैं मस्त ॥ २ ॥
जब सखुन करि मुझकूं कहा, तू बंदगी कर खूब ॥
इस राह सीधा जायगा तब, मिलैगा महबूब ॥ ३ ॥
तब उठि अरज उस्तादसूं मैं, करी ऐसी रौंस ॥
तुम मिहिर मुझपर करौ मुर्शिद, मैं तुम्हारी कौंस ॥ ४ ॥
वह बंदगी किस रौंस करिये? मुझे देहु बताइ ॥
वह राह सीधा कौन है ? जिसराह बंदा जाइ ॥ ५ ॥
तब कहै पीर मुरीदसूं, तू हिरस राह गुज़ार ॥
यह बंदगी तब होयगी, इस नफ्सकूं गहि मार ॥ ६ ॥
भी दूइ दिलते दूर करिये, और कछु नाहिं चाह ॥
यह राह तेरा तुझी भीतर, चल्या तूही जाह ॥ ७ ॥
तब फिर कहा उस्तादसूं यह राह, है बारीक ॥
क्यूं चलै बंदा बिगर देखे सबैसूं फारीक? ॥ ८ ॥
अब मिहिर करि उस राहकूं, दिखलाइ दीजे पीर ॥
मुझ तलब है उस राहकी ज्यूं पिवै प्यासा नीर ॥ ९ ॥
तब कहै पीर मुरीदसेती, बंदगी करि येह ॥

यह राह पहुँचै चुस्तदम कर, नाम उसका लेह ॥ १० ॥
तू नाम उसका लेयगा तब, जायगा उस ठौर ॥
जहँ अरस ऊपर आप बैठा, दूसरा नहिं और ॥ ११ ॥
तब कहै तालब सुनौ मुर्शिद, जहाँ बैठा आप ॥
वह होइ जैसा कहौ तैसा, जिसे माइ न बाप ॥ १२ ॥
बैठा उठा कहिये तिसेहि, वजूद जिसका होइ॥
बेचून उसकूं कहत हैं अरु, बेनमूनें सोइ ॥ १३ ॥
जब कहा तालब सखुन ऐसा, पीर पकरी मौन॥
को कहैगा न कहा न किनहूं, अब कहै कहु कौन॥ १४ ॥
तब देखि ओर मुरीदकी उन, पीर मूंदे नैन॥
जो खूब तालब होयगा, तौ समुझि लेगा सैन॥ १५ ॥
हैरान है हैरान है हैरान, निकट न दूर ॥
भी सुखन क्यूं करि कहै तिसकूं, सकल है भरपूर॥ १६ ॥
संवाद पीरमुरीदका यह, भेद पावै कोइ ॥
यूं कहै सुंदर सुनै सुंदर, वही सुंदर होइ ॥ १७ ॥

इति पीरमुरीदाऽष्टक संपूर्ण ॥ ६ ॥

अथ रामजी अष्टक ॥ ७ ॥

मोहनी छंद ॥

आदि तुमही हुते, और नहिं कोइ जी ।
अकह अति अगह गति, वरण नहिं होइ जी ॥
रूप नहिं रेख नहिं, श्वेत नहिं श्याम जी ।
तू सदा एकरस, रामजी रामजी ॥ १ ॥

प्रथमही आपते मूल माया करी। बहुरि सो त्रिविध ह्वै त्रिगुणमय विस्तरी॥
पंचहू तत्त्वते रूप अरु नाम जी।तू सदा एकरस, रामजी रामजी ॥ २ ॥
विधि रजोगुण लिये जगत उत्पन्न करै।विष्णु सतगुण लिये पालना उर धरै
रुद्र तमगुण लिये संहरै धाम जी ।तू सदा एकरस रामजी रामजी ॥ ३ ॥
इंद्र आज्ञा लिये करत नहिं और जी । मेघ वर्षा करै सर्वही ठौर जी ॥
शूर शशि फिरत है, आठहू याम जी।तू सदा एकरस रामजी रामजी ॥४॥
देव अरु दानवा यक्ष ऋष सर्व जी । साध अरु सिद्ध मुनि होत निर्गर्व जी ॥
शेषहू सहसमुख भजत निःकामजी ।तू सदा एकरस रामजी रामजी ॥५॥
जलचरा थलचरा नभचरा जंत जी । चारिहू खानिके जीव अगनंत जी॥
सर्व उपजै खपै पुरुष अरु बामजी । तू सदा एकरस रामजी रामजी ॥६॥
भ्रमत संसार कितहू नहीं दोर जी । तीनहू लोकमें कालको शोर जी ॥
मनुष तनुयह बड़े भाग्यते पामजी । तू सदा एकरस रामजी रामजी७॥
पूर्व दशहूदिशा सर्वमें आप जी । स्तुतीको करि सकै पुण्य नहिं पाप जी ॥
दास सुंदर कहै, देहु विश्राम जी । तू सदा एकरस रामजी रामजी ॥८॥

इति रामजी अष्टक ॥ ७ ॥

अथ नामाऽष्टक ॥ ८ ॥

मोहनी छंद ॥

आदि तू अंत तू मध्य तू व्योमवत् । वायु तू तेज तू नीर तू भूमिवत्॥
पंचहू तत्त्वते देह तैंही करे । हे हरे हे हरे हे हरे हे हरे ॥ १॥
चारिहू खानिके जीव तैंही सृजे । योनिही योनिके द्वार आई व्रजे॥
ते सबै दुःखमें जे तुम्हैं वीसरे । ईश्वरे ईश्वरे ईश्वरे ईश्वरे ॥ २ ॥
जो कछू ऊपजै आधि औ व्याधवे । दूर तूही करै सर्वही बाधवे ॥
वैद्य तू औषधी सिद्ध तू साधवे । माधवे माधवे माधवे माधवे ॥ ३॥

ब्रह्म तू विष्णु तू रुद्र तू वेष जी। इंद्र तू चंद्र तू सूर तू शेष जी॥
धर्म तू कर्म तू काल तू देशवे। केशवे केशवे केशवे केशवे॥४॥
देवमें दैत्यमें दक्षमें यक्षमें। योगमें यज्ञमें ध्यानमें लक्षमें॥
तीनहू लोकमें एक तूंही भजै। हे अजै हे अजै हे अजै हे अजै॥५
रावमें रंकमें शाहमें चोरमें। कीरमें काकमें हंसमें मोरमें॥
सिंहमें श्यालमें मच्छमें कच्छये। अक्षये अक्षये अक्षये अक्षये॥६॥
बुद्धिमें चित्तमें पिंडमें प्राणमें। श्रोत्रमें वैनमें नैनमें घ्राणमें॥
हाथमें पाँवमें शीरमें सोहने। मोहने मोहने मोहने मोहने॥७॥
जन्मते मृत्युते पुण्यते पापते। हर्षते शोकते शीतते तापते॥
रागते द्वेषते द्वंद्वते है परे। सुंदरे सुंदरे सुंदरे सुंदरे॥८॥

इति नामाऽष्टक संपूर्ण॥ ८॥

अथ आत्मअचलाऽष्टक॥ ९॥

कुंडलिया छंद॥

पानी चड़स सदा चलै, चलै लाव अरु बैल॥
खांभी चलता देखिये, कूप चलै नहिं गैल॥
कूप चलै नाहिं गैल, कहैं सब कूवो चालै॥
ज्यूं फिरतो नर कहै, फिरै आकाश पतालै॥
सुंदर आतम अचल, देह यह चलै न छानी॥
कूप ठौरको ठौर, चलत हैं चड़स रु पानी॥ १॥
सृष्टि सवाई चलत है, चलै न कबहूं राह॥
अपने अपने कामकूं, चलैं चोर अरु शाह॥
चलैं चोर अरु शाह, कहैं सब मारग चालै॥
जल हालत लगि पवन, कहैं प्रतिबिंबहि हालै॥

सुंदर आतम अचल, देह आवै अरु जाई ॥
राह ठौरको ठौर, चलत है सृष्टि सवाई॥ २ ॥
तेल जरै बाती जरै, दीपक जरै न कोइ ॥
दीपक जरता सब कहैं, भारी अचरज होइ ॥
भारी अचरज होइ, जरै लकरी अरु घासा॥
अग्नि जरत सब कहै, होइ घर बड़ा तमासा ॥
सुंदर आतम अजर, जरै यह देह विजाती॥
दीपक जरै न कोइ, जरत हैं तेल रु बाती॥ ३ ॥
बादल दौरे जात है, दौरत दीसै चंद ॥
देह संगते आतमा, चलत कहै मतिमंद ॥
चलत कहै मतिमंद,आतमा अचल सदाही॥
हलत चलत यह देह, थापिले आतम मांही॥
सुंदर चंचल बुद्धि, समुझि ताते नहिं बौरे॥
दौरत दीसै चंद, जात हैं बादल दौरे ॥ ४ ॥
गंगा बहती कहत हैं, गंगा वाही ठौर ॥
पानी बहि बहि जात है, कहैं औरकी और ॥
कहैं औरकी और, परतहै देखत खाड़ी ॥
गाड़ी उखली कहै, कहै चलतीको गाड़ी ॥
सुंदर आतम अचल, देह हल चल है भंगा॥
पानी बहि बहि जात, बहै कबहूं नहिं गंगा॥ ५ ॥
कोलू चलता सब कहैं, समुझतनहिं घटमाहिं ॥
पाट लाट मकरी चलै, बैल चले पुनि जाहिं॥
बैल चले पुनि जाहिं, चलत है हाँकनहारो॥
पैली गालत चलै, चलत सब ठाठ विचारो ॥
सुंदर आतम अचल, देह चंचल है मोलू ॥
समुझतनहिं घटमाहिं, कहत हैं चालत कोलू ॥६॥

बिन जाने नर कहत हैं, चल्यो जाय बाज़ार ॥
लोक चले सब जात हैं, हाट न हिले लगार ॥
हाट न हिले लगार, विचार कछू नहिं लहते ॥
नदी तीरपै वृक्ष, कहैं पानीमें बहते ॥
सुंदर आतम अचल, देह यह चलै दिवाने ॥
चल्यो जाय बाज़ार, कहत हैं नर बिनु जाने ॥ ७ ॥
सब कोऊ ऐसे कहैं, काटत हैं हम काल ॥
काल नाश सबको करै, वृद्ध तरुण अरु बाल ॥
वृद्ध तरुण अरु बाल, साल सबहिनको भारी ॥
देह आपकूं मानि, कहत हैं नर अरु नारी ॥
सुंदर आतम अमर, देह मर है घर खोऊ ॥
काटत हैं हम काल, कहत ऐसे सब कोऊ ॥ ८ ॥

इति आत्मअचलाऽष्टक संपूर्ण ॥ ९ ॥

अथ ब्रह्माऽष्टक ॥ १० ॥

भुजंगप्रयात छंद ॥

अखंडं चिदानंद देवाधिदेवं, मुनींद्रादि रुद्रादि इंद्रादि सेवं ॥
मुनींद्रादि इंद्रादि चंद्रादि मित्रं, नमस्ते नमस्ते नमस्ते पवित्रं॥१॥
धरात्वं जलाग्नी मरुत्वं नभस्त्वं, घटस्त्वं पटस्त्वं अणुत्वं महत्वं ॥
मनस्त्वं वचस्त्वं दृशस्त्वं श्रुतस्त्वं, नमस्ते नमस्ते नमस्ते समस्त्वं॥२॥
अडोलं अतोलं अमोलं अमानं, अदेहं अछेहं अनेहं निदानं ॥
अजापं अथापं अपापं अतापं, नमस्ते नमस्ते नमस्ते अमापं॥३॥
न ग्रामं न धामं न शीतं न उष्णं, न रक्तं न पीतं न श्वेतं न कृष्णं॥
न शेषं अशेषं न रेखं न रूपं, नमस्ते नमस्ते नमस्ते अनूपं॥४॥

न छाया न माया न देशो न कालो, न जाग्रं न स्वप्नं न वृद्धो न बालो॥
न ह्रस्वं न दीर्घं न रम्यं अरम्यं, नमस्ते नमस्ते नमस्ते अगम्यं॥५॥
न बंधं न मुक्तं न मौनं न वक्तं, न धूम्रं न तेजो न यामी न नक्तं॥
न युक्तं अयुक्तं न रक्तं विरक्तं, नमस्ते नमस्ते नमस्ते अशक्तं॥६॥
न रुष्टं न मुष्टं न इष्टं अनिष्टं, न ज्येष्ठं कनिष्ठं न मिष्टं अमिष्टं ॥
न अग्रं न पृष्ठं न तुल्यं न गृष्टं, नमस्ते नमस्ते नमस्ते अधिष्ठं॥७॥
न वक्रं न घ्राणं न कर्णं न अक्षं, न हस्तं न पादं न शीशं न लक्षं॥
कथं सुंदरं सुंदरं नाम ध्येयं, नमस्ते नमस्ते नमस्ते प्रमेयं॥८॥

इति ब्रह्माऽष्टक संपूर्ण ॥ १० ॥

अथ पंजाबीभाषाअष्टक ॥ ११ ॥

चौपाई छंद ॥

बहु दिलदा मालिक दिलदी जाणैं, दिलमें बैठा देखै ॥
हुण तिसनौं कोई क्यूं करि पावै, जिसदै रूप न रेखै ॥
वै गौस कुतब पैगंबर थक्के, पीर अवलिया सेखै ॥
भी सुंदर कहि न सकै कोई, तिसनौ जिसदि साफि अलेखै१॥
बहु खोजनहारा तिसनौं पूछै, जे बाहिरनौ दौडै ॥
वै कोई जाइ गुफामो बैठै, केई भाजत चौडै ॥
भी दिछे सौक हजारानि दिछे, दिछे दिछे लख्यु करोडे ॥
कहि सुंदर खोजु बतावै प्रभुदा, वै केइ जगमो थोडे ॥ २ ॥
भी उसदा खोजु करैं बहुतेरे, खोजु तिणादै बोलै ॥
बहु भुल्लै नौ मुल्ला समुझावै, सोभी भुल्ला डोलै ॥
वै जिथैं किथैं फिरैं विचारा, फिरि फिरि छिल्लकुं छोलै ॥

कहि सुंदर अपना बंधनुं कापै, सोई बंधनु खोलै ॥ ३ ॥
भी खोजे यती तपी संन्यासी, सलोदि छे बड रोगी ॥
बहु उशदा खोजु न पाया किही, दिछे ऋषि मुनि योगी ॥
वै बहुतै फिरैं उदासी जगमो, वहुते फिरैं वियोगी ॥
कहि सुंदर केई बिरले दिठे, अमृत रसदे भोगी ॥ ४ ॥
बहु खोजी बिन खोजु न निकलै, खोजु न हथ्यौ आवे ॥
पंखिदा खोजु मीनदा मारगु, तिसनौं क्यूं करि पावै ॥
है अति बारीकु खोजु न दरशै, नदारि किधौं ठहरावै ॥
कहि सुंदर बहुत होइ जब नन्हां, नन्हें नों दरशावै ॥ ५ ॥
भी खोजत खोजत सभु जगु हव्या, खोज किथैं नहिं पाया ॥
तुं जिसनौ खोजै खोज तूझिमौं, सतगुरु खोज बताया ॥
तैं अपुना आपु सही जब कीता, खोज इथांही आया ॥
जब सुंदर जागि परचा सुपनैं थौं, सभु संदेह गमाया ॥ ६ ॥
भी जिसदा आदि अंतु नहिं आवे, मध्यहु तिसदा नाहीं ॥
बहु बाहिर भितरु सर्व निरंतरु, अगम अगोचर माहीं ॥
वह जागि न सोवै खाइ न भुख्या, जिसदै धूप्पु न छाहीं ॥
कहि सुंदर आपै आप अखंडित, शब्द न पहुँचै जाहीं ॥ ७ ॥
वै ब्रह्मा विष्णु महेश प्रलयमों, जिसदिखिसै न रूहीं ॥
भी तिसदा कोई पारु न पावै, शेष सहस फणु मूहीं ॥
भी यहु नाहिं यहु नाहिं यहु नाहिं होवै, इसदै परै स तूही ॥
वह अवशेष रहै जो सुंदर, सो तूंही सो हूंही ॥ ८ ॥

इति पंजाबीभाषाऽष्टक ॥ ११ ॥

अथ ज्ञान झूलनाऽष्टक ॥ १२ ॥

उस्तादके क़दम शिर धरौ, अब झूलना खूब बखानता हूं ॥
अरवाहमैं आप विराजता है, वह जानका जान है जानता हूं॥
उसहीके झुलाये डोलता हूं, दिल खोलता बोलता मानता हूं
उसहीके दिखाये देखता हूं, अरु सुंदर यों पहिंचानताहूं॥१॥
कोइ नेरे कहै कोई दूरे कहै, वह आपुही नेरे न दूर है रे ॥
दिल भीतर बाहर एकसा है, आसमान ज्यूं वो भरपूर है रे ॥
अनुभव बिना नहिं जानि सकै, निरसंध निरंतर नूर है रे ॥
उपमा उसकी अब कौन कहै, नहिं सुंदर चंदर सूर है रे॥२॥
कोइ वार कहै कोइ पार कहै, उसका कहूं वार न पार है रे ॥
कोइ मूल कहै कोइ डाल कहै, उसके कहूं मूल न डाल है रे ॥
कोइ शून्य कहै कोई थूल कहै, वह शून्य हू थूलतैं न्यार है रे ॥
कोइ एक कहै कोइ दोइ कहै, नहिं सुंदर द्वंद्व लगार है रे॥३॥
कोइ योग कहै कोइ याग कहै, कोइ त्याग वेराग बतावता है ॥
कोइ नाम रटै कोइ ध्यान जटै, कोइ खोजतही थकी जावताहै ॥
कोइ औरही और उपाव करै, कोइ ज्ञानगिरा करि गावता है ॥
वह सुंदर सुंदर सुंदर है, कोइ सुंदर होइ सु पावताहै॥४॥
नहिं बैठताहै नहिं ऊठताहै, नहिं आवनेका नहीं जावनेका ॥
नहिं बोलताहै है न अबोलता है, नहिं देखता है न दिखावनेका॥
नहिं सूंघता है न असूंघता है, नहिं सूनता है न सुनावनेका ॥
नहिं सोवता है नहिं जागता है, नाहिं सुंदर सखुन पावनेका॥५॥
कहु कौन कहै कहु कौन सुनै, वह कहेन सुननतैं भिन्न है रे ॥
कहुं ठौर नहिं कहुं ठाम नहिं, कहुँ गाँव नहिं तिन किन्न है रे॥
तहां शीत नहिं तहां घाम नहिं, तहां धाम न राति न दिन्न है रे॥

तहां रूप नाहिं तहां रेख नहिं, तहां सुंदर कछु न चिह्न है रे६ ॥
नहिं रोम है रे नहिं नैन है रे, नहिं मुख है रे नहिं वैन है रे ॥
नहिं ऐन है रे नाहिं गैन है रे, नहिं सैन है रे न असैन है रे ॥
नहिं पेट है रे नाहिं पीठ है रे, नाहिं कडुवा है नाहिं मीठ है रे ॥
नहिं दुस्मन है नाहिं मित्र है रे, नहिं सुंदर दीठ अदीठ है रै ७॥
नाहिं शीश है रे नहिं पाँव है रे, नाहिं रंक है रे नहिं राव है रे ॥
नहिं खावनै पीवनै चाव है रे, नाहिं हार नहिं जीत नहिं दाँव है रे ॥
नाहिं नीर है रे नाहिं नाव है रे, नाहिं खाक है रे नाहिं वायु है रे॥
नाहिं मोति है रें नहिं आब है रे, नहिं सुंदर भाव अभाव है रे८॥

इति श्रीज्ञानझूलनाऽष्टक संपूर्ण॥ १२॥

अथ अजबख्यालाऽष्टक ॥ १३ ॥

दोहा छंद ॥

जिसदा सिरजनहारको, मुरशिदको ताजीम ॥
सुंदर तालिब करत है, बंदोंको तसलीम १ ॥
सुंदर इस औजूदमें, अजब चीज है वाद॥
तब पावै इस भेदको, खूब मिलै उस्ताद २॥

गीतक छंद ॥

उस्ताद शिरपर चुश्त दम, करम कर इश्क अल्लाह लाइये ॥
गुजरान इसकी बंदीसों, इश्क बिन कां पाइये ॥
यह दिल फकीरी दस्तगीरी दस्त गुंज सिना लहै ॥
यों कहत सुंदर कञ्ज़ द्वंद्वर, अजब ऐसा ख्याल है ॥३॥

दोहा ॥

सुंदर रत्ता एकसों, दिलमों दूजा नेश ॥
इश्क मुहब्बति वंदगी, सो कहिये दुरवेश ॥ ४ ॥

गीतक छंद ॥

दुरवेश दरकी खवर जानै दूर दिलकी काफिरि ॥
दरदवंद खिरा दुरूनै, उसी बिच मुसाफिरि ॥
है बेतमा इस मर्दुमीसैं, पाक दिलदर हाल है ॥
यों कहत सुंदर कब्ज द्वंद्वर अजब ऐसा ख्याल है ॥

दोहा ॥

सुंदर सीने वीच में, बंदेका चौगान ॥
पहुँचावैं उस हालकों, इहै गूइ मैदान ॥६ ॥

गीतक छंद ॥

कम दस्त इस मैदानमें, चौगान खेलै खूब है ॥
असवार ऐसा तुरी वैसा प्यार उस महबूब है॥
इस गूइको लै जायकें, पहुँचाइ दे उस हाल है ॥
यों कहत सुंदर कब्ज द्वंद्वर अजब ऐसा ख्याल है ॥७॥

दोहा छंद ॥

सुंदर उसका नांव ले, एक उसीकी चाह ॥
रब्बु रहीम करीम वह, कहिये हही अल्लाह ॥ ८ ॥

त्रिभंगी छंद ॥

अल्लाह खुदाइ करीम कादिर, पाक परवरादिगार है ॥
सुबहान तू सत्तार साहिब, साफ सिरजनहार है ॥
मुश्ताक तेरे नांव ऊपर, खूब खूबां लाल है ॥
यों कहत सुंदर कब्ज द्वंद्वर, अजब ऐसा ख्याल है ॥ ९ ॥

दोहा छंद ॥

सुंदर इस औजूदमों, इश्क लगाई झूक ॥
आशिक ठंढा होइ तब, आइ मिलै माशूक ॥ १० ॥

त्रिभंगी छंद ॥

माशूक मौला हक्कताला, तूं जिमी असमानमों ॥
है आब अरु इस बाद म्यांनैं खबरदार जहानमों ॥
मालिक मुल्क मालूम जिसको दुरस दिल हरसाल है॥
यों कहत सुंदर कब्ज द्वंद्वर, अजब ऐसा ख्याल है ॥ ११ ॥

दोहा छंद ॥

सुंदर जो गाफिल हुवा, तो वह सांई दूर ॥
जो बंदा हाजर हुवा, तौ हाज़र उ हजुर ॥ १२ ॥

गीतक छंद ॥

हाजजरां हुजुर गुसईहां, गाफिलैंकौं दूर है ॥
निरसंध इकरस आप वोही, तालिबां भरपूर है ॥
बारीकसों बारीक कहिये बड़ो बड़ा ओ बिशाल है ॥
यों कहत सुंदर कब्ज द्वंद्वर, अजब ऐसा ख्याल है ॥ १३ ॥

दोहा छंद ॥

सुंदर सांई हक्क है, जहाँ तहाँ भरपूर ॥
एक उसीके नूरसों, दीसैं सारे नूर ॥ १४ ॥

गीतक छंद ॥

उस नूरते सब नूर दीसैं, तेजते सब तेज हैं।
उस ज्योतिसों सब ज्योति चमकैं, है जसों सब हैज हैं ॥
अफताब अरु महताब तारे, हुकम उसके चाल है।
यों कहत सुंदर कब्ज द्वंद्वर, अजब ऐसा ख्याल है॥ १५॥

दोहा छंद ॥

सुंदर आलिम इलम सब, खूब पढ्या आखून ॥
परि उसको क्यूं कहि सकै, जो कहिये बेचून ॥ १६ ॥

गीतक छंद ॥

बेचून उसको कहत वुजर, कबी निमूरत उसे कहैं ॥
अरु औलिया अंबिया वै भी, गौस कुतब खड़े रहैं ॥
को कहि सकै न कह्या न किनहू, सखुन परे निराल है ॥
यौं कहत सुंदर कब्ज द्वंद्वर, अजब ऐसा ख्याल है ॥ १७ ॥

दोहा छंद ॥

ख्याल अजब उस एकका, सुंदर कह्या न जाइ ॥
सखुन तहाँ पहुँचै नहीं, थक्या उरैंही आइ ॥ १८ ॥

इति श्री अजबख्यालाऽष्टक संपूर्ण ॥ १३ ॥

इति

पुस्तक मिलनेका ठिकाना.
खेमराज श्रीकृष्णदास,
"श्रीवेङ्कटेश्वर" छापाखाना.
बंबई.